Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

1269

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्योदय

हिन्द[illegible]प्ताहिक

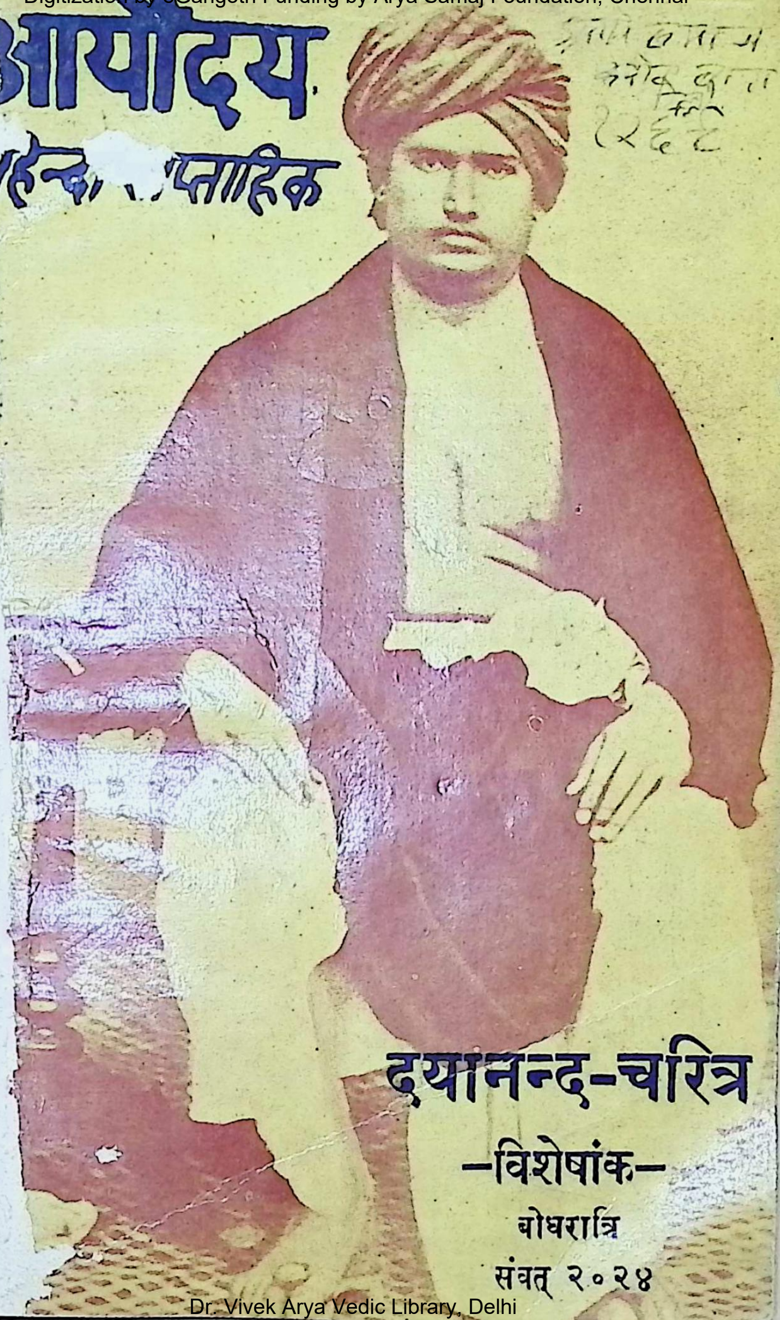

दयानन्द-चरित्र

—विशेषांक—

बोधरात्रि

संवत् २०२४

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सादर प्रणाम !

मेरा सादर प्रणाम ! उस महान् गुरु दयानन्द को जिस की दृष्टि ने भारत के आध्यात्मिक इतिहास में सत्य और एकता को देखा और जिस के मन ने भारतीय जीवन के सभी अंगों को प्रदीप्त कर दिया।

जिस गुरु का उद्देश्य भारतवर्ष को ज्ञान और प्राचीन ऐतिहासिक तत्व के ज्ञान से युक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति में लाना था, उसे मेरा बारंबार प्रणाम हो।

मैं आधुनिक भारत के मार्गदर्शक उस दयानन्द को आदरपूर्वक श्रद्धांजलि देता हूं जिस ने देश की पतितावस्था में भी हिन्दुओं को प्रभु की भक्ति और मानव समाज की सेवा के सच्चे मार्ग का दिग्दर्शन कराया।

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"ओ३म्"

"आर्योदय" हिन्दी साप्ताहिक

का

दयानन्द-चरित्र

(विशेषांक)

स्व० देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय

१४ जनवरी १९६८

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कार्यालय

"आर्योदय" हिन्दी साप्ताहिक

१५ हनुमान रोड नई दिल्ली-१

सम्पादक— रघुवीर सिंह शास्त्री "संसद सदस्य"

भारतेन्द्र नाथ "साहित्यालंकार"

मूल्य—एक रुपया पचास पैसे

वार्षिक मूल्य १२)
विदेश में १ पौंड
साधारण अंक ३० पैसे
यह अंक १.५० पैसे

रविवार
१४ जनवरी १९६८

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए मुद्रक प्रकाशक भारतेन्द्र नाथ साहित्यालंकार द्वारा सम्राट् प्रेस दिल्ली में मुद्रित।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सम्पादकीय

अनुपमेय जीवन

महर्षि दयानन्द विश्व के उन महापुरुषों में से एक थे जिन्होंने संतप्त मानवता को नया जीवन देने के लिए मार्ग दर्शन किया। धरती पर छाए अन्धकार को दूर करने के लिए जो अपनी पूर्ण शक्ति से लगे रहे और अपने प्राण देकर भी जिन्होंने असत्य के सम्मुख सिर नहीं झुकाया।

ऐसे महान् मानव का जीवन सभी को नयी प्रेरणा और उत्साह भावना प्रदान कर सकता है। अतः हम प्रसिद्ध लेखक स्व० देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय का लिखा दयानन्द—चरित्र पाठकों को भेंट कर रहे हैं।

श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय ने बंगाली होते हुए भी महर्षि के जीवन सम्बन्धी जो खोजें की हैं वे स्वयं में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। उनकी लेखनी श्रद्धा भावना से ओतप्रोत है। सरस और प्रभावपूर्ण शैली में लिखित यह जीवन चरित्र आज भी अनुपमेय है।

हमें विश्वास है कि इसे पढ़कर पाठक महर्षि के महान् गुण भंडार जीवन से नयी ज्योति प्राप्त कर उनके मार्ग पर चलने की प्रेरणा पा सकेंगे—

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्रद्धांजलियाँ

—महर्षि दयानन्द हिन्दुस्तान के आधुनिक ऋषियों में सुधारकों और श्रेष्ठ पुरुषों में एक थे। उनके जीवन का प्रभाव हिन्दुस्तान पर बहुत अधिक पड़ा है। उनका ब्रह्मचर्य मेरे लिये स्पर्द्धा का विषय है।

—महात्मा गान्धी

—ऋषि दयानन्द ने उन द्वारों की कुञ्जी प्राप्त की है जो युगों से बन्द थे और उसने पटे हुये झरनों का मुख खोल दिया।

—योगी अरविन्द घोष

—मेरा सादर प्रणाम हो उस महान् गुरु दयानन्द को जिसने भारतीय जीवन के सब अङ्गों को प्रदीप्त कर दिया।

—विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर

—स्वामी दयानन्द सरस्वती उन महापुरुषों में से एक थे जिन्होंने आधुनिक भारत का निर्माण किया।

—नेता जी सुभाषचन्द्र बोस

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पहला अध्याय

जन्म,-जन्मकाल,-मातापिता -बाल्यशिक्षा,-मूर्त्तिपूजा में अविश्वास, -मृत्युचिन्ता,-विषयवितृष्णा,-गृहनिष्क्रमण

महर्षि दयानन्द सरस्वती संन्यासी थे। संन्यासी कभी अपने आश्रम की नीति का अतिक्रमण करके नहीं चलता। इसलिये महर्षि आत्मपरिचय के सम्बन्ध में अपना नामादि न बतला कर निर्वाक् रहते थे। सुतराम् उनके किंवा उनके माता-पिता के नामादि के विषय में कुछ भी जानने की सम्भावना नहीं है। दयानन्द का पहला नाम मूलशङ्कर था।

दयानन्द की जन्मभूमि मोरवी नगर था। यह मोरवी राज्य का प्रधान नगर है। मोरवी राज्य गुजरात के अन्तर्गत काठियावाड़ प्रदेश में स्थित है। दयानन्द ने कहा है, मैंने मोरवी में जन्मग्रहण किया। मोरवी एक नगर है। वह दुर्गान्धरा राज्य के सीमान्तवर्ती है"। दूसरे स्थान में उन्होंने कहा है, "काठियावाड़ प्रदेश में मोरवी राज्य के अन्तर्गत एक नगर......में मैंने जन्मग्रहण किया।" इन दोनों प्रकार की उक्तियों में कुछ आंशिक भेद होने पर भी मूल में कोई विरोध नहीं है। अस्तु। हम यह नहीं कह सकते कि मोरवी नगर दुर्गान्धरा राज्य के सीमान्तवर्ती है वा नहीं। इसमें अणुमात्र भी संशय नहीं है कि दयानन्द ने किसी ग्रामविशेष‡ में जन्मग्रहण नहीं

---

‡ आर्यसिद्धान्त क सम्पादक पं० भीमसेन शर्मा ने किसी गुजरात-देशी ब्राह्मण से सुना है कि मोरवी राज्य के अन्तर्गत टंकारा नामक ग्राम में दयानन्द का जन्म हुआ था। यह बात विश्वास के योग्य प्रतीत नहीं होती, क्योंकि दयानन्द ने अपने कथित आत्मचरित के प्रसंग में एक से अधिक वार यह लिखा है कि उनका जन्मस्थान नगरविशेष है।

(नोट—बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय महाशय ने आज से ३० वर्ष पूर्व 'दयानन्द चरित' लिखा था, किन्तु इस विषय की सत्यता को निर्धारित करने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

किया, प्रत्युत नगरविशेष ही उनका जन्म हुआ और वह नगर मोरवी नगर ही है ‡।

दयानन्द ने जिस समय जन्मग्रहण किया, उस समय भारतभूमि विशृङ्खलापूर्ण थी। उस समय भारतभूमि का आभ्यन्तर नाना प्रकार के युद्धविग्रहों से विप्लवित था। उस समय अंग्रेजों की विजयिनी शक्ति के साथ महाराष्ट्र की महाशक्ति का संघर्ष चल रहा था, सिन्धिया और पेशवा का अपरिमित पराक्रम अस्त सा हो रहा था, और उससे कुछ पहिले राजपूत जाति की विश्वविश्रुत वीरगरिमा क्षीण हो चुकी थी। क्या राजस्थान में, क्या महाराष्ट्र में और क्या पंजाब में, प्रायः सर्वत्र ही उस समय अंग्रेजों की महिमा प्रसारित और प्रतिष्ठित होने लगी थी। ब्रिटिश सेना ब्रह्मदेश को विध्वस्त करने में लगी थी और भरतपुर के इतिहास-कीर्तित दुर्ग पर अधिकार पाकर

के लिए देवेन्द्र बावू स्वयं मोरवी राज्य में जाकर राजकीय कागज पत्रों की पड़ताल एवं निकटवर्त्तीय सम्वन्धियों से अनुसन्धान कर स्वामीजी का जन्मस्थान टङ्कारा ही निश्चय किया और स्वामीजी का जन्म नाम मूलजी तथा उनके पिता का नाम कर्षणजी बताया।

स्वामीजी के जन्म स्थान के निर्णय के लिये सार्वदेशिक सभा द्वारा नियुक्त कमिटि के मुख्य कार्यकर्त्ता एवं गुलकुल कांगड़ी के आचार्य श्री रामदेवजी प्रभृति कई महानुभावों ने भी विशेष रूप से खोजकर टङ्कारा ग्राम ही स्वामीजी का जन्म स्थान निश्चय किया तथा बम्बई प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा ने सम्वत् १९८२ विक्रमी में टङ्कारा में ऋषि दयानन्द की जन्मशताब्दि महोत्सव मनाया था।)

---

‡ मोरवी नगर मच्छू नाम की नदी के तीर पर स्थित है। मच्छू नदी मोरवी के उत्तर में वहती हुई ११ कोस की दूरी पर कच्छ उपसागर में मिल गई है। यह नगर राजकोट से ३५ मील दूर है। मोरवी राज्य काठियावाड़ के हालार नामी विभाग के अन्तर्गत है। इस राज्य का क्षेत्रफल ८२१ वर्गमील है। मोरवी का राजा कच्छपति राव का वंशधर कहलाता है। अंग्रेजी सरकार के अतिरिक्त बड़ौदा के गायकवाड़ और जूनागढ़ के नव्वाव को भी मोरवी का राज्य कर देता है। Imperial Gazetteer Vol, IX P. 518—19.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उन्मत्त हो रही थी। उस समय देश में शान्ति सूचित हो गई थी; परन्तु स्थापित नहीं हुई थी। इसी कारण देशनिवासी बहुधा आतंकित रहते थे। उस समय की सामाजिक अवस्था भी शोचनीय थी। समाज-भूमि विविध प्रकार की आवर्जनाओं से समावृत थी। अधिक क्या; भारत के चितासमूह में सैकड़ों अबलाओं के जीवन्तदेह पड़-पड़ कर भस्म-राशि में परिणत हो रहे थे। उस समय लोकशिक्षा वास्तविक रूप से प्रतिष्ठित नहीं हुई थी। उस समय राजा प्रजा की शिक्षा की आवश्यकता को विशेष रूप से अनुभव करके उसके प्रकार और प्रणाली के विषय में विद्वत्समाज के साथ परामर्श कर रहे थे। उस समय क्रिश्चियन धर्म्म की दो एक प्रकाशरेखा भारत-भूमि के ऊपर थोड़ी-थोड़ी गिर रही थीं। एक दल प्रख्यातनामा प्रचारक‡ आर्यावर्त पर अधिकार करने के उद्देश्य से बद्धपरिकर होकर आया था। वह भागीरथी के पवित्र तट पर अनेक प्रचारालय को प्रतिष्ठित करके हिन्दुओं के समाज और धर्म्म पर निरन्तर ही अस्त्रक्षेप कर रहा था। इससे भी अधिक उस समय अधर्म और अज्ञानता का घोर अन्धकार भारत में चारों ओर परिव्याप्त हो रहा था। देशवासी उस घोर अन्धकार के भीतर आत्मविस्मृत होकर गहरी निद्रा से अभिभूत हो गये थे। केवल एक मनुष्य ब्राह्मणसन्तान बङ्ग-भूमि के एक प्रान्त में जागृत होकर ब्रह्मवाद की विजय भेरी को वारं-वार निनादित कर रहा था। उसके भेरीनाद से भारत जाग तो गया था; परन्तु जैसे निद्रा से उठा हुआ व्यक्ति सहसा अपनी सामान्य अवस्था में नहीं आ सकता, ऐसे ही भारतभूमि भी अपनी अवस्था के अवधारण करने में समर्थ नहीं थी। ऐसे समय में महात्मा दयानन्द सरस्वती संवत् १८८१ अथवा सन् १८२४ ईस्वी में एक उदीच्य ब्राह्मणकुल में आविर्भूत हुए† । संवत् के

‡ This band consisted of Messrs Ward, Carey, Marshman who settled in the cit y of Serampur near Calcutta on the banks of the Ganges.

† अध्यापक मैक्समूलर ने अपने लिखे हुए जीवनीमाला विषयक ग्रन्थ में दयानन्द का जन्मकाल १८२७ ई० निरूपित किया है और यह कथा भी लिखी है कि उनकी सन् १८८३ ई० में ५६ वर्ष की आयु में मृत्यु हुई। मृत्युकाल ५६ वर्ष की आयु में रखने से जन्मकाल १८२७ नहीं होता, १८२४ ही होता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भिन्न उनके जन्मकाल के विषय में हमें मास, तारीख वा तिथि के सम्बन्ध में कोई पता नहीं लगा।

दयानन्द के पिता एक विशिष्ट शिवोपासक थे। यहां तक कि वह शिवोपासना को ही सार और सर्वोच्च धर्म्म समझते थे। फलतः विपुल सम्पत्ति और विस्तृत परिवार के स्वामी होने पर भी वह धर्म्मविषय में जैसे निष्ठासम्पन्न थे वैसे निष्ठासम्पन्न लोग संसार में बहुत न्यून देखने में आते हैं। इसी हेतु शङ्कर के उद्देश्य से वार-व्रत अर्चना-उपवास जो कुछ अनुष्ठितव्य था वह उस सबको ही सर्वाङ्ग-रूप से अनुष्ठित करके चलते थे। केवल आप ही नहीं चलते थे, उनके लिए दूसरों को भी अनुरोध करते थे। जिस स्थान में शिवपुराण का पाठ होता, जहाँ शिवोपख्यान सुनाया जाता, किंवा जिस स्थान में शिवसम्बन्धी किसी सदनुष्ठान की सूचना होगी, वह उस स्थान में श्रद्धान्वित चित्त से जाकर उसका श्रवण और दर्शन करके अत्यन्त पुलकित होते। फिर इसमें क्या संशय है कि पितृप्रकृति की ऐसी प्रगाढ़ और अकृत्रिम धर्म्मनिष्ठा पुत्र दयानन्द में भी निवेशित हो गई। केवल अकृत्रिम धर्म्मनिष्ठा के कारण ही वे प्रसिद्ध नहीं थे। वह एक अविचलित चित्त व्यक्ति भी थे। दयानन्द की माता जब कभी पुत्र की स्वास्थ्य हानि की आशङ्का करके प्रतिदिन पूजा के विरुद्ध आपत्ति करती, पिता उसी क्षण उसके प्रतिवाद के लिये अग्रसर होते। इस सम्बन्ध में सहधर्मिणी के वारंवार आपत्ति उठाने पर भी वह उसके प्रति कर्णपात नहीं करते थे। वह जिसको कर्त्तव्य समझते थे। विशेषतः धर्म्मविषय में जिस

है। सुतरां मैक्समूलर महोदय ने परोक्ष भाव से आपही अपनी कथा का प्रतिवाद किया है। आश्चर्य का विषय है कि उन्होंने अपने निबन्ध में दयानन्द के निजलिखित आत्मचरित से अनेक अंश उद्धृत किये हैं, परन्तु जिस अंश में उनका जन्मकाल उल्लिखित है उसी अंश को अनुद्धृत रक्खा है।

Max-Muller's Biographical Essays, P. 167 & 180.

मैक्समूलर ने दयानन्द सरस्वती की मृत्यु के पश्चात् १८८४ ई० में जनवरी या फरवरी मास में विलायत के पालमाल गजट नामक प्रसिद्ध समाचार पत्र में उनके विषय में एक निबन्ध प्रकाशित किया था। विदित होता है कि उपर्युल्लिखित ग्रन्थ में उसी निबन्ध को पुनर्वार मुद्रित करके प्रकाशित किया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अनुष्ठान को अनुष्ठेय अवधारित करते थे उसके सर्वांश में प्रतिपालन करने के निमित्त वह प्रियतम पुत्र को भी कठोरतम आदेश प्रदान करने में कुछ भी नहीं हिचकिचाते थे। यह पितृ चरित्र के पक्ष में सामान्य दृढ़चित्तता का परिचय नहीं है। अस्तु। हमारा विश्वास है कि पितृप्रकृति की ऐसी दृढ़चित्तता पुत्र की प्रकृति में भी संक्रामित हो गई थी।

मातृप्रकृति के सम्बन्ध में दयानन्द ने कोई बात नहीं लिखी है; इसलिये कार्यकारण सूत्र से जो कुछ अनुमान होता है, उससे यही विश्वास होता है कि उनकी जननी अत्यन्त कोमल हृदया थी। शिवरात्रि के व्रत को भङ्ग करके दयानन्द जिस समय घर में लौट कर आये, उस समय तिरस्कार तो दूर रहा, माता ने नितान्त प्रीति के साथ उनको भोजन कराया। और अधिक क्या, व्रतभङ्ग रूप अपराध के कारण कहीं प्राणप्रिय पुत्र को पिता पीछे तिरस्कृत वा दण्डित करें, इसलिये उसने पहिले से ही उनको किस प्रकार से सावधान कर दिया! उन्होंने दयानन्द के देहासुख की आशङ्का करके ही शिवाराधना के सम्बन्ध में अपने पति के साथ विरोध करने में भी संकोच नहीं किया। इस सबकी करुणामयहृदयता का अनुपम दर्शन कहना चाहिये। जिस समय सिद्ध-पुर की मेला भूमि में दयानन्द को पिता ने पकड़ लिया, उस समय तिरस्कार सूचक अन्यान्य कथाओं के बीच में उनके पिता ने उनको मातृहन्ता कह कर पुकारा। इससे विदित होता है कि उनके विरह में जननी अत्यन्त व्यथिता, यहां तक कि मृतप्राया, हो गई होगी। सुतराम् इसके बताने के लिये कि उनकी माता की प्रकृति कैसी करुणरसाभिषिक्त थी और अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। दयानन्द के चरित्र में भी उनकी माता की प्रकृति की अनुकृति थी। दिग्विजयी पण्डित और तर्कशास्त्र विशारद तार्किक होने पर भी दयानन्द कर्कश प्रकृति के मनुष्य नहीं थे; किन्तु उनकी प्रकृति ऐसी सुमधुर और आचरण ऐसा सरस था कि जो कोई उनके साथ एक बार भी परिचय सूत्र में निबद्ध हो जाता था, वह फिर कभी उनको नहीं भूल सकता था।

दयानन्द का शिक्षाकार्य कुल परम्परा के अनुसार सम्पादित हुआ था। उन्होंने पाँच वर्ष से भी कुछ न्यून आयु में वर्णशिक्षा प्राप्त करके वेदों के बहुत से मन्त्र और वेदभाष्य के बहुत से अंश कण्ठस्थ कर लिये थे। आठवें वर्ष में उनका उपनयन संस्कार हुआ। उसके पश्चात् रुद्राध्याय से आरम्भ करके यजुर्वेद का अध्ययन करने लगे। उदीच्य ब्राह्मणगण के सामवेदान्तर्गत होने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चरित्र में ही देखते हैं। जब तक दयानन्द उस पाषाणनिर्मित मूर्त्ति को ही महादेव विश्वास करते थे, तब तक उसके उद्देश्य से व्रत उपवासादि जो कुछ भी अनुष्ठेय था उस सबको ही बड़ी निष्ठा के साथ करते थे। यहाँ तक कि शिवरात्रि के व्रतभङ्ग के घोर अपराध में भागी न हों इस विचार से व्रतधारी दयानन्द वारंवार आँखों में पानी के छींटे देते हुए जागते रहे; परन्तु जब उस मूर्त्ति के प्रति उनमें अविश्वास उत्पन्न हुआ जब वे उसे सर्वशक्तिमान् परमेश्वर विश्वास न कर सके; तो उन्होंने उसकी उपासना वा उपासना के उद्देश से उपवास करना किसी अंश में भी आवश्यक नहीं समझा। इस विषय में उन्होंने कहा है. 'वह मुझे यह समझाने की चेष्टा करने लगे कि मैंने व्रतभङ्ग करके कैसा महापाप किया है। परन्तु उस प्रस्तरमय मूर्त्ति को परमेश्वर विश्वास न कर सकने के कारण मैंने सोचा कि मैं फिर उसकी उपासना क्यों करूं और उसके उद्देश्य से उपवास क्यों रक्खूं।"

दयानन्द का बाल्यजीवन जिस प्रकार ज्ञानपिपासा और कर्तव्यनिष्ठा से अलंकृत है, उसी प्रकार वह वैराग्य के अकृत्रिम भाव से परिपूरित है। जिस समय उनकी आयु नौ वर्ष की थी, उसी समय उनके प्रेमास्पद पितामह ने परलोक गमन किया। दयानन्द पितामह के बड़े स्नेहपात्र थे। इसी कारण पितामह के वियोग से वे बहुत शोकार्त्त हुए, और यह चिन्ता कि उनको भी एक दिन सर्वसंहारक मृत्यु के ग्रास में ग्रसित होना होगा पितामह के वियोग के पश्चात् से उनके हृदय में प्रबलतर होने लगी और जिस उपाय से सर्वग्राही मृत्यु से निष्कृति लाभ किया जा सके, बालक दयानन्द उसी के लिये चिन्तान्वित हो गया। फलतः मृत्यु की चिंता और मृत्यु से निष्कृति की चिंता ने उनको इतना अस्थिर किया कि व्याकुल हृदय से अपने बान्धव वर्ग के पास जाकर अमरत्वप्राप्ति के उपाय जानने के लिये परामर्श लेने लगे। अस्तु इसी प्रकार की एक और घटना से दयानन्द का हृदयनिहित वैराग्यभाव अधिकतर जागृत हो गया। वह घटना भी बड़ी शोकावह थी। उसकी एक १४ वर्ष की भगिनी सांघातिक रोग से पीड़ित होकर दो घंटे के भीतर ही लोकान्तरित हो गई। उसको देख कर दयानन्द का कोमल हृदय बहुत ही कातर हुआ। विशेषतः उन्होंने इससे पहले कभी किसी मनुष्य को मृत्युयन्त्रणा से पीड़ित होते नहीं देखा था। बहिन के वियोग से उत्पन्न हुई व्यथा इतनी अधिक थी कि वह अश्रुपात करने को भी समर्थ नहीं हुए। जिस समय चारों ओर उनके

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बन्धुवर्ग दुःसह शोक के आघात से अभिभूत होकर रोते, चिल्लाते और छाती पीटते थे, दयानन्द उस समय अविचलित चित्त से खड़े रहकर चिंता करने लगे कि इस लोक में मनुष्यमात्र को ही मौत के मुंह से जाना होगा। जैसे युद्ध के अन्त में निपुण सेनापति समरभूमि पर खड़ा होकर चारों ओर के हाहाकार वा आर्त्तध्वनि पर दृष्टिपात न करके स्वदेश वा स्वजाति के भविष्य की चिंता में ही लग्न हो जाता है, वैसे ही दयानन्द भी चारों ओर के विलाप वा क्रन्दन की ध्वनि पर कर्णपात न करके मृत्युनिष्कृति के उपायों के सोचने में ही निमग्न हो गये। ऐसी घटना महापुरुषों के पक्ष में अस्वाभाविक नहीं है। क्योंकि संसार की साधारण श्रेणी के मनुष्य उपस्थित व्यापार से ही विचलित हो जाते हैं; परन्तु जो मनुष्य जाति के नायक वा परिचालक पद पर प्रतिष्ठित होते हैं, वे उपस्थित व्यापार पर इस प्रकार से दृष्टिपात नहीं करते, प्रत्युत कार्यकारण के सूत्र का अवलम्बन करके वे उस घटना के आदि वा परिणाम की चिंता में ही प्रवृत्त होते हैं। अस्तु। दयानन्द ने उस शोका-द्रंभूमि पर खड़ा होकर प्रतिज्ञा की कि चाहे जिस प्रकार से हो, मैं मुक्ति का उपाय पता लगा कर अवर्णनीय मृत्युयन्त्रणा से अपनी रक्षा करूंगा। मृत्यु की करालतम मूर्तिका दर्शन करके उनके मन में मुक्तिपिपासा प्रबल हो गई। जिस परम पवित्र आकांक्षा को उद्दीप्त करने के लिये चित्त को निर्मल करना होता है, इन्द्रियों को संयम में रखना होता है, तपस्या करनी होती है, और जिस आकांक्षा के उद्दीपित होने से मनुष्य चित्त की जितनी आकांक्षायें होती हैं वे सब उन्मूलित हो जाती हैं, वही आकांक्षा दयानन्द के तरुणचित्त में उद्दीपित हो गई। फलतः यौवन के प्रारम्भ में ही वह मुमुक्षु मुक्तिपिपासु हो गये। परन्तु हृदय की उस गूढ़ वासना को वह जी खोल कर किसी से नहीं कह सके। जब कभी किसी स्थल में विवाह का प्रसंङ्ग उठता, तो वह यह कहकर कि मैं कभी भी विवाह न करूंगा चुप हो जाते। अस्तु। कुछ दिन पीछे माता-पिता पुत्र के हृदय की समस्त वासनाओं को जान गये।

मनुष्यजाति के आध्यात्मिक इतिहास में देखा जाता है कि वैराग्यव्याधि के प्रतिकार के लिए प्रायः सर्वत्र ही विवाहरूप विषव्यवस्था व्यवस्थित होती है। परन्तु सान्निपातिक विकार में विषव्यवस्था विहित होने पर भी वैराग्य विकारों में वह विहित नहीं हो सकती, क्योंकि बुद्ध और चैतन्य जिस समय वैराग्य के घोर विकार से विकृत हुए थे, उस समय उनके पक्ष में विवाहरूप

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कालकूट सर्वतोभावेन निरर्थक हो गया था। वस्तुतः प्रकृत वैराग्य में विवाह-विषय कभी कार्यकर नहीं होता; परन्तु ऐसा न होने पर भी विभ्रान्तचित्त मनुष्य वैराग्यव्याधि में पूर्वोल्लिखित औषध को ही व्यवस्थित करते रहते हैं। दयानन्द के वैराग्य की आग को बुझाने के अभिप्राय से पहिले उनके पिता ने जमींदारी के कार्य का भारार्पण करना चाहा; परन्तु वह इस विषय में सम्मत नहीं हुए। तब उनको विवाह की शृंखला में बांधना ही युक्तियुक्त समझा। उसके लिये पिता बहुत शीघ्रता से विवाहकार्य के सम्पादन का उद्योग करने लगे। दयानन्द ने उसके रोकने के निमित्त यथाशक्ति चेष्टा की; परन्तु उसकी चेष्टा सार्थक नहीं हुई, क्योंकि उनके माता-पिता किसी प्रकार से भी निरस्तर नहीं हुए। इसलिये वह उस समय अनन्योपाय हो कर सन् १८४६ ई० में एक दिन सायङ्काल को २१ वर्ष की आयु में घर से बाहर निकल गये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दूसरा अध्याय

योगानुराग,—साधुसंग,—पिता के साथ साक्षात्,—पुनः प्रस्थान,—नानास्थानपरिभ्रमण,—संन्यासग्रहण,—योगशिक्षा,—शास्त्रालोचना,-नाड़ीचक्रपरीक्षा, मथुरागमन ।

घर से निकले हुए दयानन्द चारों ओर योगियों का अनुसन्धान करने लगे। योग में उनको गहरा अनुराग पहिले से ही था विशेषतः घर में रहने समय जब उनके हृदय में वैराग्य की वह्नि प्रदीप्त हुई, जब उन्होंने मृत्यु-यन्त्रणा से निष्कृति पाने के उद्देश्य से बान्धवों से परामर्श लिया, तो किसी-किसी व्यक्ति ने उनको योगानुशीलन करने का परामर्श दिया था। इस कारण जब कभी उन्हें किसी व्यक्ति से किसी योगी का पता लगता, तो वह तुरन्त ही उसके समीप को चल देते। लाला भक्त एक प्रसिद्ध योगी थे। वह शैला नगर में रहते थे। दयानन्द लाला भक्त के पास गये और उनके साथ कुछ दिन योगचर्य्या में प्रवृत्त हुए। परन्तु अनाश्रम व्यक्ति का धर्मसाधन वा योगानुशीलन श्रृंखलाबद्ध नहीं है और श्रृंखलाबद्ध न होने से संसार का कोई कार्य भी उत्तम रूप से सम्पादित नहीं हो सकता, इस कारण आश्रमनिविष्ट होना दयानन्द के पक्ष में आवश्यक हो गया। उन्होंने वहाँ के किसी ब्रह्मचारी से दीक्षा ग्रहण की। ब्रह्मचारी दयानन्द शुद्धचैतन्य* नाम से अभिहित हो गये। नाम के परिवर्तन के साथ उनका वेषादि भी परिवर्त्तित हो गया। वह इससे पहिले ही अपने शरीर के भूषणादि मार्ग में वैरागियों

* शङ्कराचार्य द्वारा प्रतिष्ठित चार मठों में चार प्रकार के ब्रह्मचारी हैं। मठ के अनुसार ब्रह्मचारियों की भिन्न-भिन्न उपाधियाँ होती हैं। उत्तर मठ की आनन्द, दक्षिण मठ की चैतन्य, पूर्व मठ की प्रकाश और पश्चिम मठ की स्वरूप उपाधि है। इससे विदित होता है कि दयानन्द दक्षिण मठ के ब्रह्मचारी हुए थे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के एक दल को दान कर चुके थे। इसलिये उनके पास उन वस्त्रों के अतिरिक्त जो वह घर से पहन कर आये थे और कुछ नहीं था। उस समय उनको भी परित्याग करके गेरुवे वस्त्र पहन लिये। उस समय सम्भवतः कार्तिक मास था। कार्तिक मास में सिद्धपुर नामक स्थान में एक विस्तृत मेला होता है। मेले में अनेक साधु-संन्यासी आते हैं। साधु वा सिद्ध महापुरुषों के संसर्ग से चित्त की पवित्रता सम्पादित होती है। विशेषतः उनके उपदेश से धर्मपिपासु व्यक्तियों का विशिष्ट रूप से कल्याण साधित होता है। इस कारण दयानन्द आग्रहान्वित हृदय से सिद्धपुर की उसी मेला-भूमि में पहुँचे। मेला-भूमि सहस्रों मनुष्यों से परिपूरित थी; वे सब ही अपनी अपनी आकांक्षित वस्तुओं के अनुसन्धान में लगे हुए थे। उस मेलाभूमि के किस स्थान में कौनसा सा साधु है, कौन महापुरुष किस जगह ठहरा हुआ है, अथवा कौन योगिवर किस जगह योगासन पर उपविष्ट है, इस अनुसन्धान के अभिप्राय से ही दयानन्द उस लोकसमुद्र को चीरकर इस्ततः विचरण करने लगे। इसके पश्चात् कहीं किसी साधु महात्मा के दर्शन पाते ही तत्क्षण उनके पास श्रद्धान्वित हृदय से बैठकर परमार्थ विषयक आलोचना में संलग्न होने लगे। इस प्रकार साधुसङ्ग और परमार्थ प्रसङ्ग में दयानन्द के कई दिन बीत गये; परन्तु वह इस पवित्र सुख का अधिक दिन तक उपभोग न कर पाये। क्योंकि एक दिन प्रातःकाल साधु-सज्जन से घिरे हुए वह नीलकण्ठ के मन्दिर में बैठे थे कि उस समय उनके पिता सहसा आ पहुँचे। उनके पिता के साथ कई सिपाही भी थे। उन्हें यह सहज में ही पता लग गया कि उनके पकड़ने के विचार से ही पिता सिपाहियों को साथ लेकर आये हैं और दयानन्द को इस बात के जानने में भी चिन्ता नहीं करनी पड़ी कि सिद्धपुर आने के समय जिस पूर्व परिचित वैरागी के साथ उनका साक्षात् हुआ था उस वैरागी ने ही पिता से उनके पलायन का संवाद कहा है।

खोये हुए सन्तान का पता लगने से माता-पिता का हृदय आनन्द रस से अभिषिक्त हो जाता है। परन्तु वह आनन्द निरवच्छिन्न वा निर्मल नहीं होता; क्योंकि उसमें क्रोध का भी कुछ अंश होता है। परन्तु वह क्रोध का अंश अतिमात्र आनन्द के आवेग का रूपान्तर मात्र है। दयानन्द को देखकर उनके पिता आनन्दित नहीं हुए, प्रत्युत अत्यन्त क्रोधाविष्ट हो गये। किन्तु उनका वह क्रोध अतिमात्र आनन्द के आवेग का रूपान्तर नहीं था। वह अति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रचण्ड था, किसी-किसी अंश में अभिमानयुक्त था। किन्तु वह सर्वत्र ही कर्तव्यच्युति के निबन्धन की उग्रता में ही प्रतप्त था। दयानन्द पिता की आज्ञा के अनुकूल होकर नहीं चले; दयानन्द ने पुत्रोचित कर्तव्य का सम्पादन नहीं किया; दयानन्द अपने विवाह के निमित्त माता पिता को कृतसङ्कल्प, प्रत्युत उसके प्रबन्ध में तत्पर देखकर घर से निकल भागे; विशेषतः एक ऐश्वर्यशाली मनुष्य के पुत्र हो कर दयानन्द आज भिखारी के वेष में इधर-उधर घूम रहे हैं—ऐसी अवस्था में उनके कठोर कर्तव्यपरायण पिता अत्यन्त रोषाविष्ट क्यों न हों। जैसे प्रज्वलित वह्नि घृत के स्पर्श से और भी प्रज्वलित हो जाती है, वैसे ही दयानन्द के गेरुवे वस्त्र और कमण्डलु को देखकर उनके पिता का कोपानल और भी प्रज्वलित हो गया। इसी कारण उन्होंने तत्क्षणात् वस्त्र-कमण्डलु को फाड़तोड़ कर फेंक दिया। पिता के तीव्र तिरस्कार को देखकर दयानन्द ने कोई बात नहीं कही और चुपचाप रहे। अन्त में उनके पैरों में गिरकर अपने अपराध को स्वीकार करके क्षमा मांगी। इससे भी अधिक वह पिता से यह बात कहने में भी संकुचित नहीं हुए कि उन्होंने यह कार्य एक व्यक्ति विशेष के कुपरामर्श से परिचालित होकर किया है और वह घर लौट चलने के लिये उसी क्षण प्रस्तुत हैं। हम उनकी इस बात को निर्भयता का परिचायक नहीं समझ सकते और यह बात उनके पक्ष में सत्यपरायणयता की भी परिचायक नहीं है; क्योंकि उन्होंने किसी व्यक्ति के कुपरामर्श से परिचालित होकर घर नहीं छोड़ा था और घर लौट चलने की इच्छा उनके मन में बिन्दुमात्र भी विद्यमान नहीं थी—यह बात हम सहस्र वार शपथ खाकर कह सकते हैं। अस्तु। इसके और अधिक समझाने की आवश्यकता नहीं है कि मनुष्य भय के प्रचण्ड आवेग में अथवा किसी अचिन्तितपूर्व आकस्मिक घटना के उपस्थित होने पर अनेक समय कर्तव्यज्ञान से विमूढ़ होकर मन के एक प्रकार के भाव को अन्य प्रकार से प्रकाशित कर देता है; अथवा किसी चिराभिलषित वा प्राण से भी अधिक प्यारे सङ्कल्प की सिद्धि के पक्ष में विघ्न विशेष के संघटित होने पर उसके दूर करने के अभिप्राय से कभी-कभी सत्य की सीमा का भी उल्लङ्घन कर बैठता है। सुतरां दयानन्द की यह त्रुटि एक प्रकार से स्वाभाविक या सङ्गत कह कर ही माननी पड़ेगी। फलतः उनके पिता उनको घर ले जाने के लिये जैसे उत्सुक थे, वे भी अपने सङ्कल्प में पहिले के समान वैसे ही अविचलित बने रहे। पिता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के असीम तिरस्कार से दयानन्द की कर्तव्यनिष्ठा अणुमात्र भी विचलित नहीं हुई। पिता की एकमात्र इच्छा यह थी कि पुत्र को घर ले जाकर सर्वप्रकार से सांसारिक सुखभोग करें; पुत्र की एकमात्र इच्छा यह थी कि योगावलम्बन करके योगिगणवांछित शाश्वत सुख के अधिकारी होवें। पिता-पुत्र दोनों ही सुखान्वेषी थे; परन्तु दोनों के सुख प्रकार और प्रकृति भेद में सर्वथा पृथक्-पृथक् थे। अस्तु। दयानन्द ने घर लौट चलने का अभिप्राय प्रकाशित कर दिया था; परन्तु उनके पिता उनकी बात से निश्चिन्त वा निरुद्वेग नहीं हो सके। इसलिये उनको दिन-रात पहरे में रक्खा। परन्तु दयानन्द एक क्षण के लिये भी अपने उद्देश्य की सिद्धि से उदासीन नहीं रहे। पिता के हाथ से छुटकारा पाने के लिये वह सर्वदा ही सुअवसर की प्रतीक्षा करने लगे। घटनाक्रम से एक दिन रात्रि के समय जब सबके सब सो गये, यहां तक कि उनके रक्षक सिपाही तक निद्रा से अभिभूत हो गये, दयानन्द ने उस समय शय्यात्याग करके चुपचाप प्रस्थान कर दिया। प्रस्थान करने के समय दयानन्द के हाथ में एक जलपूर्ण लोटा था; जिसका अभिप्राय यह था कि यदि सहसा किसी के साथ साक्षात् हो जाय या कोई जिज्ञासा कर बैठे, तो वह यह कह कर कि हम प्रातःकृत्य करने के लिये जाते हैं छुटकारा पा सकें।

दयानन्द जब पिता से सदा के लिये अलग हुए, उस समय रात्रि की समाप्ति में केवल एक प्रहर शेष था। वह मेलाभूमि से आधे कोस से भी कुछ अधिक दूर तक अत्यन्त शीघ्रता के साथ चले गये। परन्तु उन्होंने सोचा कि उसके आगे मार्ग में चलना निरापद नहीं है, इसलिये एक घने पत्तों वाले वृक्ष के ऊपर चढ़कर छिप गये। वृक्ष की जो शाखा शिव मन्दिर के ऊपर थी उसी शाखा में छिपना अधिकतर सुविधाजनक समझ कर उसके ऊपर बैठ गये। रात्रि के शेष भाग से लेकर दिन भर निःशब्द और निस्तब्ध भाव से वृक्ष के ऊपर बीता। प्रभात का प्रकाश होने पर उन्होंने देखा कि सिपाही लोग उनके अनुसन्धान में चारों ओर दौड़ते फिरते हैं। इसको देखकर दयानन्द ने अपने को अधिकतर छिपाने की चेष्टा की। फलतः उन्हें सारा दिन वृक्ष के ऊपर ही बिना भोजन किये काटना पड़ा। अन्त में जब चारों ओर सन्ध्या का अन्धकार फैलने लगा, तब उन्होंने वृक्ष से उतरकर चलना आरम्भ किया। दूसरी ओर उनके पिता मेलाभूमि और आस-पास के सब स्थानों को एक-एक करके देखने लगे; परन्तु किसी स्थान में भी पुत्र का पता नहीं पाया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

खोया हुआ रत्न यदि प्राप्त होने के पश्चात् फिर खोया जाय, तो जिस प्रकार रत्नस्वामी दुःसह दुःख के दंशन से कातर हो जाता है, दयानन्द का कोई पता न पाकर सम्भवतः उनके पिता भी उसी प्रकार शोक से सन्तापित हो गये होंगे। अस्तु। दयानन्द निर्भय होकर सारी रात चलते-चलते अन्त में अहमदाबाद पहुंचे। अहमदाबाद से बड़ौदा जाकर वहां के चैतन्यमठ में कुछ दिन तक रहने लगे। चैतन्यमठ में कतिपय ब्रह्मचारियों के साथ जीव-ब्रह्म की एकता के विषय में दयानन्द का वार्त्तालाप हुआ। वार्त्तालाप का फल यह हुआ कि जीव-ब्रह्म की अभिन्नता में उनका विश्वास दृढ़तर हो गया। इसके पश्चात् बड़ौदा से वाराणसी, चानोदकल्यानी, व्यासाश्रम और आबूपर्वत प्रभृति स्थानों में भ्रमण करते हुए सन् १८५४ ईस्वी में हरिद्वार आये। हरिद्वार में उस समय कुम्भ का मेला था। मेले के उपलक्ष में अनेक दिशा और देशों से आये हुए साधुओं के समावेश को देखकर दयानन्द बहुत विस्मित हुए। हरिद्वार से हृषीकेश, टिहरी, रुद्रप्रयाग, गुप्तकाशी, गौरीकुण्ड, शिवपुरी, तुङ्गनाथ, अखीमठ, जोशीमठ, बदरीनारायण और पश्चिमप्रदेशान्तर्गत‡ रामपुर, मुरादाबाद, फर्रुखाबाद प्रभृति बहुत से स्थानों में घूमते हुए सन् १८५५ ईस्वी में कानपुर पहुँचे। कानपुर से काशी, इलाहाबाद, चण्डालगढ़ प्रभृति स्थानों का दर्शन करते हुए नर्मदा नदी के उत्पत्ति स्थान के देखने के निमित्त यात्रा की। उसके पश्चात् अनेक नये-नये स्थानों में भ्रमण करते हुए मथुरा में पहुंचे।

दयानन्द की यह सुविस्तृत भ्रमण की कहानी बहुत सी घटनाओं से परिपूर्ण है। जिस समय वह नर्मदाप्रदेशवर्त्ती चानोदकल्यानी नामक स्थान में ठहरे हुए परमानन्द परमहंस से वेदान्तसार प्रभृति पढ़ते थे, उस समय उन्होंने संन्यासाश्रम में प्रविष्ट होने की आवश्यकता अनुभव की। कारण यह था कि उस समय उन्हें स्वयं भोजन बनाकर खाना पड़ता था। इसलिए उनका बहुत-सा समय वृथा जाता था। इसके अतिरिक्त संन्यासाश्रम ज्ञानोपार्जन में अधिकतर सुविधाजनक है। इन सब कारणों से उन्होंने सोचा कि संन्यासाश्राम ग्रहण करना युक्तियुक्त है। घटनाक्रम से उसी समय पूर्णानन्द सरस्वती नामक एक संन्यासी शृङ्गगिरि मठ से आये हुए चानोद के निकट एक एकान्त स्थान

---

‡ ग्रन्थकर्त्ता वंगदेशवासी हैं, इसी कारण उन्होंने रामपुरादि को पश्चिमप्रदेशान्तर्गत लिखा है—(अनुवादक)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में ठहरे हुए थे। पूर्णानन्द द्वारिका को जाने वाले थे। दयानन्द संन्यासाश्रम में दीक्षित होने के अभिप्राय से पूर्णानन्द के पास गये और अनुरोध करने के लिए एक महाराष्ट्रीय पण्डित को भी साथ ले गये। उनकी अनुरोधसहकृत प्रार्थना को सुनकर पहिले तो पूर्णानन्द ने अनेक आपत्ति उठाई। आपत्ति का कारण यह था कि दीक्षाप्रार्थी नितान्त अल्प वयस्क थे। विशेषतः गुजरात प्रदेशवासी व्यक्ति का गुजरातप्रदेशवासी संन्यासी से ही दीक्षाग्रहण करना विधेय था। परन्तु पूर्णानन्द की इस प्रकार की आपत्ति वा असम्मति कुछ भी कार्यकर नहीं हुई; क्योंकि दृढ़सङ्कल्प के सामने संसार की कोई आपत्ति भी आपत्ति में परिगणित नहीं हो सकती। सुतरां अन्त में पूर्णानन्द ने उनको संन्यासाश्रम में दीक्षित कर लिया। दीक्षा के पश्चात् उनका नाम 'दयानन्द सरस्वती' हुआ। उस समय उनकी आयु २३ वा २४ वर्ष से अधिक नहीं थी। इससे प्रतीत होता है कि घर से निकलने के दो या तीन वर्ष पीछे ही दयानन्द ने संन्यासिसम्प्रदाय में प्रवेश किया था।

दयानन्द अनेक स्थानों में भ्रमण करते-करते अनेक साधु-संन्यासियों से परिचित हो गये थे। उनमें पूर्वोल्लिखित परमानन्द परमहंस के अतिरिक्त व्यासाश्रम के योगानन्द, वाराणसी के सच्चिदानन्द, केदारघाट के गङ्गागिरि और ज्वालानन्द पुरी और शिवानन्द गिरि प्रभृतियों के नाम उल्लेख करने योग्य हैं। अन्त के दो संन्यासियों से दयानन्द ने योगविद्या के गूढ़तत्त्वसमूह की शिक्षा प्राप्त की, प्रत्युत यों कहना चाहिए कि योगशिक्षा के सम्बन्ध में वह पुरी और गिरि के ऋणसूत्र में निबद्ध थे इनके अतिरिक्त कृष्णशास्त्री और काशीस्थ काकाराम और राजाराम शास्त्री प्रभृति सुपण्डितों के साथ भी उनका वार्तालाप और परिचय हो गया था, और उन्होंने कृष्णशास्त्री से तो कुछ दिन तक विद्यार्थीरूप से व्याकरण की शिक्षा पाई थी।‡

‡ पण्डितवर ज्वालादत्त शर्म्मा ने हमसे कहा कि दयानन्द ने काशी के रामनिरञ्जन शास्त्री से कुछ काल तक कौमदी और न्यायशास्त्र पढ़ा था। परन्तु किस समय पढ़ा था यह निरूपण करना कठिन है। उपर्युक्त समय में अर्थात् जिस समय वह नाना स्थानों में भ्रमण करते थे उस समय में वह काशी में बारह दिन से अधिक नहीं रहे थे। विशेषतः उस समय में काशी में अध्ययन करने का कोई उल्लेख भी नहीं है। उससे पहिले अर्थात् जब वह बड़ौदा के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

व्याकरण पढ़ने के भिन्न वह उस समय अन्याअन्य ग्रन्थों की आलोचना में भी रत रहते थे। परमानन्द परमहंस से वेदान्त पढ़ने का विषय पहिले ही कहा जा चुका है। इसके अतिरिक्त जब वह टिहरी में ठहरे हुए थे, तो वहां के राजपण्डितविशेष से तन्त्रग्रन्थों को लेकर पाठ करते थे। किन्तु उस पाठ से तन्त्रों में उनकी उलटी अश्रद्धा उत्पन्न हो गई थी; क्योंकि थोड़े ही पाठ करने से उन्होंने उनके भीतर भाषागत, भाष्यगत और अर्थगत अनेकानेक अशुद्धि देख ली थीं। विशेषतः उनका अधिकाँश असंगतिदोष से दूषित था और उनके बीच में नितान्त निन्दनीय पापाचारों की परम पवित्र धर्म्म में गणना देखकर उन्होंने असीम घृणा के साथ तन्त्रपाठ का परित्याग कर दिया। यह बात विलक्षण रूप से विदित होती है कि दर्शनशास्त्र, योगशास्त्र और अन्यान्य विषयों के ग्रन्थ सर्वदा ही उनके साथ रहते थे और उनका अवकाशकाल ग्रन्थपाठ और योगाभ्यास में अतिवाहित होता था। दयानन्द कैसे ज्ञानाभिलाषी और सत्यानुरागी थे—यह उस समय की एक घटना से विशेष रूप से जाना जाता है। वह जिस समय मुरादाबाद से गढ़मुक्तेश्वर होते हुए गङ्गा के तटवर्ती प्रदेशों में भ्रमण करते थे, उस समय उनके पास हठप्रदीपिका, योगबीज और शिवसन्ध्या प्रभृति कई ग्रन्थ थे। उन्होंने उनमें से एक योगविषयक पुस्तक में नाड़ीचक्र का वृत्तान्त पढ़ा। प्रकृतपक्ष में मनुष्य के देह में नाड़ीचक्र होता है वा नहीं इसके जानने के लिये दयानन्द उत्कण्ठित हुए। फलतः इस विषय ने उनके मन में घोर संशय उत्पन्न किया। ऐसे समय में एक मनुष्य के मृत देह को बहते हुए देखकर वह गङ्गा में कूदकर जल में से उसे तट पर खींच लाये। उसके पश्चात् छुरी से उस शव को उत्तम रूप से

चैतन्यमठ में रहते थे, उस समय वहां से एक वार काशीयात्रा की कथा का उल्लेख है। अस्तु। उस समय अथवा चण्डालगढ़ से नर्मदाप्रदेश को जाने से पीछे और मथुरा आने से पहिले किसी न किसी समय में काशी में जाकर रामनिरञ्जन से अध्ययन करना सम्भव हो सकता है। रामनिरञ्जन गौड़स्वामी की गद्दी पर अधिष्ठित थे। अब उस गद्दी पर विशुद्धानन्द‡ हैं।

---

‡ जिस समय यह ग्रन्थ बङ्गला में छपा था, उस समय स्वामी विशुद्धानन्द जीवित थे। परन्तु अब उक्त स्वामीजी का देहपात हो गया है। (अनुवादक)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चीरा; जिस ग्रन्थ में नाड़ीचक्र के विषय का वर्णन था उस ग्रन्थ को खोलकर सामने रखा; और वर्णन के अनुसार चिरे हुए शव के अङ्ग अवयवादि को एक-एक करके मिलाने लगे। परन्तु उसके किसी अंश में ग्रन्थोल्लिखित नाड़ीचक्र का कुछ भी चिन्ह न पाकर शव को फेंकने के साथ ही उस ग्रन्थ को भी फाड़ कर गंगा में बहा दिया।

बहुत से स्थानों में पर्यटन करने और बहुत से साधु-संन्यासियों के सत्सङ्ग से उन्होंने जैसे योगविषयक नूतनतर तत्त्वों को जान लिया था, वैसे ही उन्होंने यह भी समझ लिया था कि उन तत्त्वों को कार्य में परिणत करने के निमित्त योगाभ्यास में अधिक समय लगाना आवश्यक है; क्योंकि कोई भी ज्ञान श्रुत हो वा पठित अभ्यास वा अनुशीलन के विना कार्यकर नहीं हो सकता। सुतरां दयानन्द की योगचर्य्या का समय दिन प्रतिदिन दीर्घतर होने लगा। इसी हेतु उनका आहारादि कार्य भी समय पर नहीं होने पाता था। विशेषतः योगाभ्यास में अपेक्षया हलका भोजन ही सुविधाजनक होता है, इसलिये दयानन्द केवल दुग्धपान करके ही देह की रक्षा करने लगे। उस समय उन्हें भाङ्ग सेवन का अभ्यास भी हो गया था। यह अभ्यास संन्यासि सम्प्रदाय में विशेष रूप से प्रचलित है। उन्हें साधु-संन्यासियों के साथ प्रायः सर्वदा ही रहना होता था। इसलिये यह सहज में ही समझ में आ जाता है कि उनका यह अभ्यास संसर्गजनित था। फलतः वह इस दोषावह अभ्यास के कारण दुखित थे और सम्भवतः उन्होंने शीघ्र ही उसका परित्याग कर दिया था, क्योंकि उनके भविष्य जीवन के किसी स्थल में भी ऐसे अभ्यास का तनिक भी चिन्ह देखने में नहीं आता। भाङ्ग कैसी मादकता उत्पन्न करने वाली है—इसके कहने की आवश्यकता नहीं है। दयानन्द ने एक बार भाङ्ग से उत्पन्न हुई मादकता को एक अद्भुत उपाय से दूर किया था। वह उपाय सर्व प्रकार से ही कौतुकपूर्ण है। इसलिये हम तत्सम्बधी कथा को यहां उद्धृत करते हैं। उन्होने कहा है, "चण्डालगढ़ के पास किसी ग्राम के एक शिवालय में मैं एक दिन रात्रियापन के लिये गया। भाङ्ग से उत्पन्न हुई मादकता के वश से मैं वहाँ गहरी नींद से सो गया। मेरे विवाह के सम्बन्ध में पार्वती के साथ महादेव की बातचीत होती है-इस प्रकार का एक स्वप्न देखकर मैं जाग पड़ा। उस समय वृष्टि हो रही थी, इसलिये मन्दिर के बराम्दे में बैठ गया। वहां वृषदेवता नन्दी की एक प्रकाण्ड मूर्ति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गया। सहसा नन्दी की मूर्ति के भीतर दृष्टिपात करने से मैंने जाना कि उसमें एक मनुष्य बैठा हुआ है। उसकी ओर मेरे हाथ फैलाने से ही वह व्यक्ति कूद कर भाग गया, मैं तब उस शून्यगर्भ मूर्ति के भीतर बैठ कर शेष रात्रि तक सोता रहा। प्रातःकाल एक वृद्धा वृषदेवता की पूजा के लिये आई। मैं उस समय वृषदेवता के भीतर ही बैठा हुआ था। कुछ देर पीछे वह वृद्धा स्त्री दही और गुड़ लेकर आई और मुझको ही वृषदेवता समझ कर लाया हुआ गुड़ और दही मेरे सामने रख दिया। मैं भी उस समय क्षुधार्त्त हो गया था। इसलिये मैं उस सबको ही खा गया। विशेषतः अम्लरसविशिष्ट दही के पीने से भाङ्ग की मादकता भी दूर हो गई।"

दयानन्द ने इस प्रकार प्रायः सारी भारतभूमि में भ्रमण किया। किसी-किसी स्थान में वह एक से अधिक बार भी गये। किसी स्थान में कुछ दिन ठहरे भी। अभिप्राय यह है कि अपनी वाञ्छित वस्तु के उद्देश्य में सैकड़ों बाधा और सहस्रों प्रतिकूलताओं से भी वह अणुमात्र भी विचलित नहीं हुए। उसके निमित्त वह हिमाचल के बर्फ से ढके हुए दुर्गम मार्गों में पर्यटन करने में भी कुण्ठित नहीं हुए, नर्मदा प्रदेश के घने जंगलों को भी पार करने से भी नहीं हिचकिचाए, जंगली सूअर के आक्रमण करने को उद्यत होने पर भी भग्नोद्यम नहीं हुए, अलखनन्दा की तुषाराकीर्ण तीरभूमि में मृतकल्प होने पर भी प्राणत्याग नहीं किया, और अन्त में अखीमठ की महन्तपदवीरूप प्रबल प्रलोभन के देखने पर भी एक क्षण के लिये भी मार्ग से परिच्युत नहीं हुए। दयानन्द अपनी खोज में अटल और ज्ञानपिपासा में अविचलित रहते हुए इस प्रकार से प्रायः १२ वर्ष बिता करके १८५८ किंवा १८५९ ईस्वी में मथुरा में आकर पहुंचे।

———

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तीसरा अध्याय

विरजानन्द का पूर्व परिचय,—ऋषिप्रणीत और मनुष्यप्रणीत ग्रन्थ,—सार्वभौमिक सभा स्थापन करने का प्रस्ताव,-दयानन्द का अध्ययन,—अमरलाल,—आगरा में निवास;—ग्वालियर प्रभृति में भ्रमण और मतमतान्तर का खण्डन,–संशय-निराकरण,-हरिद्वार-गमन,-पताका-उत्तालन,-मौनव्रतधारण, स्थिर सङ्कल्प वा शेष सिद्धान्त।

पिछले पृष्ठों में जिन महापुरुष का वर्णन दिया गया है उनका नाम स्वामी विरजानन्द था। विरजानन्द ने पञ्जाब के अन्तर्गत कर्तारपुर के पास किसी ग्राम में जन्म ग्रहण किया था। ऐसा प्रसिद्ध है कि उनका जन्म-ग्राम बोई नदी के तीर पर है। वह सारस्वत ब्राह्मण थे; विशेषतः सारस्वत ब्राह्मणों की शारद-शाखा के अन्तर्गत थे। विरजानन्द भारद्वाज गोत्री थे उनके पिता नारायणदत्त नाम से परिचित थे। विरजानन्द नेत्रहीन थे—वह एक प्रकार से जन्मान्ध ही थे। जब उनकी आयु पांच वर्ष की थी, तब सांघातिक शीतला रोग से उनकी दोनों आंखें नष्ट हो गई थीं। चक्षुहीन होने के पश्चात् दश-ग्यारह वर्ष तक घर रहे। उसके उपरान्त उनका घर में रहना सम्भव नहीं हुआ, क्योंकि माता-पिता के वियोग के पश्चात् वह अपने बन्धुवर्ग के हाथों से ऐसे पीड़ित हुए कि उनको शीघ्र ही घर छोड़ना पड़ा। विरजानन्द ने घर छोड़ने पर हिमाचल के अन्तर्गत हृषीकेश को गमन किया। सम्भवतः वह उसी समय परमहंस व्रतावलम्बी हो गये। वहां अधिकतर समय गङ्गा के जल में निमज्जित होकर गायत्री मन्त्र के जपने में लगाते थे। ऐसी अवस्था में

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उनका एक वर्ष अतिवाहित हो गया। इस बीच में स्वप्नावस्था में किसी ने उनसे कहा कि "तुम्हारा जो कुछ होना था वह हो गया, अब तुम यहां से चले जाओ।" विरजानन्द उसको दैववाणी समझ कर हृषीकेश से कनखल चले आये। कनखल में पूर्णाश्रम स्वामी नाम के एक ज्ञानापन्न संन्यासी रहते थे। विरजानन्द ने पूर्णाश्रम से षड्लिङ्गादि पढ़ा। किम्बहुना, गृहस्थिति के समय उन्होंने लघुकौमुदी आदि पढ़ ली थी। पूर्णाश्रम से पाठ समाप्त करके वह गया, काशी, प्रयाग प्रभृति तीर्थों में भ्रमण करने के लिये बाहर निकले। तत्पश्चात् एटा जिला के अन्तर्गत सोरों वा शूकर क्षेत्र‡ नामक स्थान में आये।

विरजानन्द एक दिन सोरों में गङ्गा स्नान करके विष्णुस्तोत्र की आवृत्ति कर रहे थे कि इतने में वहां अलवराधिपति महाराज विनयसिंह उपस्थित हुए। उनके विष्णुस्तोत्र के पाठ को सुनकर ही अथवा उनकी तेजःप्रतिभा-प्रकाशक मूर्ति को देखकर ही विनयसिंह विरजानन्द की ओर आकृष्ट हो गये और उनको अलवर ले जाने के निमित्त अनुरोध किया। विरजानन्द अलवराधि-पति के अनुरोध पर बोले कि यदि हमसे पढ़ने की इच्छा रखते हो तो तुम्हारे साथ चल सकते हैं। विनयसिंह इस बात से सहमत और सन्तुष्ट होकर विरजा-नन्द को अलवर लिवा ले गये। अलवर में उनके भोजन और निवास का प्रबन्ध हो गया। आहार्य्य सामग्री के अतिरिक्त उनके अन्यान्य व्यय के लिये राजभण्डार से प्रतिदिन दो रुपये आने लगे। महाराज विनयसिंह स्वामी जी से प्रतिदिन ३ घण्टा अध्ययन करते थे। इसके अतिरिक्त राज्य सम्बन्धी किसी गुरुतर विषय के उपस्थित होने पर महाराज विरजानन्द से सम्मति भी लिया करते थे। अलवर नरेश का अध्ययन कार्य राजप्रासाद में ही होता था। इस कारण विरजानन्द प्रतिदिन नियत समय पर राजप्रासाद में ही चले जाते थे। एक दिन नियत समय पर जाकर उन्हें विदित हुआ कि महाराज उपस्थित

‡ यह स्थान शूकरक्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है। कारण यह कि ऐसी किंवदन्ती है कि इस स्थान में परमेश्वर ने वराहावतार धारण किया था, इसी-लिये यहां वराह मन्दिर बना हुआ है। यह बात सहज में ही समझ में आ जाती है कि सोरों शूकरक्षेत्र का अपभ्रंश है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नहीं है। सम्भवतः वह उस समय किसी राज्य कार्य में लगे हुए थे, ‡ परन्तु विरजानन्द उससे बहुत विरक्त हुए और विरक्त होकर अपनी ग्रन्थादि सम्पत्ति को वहीं छोड़ कर अन्त में अलवर से फिर सोरों चले आये। वहां कुछ दिन रह कर मथुरा के पास मुरसान के राजा के यहां चले गये और वहां से राजा बलवन्तसिंह के अनुरोध से भरतपुर चले गये। विरजानन्द वहां छः सात मास रह कर फिर सोरों चले आये, और फिर सोरों से मथुरा चले गये। मथुरा में वे सम्भवतः ३२ वर्ष रहे। वे ९१ वर्ष की आयु तक जीवित रहे। उनका मृत्यु दिवस सन् १८६८ ईस्वी में आश्विन वदि १३ सोमवार है। ऐसा प्रसिद्ध है कि विरजानन्द ने अपने मृत्यु दिवस का संवाद एक पक्ष पहिले ही अपने शिष्यों से कह दिया था।

विरजानन्द की प्रतिभा और उद्भाविनी शक्ति असाधारण थी और उनकी स्मृति-शक्ति अत्यन्त तीव्र थी। किसी अपरिज्ञात श्लोक वा सूत्र को एक वार वा अधिक से अधिक दो वार बोलने पर ही विरजानन्द उसको कण्ठस्थ कर लेते थे। इसलिये चक्षुर्हीन होने पर भी अथवा अध्यापक के पास अध्ययन करने की सुविधा न होने पर भी वह सब शास्त्रों के विषय में एक असाधारण पण्डित कह कर परिगणित होते थे। उनकी सुशाणित बुद्धि शास्त्र के भीतर ऐसी प्रविष्ट थी, उनकी समुज्ज्वला स्मृति शास्त्र के अर्थों को ऐसी स्वायत्त कर लेती थी और उनकी अनुपम उद्भाविनी शक्ति शास्त्र के भीतर से ऐसे गूढ़ अर्थ का आविष्कार कर सकती थी कि जब कभी कोई किसी शास्त्र के प्रसंग को उत्थापित करता, तो विरजानन्द तत्क्षण उसकी सुन्दर और समीचीन मीमांसा कर देते। फलतः विरजानन्द एक असाधारण ज्ञानी और निष्कपट साधु के रूप में भारत के पश्चिमाञ्चल के प्रायः सब ही स्थानों में प्रसिद्ध थे।

रेलवे स्टेशन से यमुना के विश्राम घाट तक जो राजपथ जाता है विरजानन्द उसी प्रशस्त राजपथ के एक ओर एक छोटी अट्टालिका में रहते थे। उनके आहारादि के व्यय के लिये अलवर नरेश विनयसिंह और जयपुराधीश रामसिंह बीच-बीच में सहायता भेजते रहते थे। इसके अतिरिक्त उनके पाण्डित्य

‡ कोई-कोई यह कहते हैं कि महाराज उस समय वेश्याओं के साथ कालयापन कर रहे थे; इसी कारण विरजानन्द अत्यन्त कुपित होकर अलवर छोड़ कर चले आये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और परमार्थपरायणता के कारण अन्यान्य लोग भी अपनी इच्छा से कभी-कभी कुछ दान कर दिया करते थे। विरजानन्द अधिकांश में फलाहार वा दुग्धपान करके ही शरीर रक्षा किया करते थे। किसी-किसी दिन अन्नाहार के इच्छुक होते थे। योगिगण प्रायः ही अल्पनिद्र होते हैं। इसी कारण विरजानन्द किसी दिन दो घण्टे से अधिक निद्रित नहीं रहते थे। रात में एक घड़ी वा दो घड़ी सोकर ब्राह्ममुहूर्त्त में शय्यात्याग करके प्रातः कृत्य से निमट जाते थे। उसके पश्चात् स्नान करके सूर्योदय तक प्राणायाम और ध्यान में नियुक्त रहते थे। प्रातःकाल से दोपहर तक अध्यापन कार्य में प्रवृत्त रहते थे। तदनन्तर कुछ देर तक विश्राम करके दो घड़ी पीछे अपराह्ण तक फिर विद्यार्थियों को शिक्षाप्रदान करते थे। किसी-किसी दिन सन्ध्या के पश्चात् भी कुछ समय तक समान उत्साह और समान अनुराग के साथ अध्यापन में नियुक्त होते थे। परन्तु प्रतिदिन सायंकाल के स्नान के पश्चात् फिर ध्यान धारणा में निमग्न हो जाते थे। इसी प्रकार से मथुरा में विरजानन्द के दिन अतिवाहित होते थे। वह परमोत्साह और अकृत्रिम अनुराग के साथ अध्यापन कार्य को सम्पादित करते थे। फलतः ज्ञान के प्रति उनकी गाढ़ ममता थी और ज्ञानालोचना वा ज्ञानप्रसङ्ग में उनकी यथार्थ प्रीति का उदय होता था—यह अध्यापन के अतिरिक्त उनके अन्यान्य कार्य्यों से भी विदित होता है। एक वार सिद्धान्तकौमुदी के सूत्रविशेष को लेकर रङ्गाचारी ‡ के साथ उनका विलक्षण विचार हुआ। रङ्गाचारी उस

---

‡ रङ्गाचारी श्रीसम्प्रदाय के वैष्णव थे। श्रीसम्प्रदाय रामानुज का चलाया हुआ है। वृन्दावन के पास गोवर्धन में श्रीवैष्णवों का एक मन्दिर था। उस मन्दिर के अध्यक्ष श्रीनिवासाचारी नामक एक वैष्णव साधु थे। श्रीनिवासाचारी के प्रयत्न से वृन्दावन के अञ्चल में रामानुज का मत बहुत कुछ प्रचारित हुआ। रङ्गाचारी श्रीनिवासाचारी के रसोइया थे और उनसे अध्ययन भी करते थे। रङ्गाचारी क्रमशः श्रीनिवासाचारी के प्रियपात्र हो गये। मरते समय श्रीनिवासाचारी गोवर्धन के मन्दिर की अध्यक्षता रङ्गाचारी को दे गये। यह बात स्यात् सब ही जानते हैं कि मथुरा का प्रसिद्ध सेटवंश पहिले जैनमतालम्बी था। Hon'ble लक्ष्मणदास सेठ के पिता राधाकृष्णदास धर्मानुरागी व्यक्ति थे। जैन मत से सन्तुष्ट न हो सकने पर उन्होंने नाना मत की आलोचना की और अन्त में रङ्गाचारी से दीक्षा ग्रहण कर ली। राधाकृष्ण के कनिष्ठ भ्राता रङ्गाचारी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सूत्र की व्याख्या सप्तमीतत्पुरुष के पक्ष में करते थे, परन्तु विरजानन्द पाणिनि के "कर्तृ कर्मणोः कृति" सूत्र का अवलम्बन करके उसकी व्याख्या षष्ठी-तत्पुरुष समास कह कर करने लगे। इस विचारव्यापार को लेकर मथुरा और वृन्दावन में आन्दोलन उपस्थित हो गया। इसकी मीमांसा के लिये रङ्गाचारी के अध्यापक तक बुलाये गये। परन्तु उनकी अनुपस्थिति के कारण अन्त में मीमांसा का भार काशीस्थ पण्डितमण्डली के ऊपर समर्पित किया गया। रङ्गाचारी के पास धनाभाव नहीं था, क्योंकि मथुरा के अतुलय ऐश्वर्यपति सेठ उनके शिष्य और सेवक थे। सुतरां काशीस्थ पण्डितों की सम्मतिक्रय करने के लिये भी यथोचित चेष्टा होने लगी और चेष्टा सफल भी हो गई। काशी के पण्डितों ने रङ्गाचारी के अनुकूल ही सम्मति प्रकाशित कर दी। किन्तु विरजानन्द की प्रगाढ़ विद्वत्ता और उनकी अपूर्व तेजस्विता की कथा भी काशीस्थ पण्डितों को अवगत थी, इसलिये यह सोच कर कि किसी के प्रति-कूल सम्मति प्रकाश करना आपत्तिशून्य नहीं है उन्होंने विरजानन्द को लिख-

---

के शिष्य हो गये; परन्तु उनके ज्येष्ठ भ्राता पहिले के समान जैनमतावलम्बी ही रहे। राधाकृष्ण और उनके कनिष्ठ भ्राता ने पहिले पहल सन् १८४३ ई० में तीन लाख रुपये व्यय करके वृन्दावन में एक मन्दिर बनवा कर उसकी गद्दी पर गुरु रङ्गाचारी को प्रतिष्ठित किया किन्तु वह मन्दिर छोटा था और मनोमत नहीं हुआ। तब ४५ लाख रुपया व्यय करके एक दूसरा मन्दिर बनवाया—वही मन्दिर अब वृन्दावन के सेठ जी के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। इस मन्दिर के बनने में दस वर्ष लगे। इस मन्दिर को मद्रास के शिल्पिगण ने बनाया। मन्दिर के निर्माण और मूर्ति के अलङ्कारादि में प्रायः १ करोड़ व्यय हुआ है। मन्दिर के निर्मित होने पर देवसेवादि के व्यय के लिये साठ सहस्र रुपये वार्षिक आय की सम्पत्ति का दानपत्र लिख दिया। इस मन्दिर और मन्दिर की यावतीय सम्पत्ति और उप सत्व के विषय में एक और दान पत्र लिख कर सन् १८५६ ई० में रङ्गाचारी के अर्पण कर दिया। रङ्गाचारी के पुत्र श्रीनिवासाचारी के चरित्र के दूषित हो जाने के कारण मंदिर और तत्सम्बंधी समस्त सम्पत्ति ट्रस्टियों के हाथों में सौंप दी गई है। नारायणदास इस मंदिर के एक कार्यनिर्वाहक ट्रस्टी थे। उनकी कथा पीछे लिखी जायगी। पूर्वोक्त गोवर्धन का मंदिर अब वृन्दावन के सेठ जी के मंदिर की शाखा ही परिगणित होता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर भेज दिया कि उपस्थित विषय में आपकी मीमांसा ही यथार्थ है; किन्तु हम अनन्योपाय है। इस हेतु इससे पहले ही हमने रङ्गाचारी के पक्ष का समर्थन किया है।

इस घटना के पश्चात् से ही विरजानन्द शेखर, कौमुदी, मनोरमा प्रभृति आधुनिक व्याकरणों के प्रति अधिकतर वीतश्रद्ध हो गये। पक्षान्तर में पाणिनी की प्रामाणिकता को ही सर्वोपरि स्वीकार करने लगे। फलतः पाणिनी की अष्टाध्यायी ही व्याकरण विषयक सर्वोच्च ग्रन्थ है— यह विश्वास विरजानन्द के हृदय में पहिले से ही बद्धमूल था; उपस्थित घटना से यह विश्वास केवल गाढ़तर हो गया। वह जैसे शेखर आदि आधुनिक व्याकरणों के प्रति आस्थावान् नहीं थे, वैसे ही पुराण-भागवतादि आधुनिक शास्त्रों की प्रामाणिक्ता को भी स्वीकार नहीं करते थे। वह भागवत को एक सर्वथा कल्पनाकल्पित पुस्तक कह कर निर्भयता से प्रचार करते थे। विराजानन्द वेद और वेदानुकूल ग्रन्थ के अतिरिक्त और किसी ग्रन्थ के प्रति पहिले से ही आस्थापरायण नहीं थे। उनके निकट मनुष्यप्रणीत कोई ग्रन्थ भी प्रामाणिक कह कर परिगृहीत नहीं होता था। उनकी प्रतिभा ऐसी मर्म-स्पर्शिनी थी कि किसी पुस्तक की दो एक कथा वा श्लोक के उच्चारण करने से ही वह तत्क्षण ही यह कह देते थे कि वह पुस्तक मनुष्यप्रणीत है वा ऋषि-प्रणीत। यहां तक की यदि कोई व्यक्ति विद्यार्थी रूप से उनके पास आता, तो सबसे पहिले मनुष्यप्रणीत ग्रन्थों की कथा को विस्मरण करने के निमित्त ही उसको अनुरोध करते। इसलिये यह नूतन शास्त्रों के प्रचार के घोर प्रति-पक्षी थे। उनका विश्वास था कि इस लोक में आर्षग्रन्थों के अधीत और आलोचित होने से ही मनुष्यों का यथार्थ मङ्गल साधित होगा। विशेषतः उनका विचार था कि मनुष्यप्रणीत ग्रन्थों के प्रचार वा आलोचना होने से अल्पबुद्धि लोग आर्षग्रन्थों के अध्ययन में प्रवृत नहीं होंगे। इसी कारण एक ओर आर्षग्रन्थों की प्रतिष्ठा और दूसरी ओर अनार्षग्रन्थों की अप्रति-ष्ठासाधन विराजानन्द के जीवन का एक विशेष व्रत था। विरजानन्द ने स्वयं शेखरादिका खण्डन करके 'वाक्यमीमांसा' नामक एक पुस्तक की रचना की थी। इसके अतिरिक्त पाणिनि के प्रायः अर्द्ध भाग का एक भाष्य भी प्रस्तुत किया था। परन्तु मनुष्यसमाज में पीछे उनका ग्रन्थ प्रचारित हो जाय और उनके रचितभाष्य के विद्यमान रहने से पीछे मूलग्रन्थ के पाठ में मनुष्यों

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

की प्रवृत्ति का उद्रेक न हो—इस विचार से उन्होंने स्वरचित पाणिनिभाष्य को यमुनाजल में फेंक देने के लिए एक विद्यार्थी विशेष को आज्ञा दी। परन्तु उस विद्यार्थी ने बहुमूल्यवान् विचार उसे फेंका नहीं; किंतु अपने पास रख लिया और यह कहकर कि मैं फेंक आया आचार्य्य को सन्तुष्ट कर दिया। पूर्वोल्लिखित 'वाक्यमीमांसा' की भी ऐसी ही अवस्था हुई थी।

वह भी पाणिनिभाष्य के समान ही एक शिष्यविशेष के घर में सुरक्षित है। इससे सहज में ही यह पता लगता है कि विरजानन्द अनार्षग्रन्थों के प्रचार के अत्यन्त विरुद्ध थे।

विरजानन्द श्रुतिप्रतिपादित धर्म के पक्षपाती थे। जो धर्म श्रुतिप्रतिपादित नहीं होता था, प्रत्युत श्रुतिप्रतिकूल होता था, विरजानन्द उसको सनातन धर्म स्वीकार नहीं करते थे। श्रुतिप्रतिपादित धर्म के प्रतिष्ठित होने से एकता का सञ्चार होगा, साम्प्रदायिक झगड़े समाप्त होंगे और अल्पज्ञ मनुष्य के बनाए शास्त्रों और पुराणों के कारण उत्पन्न अनेकों भ्रान्तियाँ समाप्त हो जाएँगी ऐसा सोचकर विरजानन्द उसकी प्रतिष्ठा के लिये उत्सुक हुए थे। किन्तु वह नेत्रहीन थे; विशेषतः वार्द्धक्य के कारण किसी प्रकार का मेहनत का कार्य सम्पादन में एक प्रकार से असमर्थ थे। इसी हेतु से जब एक बार जयपुराधिपति महाराजा रामसिंह आगरे में उपस्थित हुए, तो विरजानन्द ने उनके पास जाकर एक सार्वभौमिक सभा के स्थापन करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। किम्बहुना, रामसिंह की प्रकृति बहुत कुछ राजन्योचित थी; उनके चरित्र और आचरण में पूर्वतन हिन्दु राजाओं का कुछ आभास झलकता था; इसलिये उनसे पूर्वोल्लिखित प्रस्ताव करना किसी अंश में प्रसङ्गत वा अविहित नहीं था। सार्वभौमिक सभा का उद्देश्य अति महान् और सर्वतोभावेन देशहितकर था। इसके अतिरिक्त वह जातीय प्रकृति के अनरूप था। विरजानन्द ने तेजस्विता के साथ महाराजा रामसिंह से कहा, "आप सार्वभौमिक सभा के क्षेत्र में भारतवर्ष की पण्डितमण्डली को बुलाइए, देश के नाना सम्प्रदायस्थ धर्म्माचार्य्यों को और उसी के साथ दर्शकरूप से सभास्थल को अलंकृत करने के लिये भारतवर्षीय राजाओं को निमन्त्रण दीजिये। मैं उस महती सभा में सब मनुष्यों के सामने शेखर कौमुदी प्रभृति का खण्डन करूंगा, भागवतादि पुराण की असारता और अशास्त्रीयता प्रतिपाद करूंगा, वैदिक धर्म्म को ही सत्य और सनातन धर्म्म सिद्ध करूंगा, और अन्त में धर्म्म के रक्षक-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रूप से विजयपत्र प्रदान करके आपके राजनाम को सार्थक करूंगा।" फलतः भारतवर्ष में वैदिक धर्म्म की प्रतिष्ठा ही सार्वभौमिक सभा के स्थापना का उद्देश्य था। रामसिंह ने सार्वभौमिक सभा की आवश्यकता को विलक्षण रूप से समझ लिया और उस वृद्ध पुरुष के परामर्श के अनुसार उक्त प्रस्ताव को कार्य्य में परिणत करने के निमित्त भी सङ्कल्प कर लिया। उस महती सभा के सब प्रकार के व्यय के लिये अनुमान से तीन लाख रुपये की आवश्यकता थी। महामति रामसिंह उस महान उद्देश्य पर तीन लाख रुपये व्यय करने में जरा भी नहीं सकुचाए किन्तु जब उन्होंने जयपुर लौटकर मन्त्रिवर्ग से यह सभा-सम्बन्धी बात कही, तो मन्त्रियों ने उन्हें ऐसा न करने की सलाह दी। विशेषतः वहां के पण्डितों ने इस सभा का उद्देश्य इस प्रकार से राजा के समक्ष रखा कि अन्त में उन्होंने उसको परित्याग करना ही युक्तियुक्त समझा। इस प्रकार के क्षत्रियों के अनुचित आचरण से विरजानन्द रामसिंह से भी विरक्त हो गये और उसके पश्चात् अन्यान्य कतिपय राजाओं से भी पूर्वोल्लिखित प्रस्ताव किया। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने महाराणी विक्टोरिया के पास भी यह सार्वभौमिक सभा का प्रस्ताव भेजा था। फलतः विरजानन्द स्वामी का यह परम हितकर प्रस्ताव प्रस्तावमात्र ही रहा; कार्य्यरूप से उसका कुछ भी न बना या बन सका।

दयानन्द के साथ स्वामी विरजानन्द का अति निकट सम्बन्ध है। शोणितसम्बन्ध के न होने पर भी वह शोणितसम्बन्ध की अपेक्षा अधिक निकटतर है। पुत्र की प्रकृति के भीतर जैसे पिता प्रच्छिन्न भाव से विद्यमान रहता है, शिष्य की प्रकृति के भीतर वैसे ही आचार्य्य भी गूढ़ भाव से अधिष्ठित रहता है। सुतरां आचार्य्य-शिष्य का सम्बन्ध पिता पुत्र के सम्बन्ध की न्याई सर्व प्रकार से ही अविच्छिन्न होता है। उपस्थित उदाहरण में आचार्य्य की शक्ति शिष्य के चरित्र में इतनी व्याप्त हो गयी थी कि आचार्य्य के चित्त को सम्यक् रूप से चित्रित किये बिना शिष्य के चरित्र को पहिचानना और समझना एक प्रकार से असम्भव है। इसीलिए हमने पाठकों को स्वामी विरजानन्द का विशेष परिचय दिलाया है‡ फलतः दयानन्द रूप जिस प्रदीप्त वह्नि ने इस देश को

‡ विरजानन्द स्वामी की जीवनी के विषय में यहां जो कुछ लिखा गया है वह प्रायः सब ही मथुरावासी पं० युगुलकिशोर शास्त्री से संगृहीत किया है। पं० युगुलकिशोर ने विरजानन्द के पास बहुत दिन तक अध्ययन किया था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कुसंस्कार राशि को भस्मीभूत किया है, दयानन्द रूप जो महाप्रवाह भारत के अपधर्म्म को प्रवाहित कर देने के लिए निकला हुआ है, अथवा दयानन्द रूप जिस महीयसी प्रतिभा ने सायणमहीधरादि भारतीय वेदविख्याताओं को विखण्डित कर के वैदिक ऋषियों के माहात्म्य को सर्वोपरि संस्थापित किया है, विरजानन्द की शिक्षा और संसर्ग ही उस प्रदीप्त वह्निका स्फुलिंगस्वरूप था, उस महाप्रवाह का निर्झरवारिस्वरूप था, उस महीयसी प्रतिभा का प्राणस्वरूप था—इसके और विस्तार से कहने की आवश्यकता नहीं है। सारांश यह है कि विरजानन्द के समान श्रुतिधर, विरजानन्द के श्रुतिधर पण्डित, विरजानन्द के समान ब्राह्मण, विरजानन्द के समान वेदप्राण ब्राह्मण, विरजानन्द के समान संन्यासी, विरजानन्द के समान सत्यसङ्कल्प संन्यासी भारतभूमि में बहुत ही न्यून अभ्युदित हुए हैं—यह कहने में हमें अणुमात्र भी सङ्कोच नहीं होता। जो लोग यह समझते हैं कि आर्य्यजाति की गरीयसी प्रतिभा निर्वापित हो गई है, अथवा जो लोग यह विचार रखते हैं कि व्यास-वशिष्ठ के वंशधर विद्या और बुद्धि-शालिता के विषय में सर्वथा अधःपतित हो गये हैं, हम उनको स्वामी विरजा-नन्द के विषय में आलोचना करने का आग्रह के साथ अनुरोध करते हैं।

जब दयानन्द मथुरा में आये, तब उनकी आयु ३४ वा ३५ वर्ष की थी। स्वामी जी की आयु भी उस समय ८१ वर्ष की होगी। दयानन्द सम्भवतः वैशाख वा ज्येष्ठ मास में मथुरा आये थे। उस समय सारा पश्चिमाञ्चल ही ग्रीष्म ऋतु की भयंकर गर्मी में तप रहा था; विशेषतः सिपाही विद्रोह से उत्पन्न अशान्ति और अराजकता भी स्थान-स्थान में राज्य कर रही थी, और उसी समय दारुण दुर्भिक्ष से उस प्रदेश के अनेक लोग अन्नकष्ट से भी क्लेश पा रहे थे। अस्तु। मथुरागत दयानन्द कई दिन रङ्गेश्वर के मन्दिर में ठहर फिर एक दिन विरजानन्द के पास गये। दयानन्द उस समय संन्यासी के वेष से सज्जित थे। उनके ललाट पर भस्मरेखा, कण्ठ में रुद्राक्ष की माला, शरीर पर गेरुवे वस्त्र और हाथ में कमण्डलु था। विरजानन्द अन्यान्य विद्यार्थियों से जिस प्रकार बोलते थे, समागत दयानन्द से भी वैसे ही बोले। उन्होंने कहा

इसके भिन्न वह दयानन्द के भी सहाध्यायी थे। हमारे विचार में विरजानन्द स्वामी का क्रमबद्ध जीवनचरित प्रकाशित करने की चेष्टा करना नितान्त आवश्यक है। इस विषय में आर्य्यसमाज को सचेष्ट होना उचित है, क्योंकि दयानन्द को समझने के लिये विरजानन्द को भी समझना आवश्यक है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"तुमने अब तक जो कुछ पढ़ा है उसके भीतर अधिक अंश मनुष्यरचित ग्रन्थों है। मनुष्यरचित ग्रन्थों का प्रभाव विद्यमान रहते हुए तुम्हारे हृदय में आ ग्रन्थों की महिमा और मर्म प्रविष्ट और प्रतिष्ठित नहीं हो सकते, इसलि तुम सम्पूर्ण अधीत विषय को विस्मरण करके और मनुष्यरचित ग्रन्थों को फें कर हमारे पास फिर से पाठ आरम्भ करो, और एक बात यह कि तुम भोज और स्थान का प्रबन्ध करके आओ, क्योंकि ऐसा न करने से निश्चिन्त चि से पाठ कार्य्य में प्रवृत्त नहीं हो सकोगे।"

दयानन्द ने उसके अनुसार भोजन और स्थान की व्यवस्था कर ली लक्ष्मीनारायण के मन्दिर के नीचे की एक कोठरी उनके रहने के लिये निर्दि हो गई। यह मन्दिर यमुना के विश्रामघाट‡ के उपरले भाग में स्थित है यह कोठरी मन्दिर के द्वार के पार्श्व में है। छोटी होने पर भी एक व्यक्ति रहने के लिए अत्युपयोगी थी।

घर के सामने ही प्राकृतिक सौन्दर्य की राशि प्रसारित थी, क्योंकि उसक पूर्वदिशा की खिड़की के पास खड़ा होने से ही यमुना की तरङ्गों वा श्यामल जलधारा दिखाई देती थी। इस प्रकार वास स्थान के निरूपति हो जा पर अमरलाल के घर में उनके भोजन का प्रबन्ध हो गया। अमरलाल मथु में ज्योतिषि-बाबा+ के नाम से प्रेसिद्ध थे। वह एक दयार्द्र-चित्त व्यक्ति थे

‡ यह कथा प्रचारित है कि श्रीकृष्ण कंसासुर का प्राणवध करके अत्यन परिश्रान्त हो गये थे, इसलिये कुछ देर तक विश्राम लेना उनको आवश्य हुआ। वह विश्राम लेने के लिये यमुना के तट के इसी स्थान पर उपवि हुए थे। अतः यह स्थान विश्रामघाट के नाम से प्रख्यात हो गया।

+ज्योतिर्विद्या में प्रसिद्ध होने के कारण अमरलाल को ज्योतिषी बा की उपाधि प्राप्त हुई थी। उनको यह उपाधि महाराजा सिंध्या ने दी थी महाराज सिंध्या ज्योतिष्शास्त्र के विषय में पारदर्शिता के कारण अमरलाल ऐसे प्रसन्न हुए कि उन्हें दश बारह ग्राम दान कर दिये। अमरलाल उन ग्राम की आय से प्रतिदिन ब्राह्मणभोजनादि जैसे सत्कार्य का अनुष्ठान किया कर थे। उनके घर प्रतिदिन प्रायः एक सौ ब्राह्मण भोजन करते थे। यहां एक य बात भी कह देना उचित है कि अमरलाल के घर भोजन की व्यवस्था होने पहिले दयानन्द दुर्गाप्रसाद नामक एक सदाशय खत्री के घर थोड़े दिन त भोजन पाते थे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यद्यपि अमरलाल गुजरात प्रदेश वासी थे; परन्तु मथुरा में ही बहुत दिनों से रहते थे। वह भी उदीच्य श्रेणी के ब्राह्मण थे। अपने देश और श्रेणी का देख कर और इसके अतिरिक्त विरजानन्द के पास अतीव बलवती पाठवासना को देखकर अमरलाल ने अपने घर दयानन्द के भोजन की व्यवस्था कर दी। केवल भोजन की ही व्यवस्था करके वह निश्चिन्त नहीं हुए, किन्तु समय २ पर आवश्यकतानुसार पुस्तकादि की भी सहायता करने लगे। इस विषय में दयानन्द ने कहा है, "भोजन और ग्रन्थादि के सम्बन्ध में मुक्तहस्त से सहायता करने के कारण मैं अमरलाल का अत्यन्त बाधित हूं। भोजन के विषय में वह इतने प्रयत्नवान् थे कि मेरे भोजन का प्रबन्ध किये बिना आप भोजन नहीं करते थे। वास्तव में वह महान् अन्तःकरण वाले व्यक्ति थे—इसमें कुछ संशय नहीं है।" अस्तु। इस प्रकार स्थान और भोजन की व्यवस्था करके दयानन्द विरजानन्द के पास आकर अध्ययन-कार्य्य में लग गए।

उच्चारण की शुद्धि पर विरजानन्द की तीव्र दृष्टि थी। उनके सामने कोई विद्यार्थी किसी शब्द वा श्लोक को अशुद्ध उच्चारण करके कभी छुटकारा नहीं पाता था। वास्तव में विरजानन्द के समान शुद्ध यथार्थ उच्चारण वाले व्यक्ति अध्यापक-सम्प्रदाय के भीतर बहुधा दृष्टिगत नहीं होते। यद्यपि दयानन्द ने इससे पहिले अनेक अध्यापकों के पास अध्ययन किया था, परन्तु तो भी उनका उच्चारणगत दोष सर्वथा दूर नहीं हुआ था। इसी कारण विरजानन्द के पास उनके पठन के बीच २ में अशुद्धि होने लगी। विरजानन्द उनके प्रतिकार के लिये उनको शिक्षा देने लगे। दयानन्द उनके पास पाणिनी और पाणिनी की अनुपम व्याख्या स्वरूप महाभाष्य के पाठ में प्रवृत हो गये। उसके पश्चात् उपनिषद्, मनुस्मृति, ब्रह्मसूत्र और पतञ्जलि के योगसूत्र प्रभृति दर्शन शास्त्रों को अध्ययन करने लगे। क्रमशः वेद और वेदाङ्गों के भी पाठ में प्रवृत्त हुए।

दयानन्द अपने आचार्य्य के अदृष्ट पूर्व प्रभाव को देखकर विमोहित होने लगे। उनके अपरिमित पाण्डित्य और अत्यन्त आश्चर्य्यमय धीशक्ति का परिचय पाकर वह विस्मित हो गये। उन्होंने अनेकानेक आचार्य्यों के पास अध्ययन किया था; परन्तु इससे पूर्व विरजानन्द के समान आचार्य्य और कहीं नहीं देखा था। सूर्य्यमण्डल से जैसे अविश्रान्त तेज की राशि निःसृत होती है, अथवा निर्झर से जैसे अनवरत जलधारा निर्झरित होती है, वैसे ही दयानन्द ने देखा कि विरजानन्द के वागिन्द्रिय से नाना शास्त्रों के नाना प्रसङ्ग अविरत

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रूप से विनिर्गत होकर शिष्यमण्डली को विमोहित करते हैं; और यह देखा कि वह चक्षुहीन होने पर भी अपनी प्रज्ञाचक्षु ‡ के द्वारा सब शास्त्रों के सब स्थानों को देखकर जिज्ञासित विषय को उत्तम रूप से सिद्ध कर देते हैं और विशेषतः यह देखा कि उनका देहयष्टि अस्थियों का पिञ्जर रह जाने पर भी वह युवकजन के समान उत्साह और तेजस्विता के साथ शास्त्र की व्याख्या में व्यस्त रहते हैं। इससे भी अधिक आश्चर्य्य का यह विषय था कि किसी ग्रंथ वा किसी ग्रंथ के पत्र को जन्म-काल से न देखने पर भी अपनी सर्वविषयग्राहिणी स्मृति शक्ति के प्रभाव से क्या व्याकरण शास्त्र, क्या साहित्यसंहिता, क्या वेदवेदांत, सब विद्याओं के सब प्रकार के तत्वों की एक एक बात को समझा देते थे। विरजानन्द के समान आचार्य्य जैसे दयानन्द ने कभी नहीं देखा था, वैसे ही दयानन्द के समान भी कोई शिष्य विरजानन्द के पास कभी नहीं आया था। सुतरां दयानन्द जिस प्रकार विरजानन्द को एक अनन्य असाधारण आचार्य्य समझने लगे, उसी प्रकार विरजानन्द भी दयानन्द को एक असाधारण शिष्य समझने लगे। फलतः यह आचार्य्य शिष्य का सम्मिलन दोनों के ही पक्ष में उत्साह और आनन्द का कारण हो गया था। विरजानन्द दयानन्द को 'कालजिह्व' कहा करते थे—कालजिह्व वह कि जिसकी जिह्वा काल के समान हो अर्थात् असत्य और भ्रांतिजाल के खण्ड में दयानन्द की जिह्वा काल के समान होगी यह उनके हृदयङ्गम हो गया। इसके अतिरिक्त वह उन्हें 'कुलङ्कर' नाम से पुकारा करते थे। दयानन्द विचारक्षेत्र में कुलङ्कर या खूंटे के समान अविचलित रह कर विरुद्ध पक्ष को पराभूत करेंगे—यह भी वह जान गये थे। पूर्वोल्लिखित वेदादि ग्रंथानुशीलन के भिन्न दयानन्द ने विरजानन्द से भागवतादि पुराण की खण्डन विषयक शिक्षा भी प्राप्त की थी। आर्षग्रंथ की क्या पहिचान है और अनार्ष वा मनुष्य रचित ग्रंथों का क्या लक्षण है उन्होंने यह विषय भी उनको विशेष रूप से समझा दिया था। मनुष्यरचित ग्रंथों के प्रभाव और प्रतिष्ठा के विद्यमान रहने से आर्षग्रंथ का अध्ययन और आदर आशानुरूप नहीं होगा—इस विषय की भी उन्होंने यथोचित शिक्षा प्रदान कर दी थी; और आर्षग्रंथों के अनध्ययन और

‡ दयानन्द विरजानन्द को प्रज्ञाचक्षु के नाम से अभिहित किया करते थे। उन्होंने अपने ग्रंथों के अनेक स्थलों में उन्हें प्रज्ञाचक्षु नाम से वर्णन किया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अनादर के हेतु ही भारत भूमि सैकड़ों प्रकार के साम्प्रदायिक धर्म में विभक्त हो गई है और भारत समाज सब प्रकार की आवर्जनाओं का अधिकरण हो गया है—इसको भी उन्होंने अपने प्यारे शिष्य के प्रसारित हृदय में विलक्षण रूप से अङ्कित कर दिया था। इसके अतिरिक्त विरजानन्द की चरित्र शक्ति दयानन्द के भीतर संक्रामित हो गई थी। महापुरुषों की इच्छा-शक्ति अति प्रबला होती है और वह इस प्रबला-शक्ति द्वारा अपने प्रभाव को दूसरों के भीतर प्रविष्ट कर सकते हैं—यह स्यात् सभी जानते हैं। परन्तु सभी आधारों में उनकी शक्ति संक्रामित हो जाती है ऐसा नहीं है। अस्तु। जिस प्रकार महादीप समीपस्थ छोटी-छोटी दीपावली को अधिकतर उद्भासित कर देता है उसी प्रकार विरजानन्द ने भी अपनी शक्ति और दीप्ति द्वारा दयानन्द की शक्ति और दीप्ति को द्विगुणित कर दिया था।

विरजानन्द शिष्यों से प्रायः सर्वदा ही कहा करते थे कि मैं अब जिस अग्नि को धूमाकार से तुम्हारे भीतर निविष्ट करता हूं समय पाकर वह महान् अग्नि में परिणित होकर भारत भूमि के भ्रान्तमत और भ्रान्तविश्वास रूप जञ्जालराशि को भस्मीभूत कर देगी। अधिक क्या, उसके द्वारा भारत क्षेत्र में वैदिक धर्म्म की विलुप्तप्रायः दीपशिखा पुनर्वार प्रदीप्त हो जायगी। विरजानन्द से निकला हुआ धूमजाल और किसी शिष्य के चरित्र में अग्नि उत्पादन कर सका—यह नहीं देखने में आता। तब उन के द्वारा दयानन्द की अन्तर्हित अग्नि अधिकतर प्रधूमित और घनीभूत हो गई; यहां तक कि उसने प्रलयाग्नि की पूर्व मूर्ति का शरीर धारण कर लिया था। इस विषय में हमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं है। फलतः दयानन्द ने स्वामी विरजानन्द के पास इस प्रकार अध्ययन कार्य समाप्त किया। उनके अध्ययन के समाप्त होने में न्यून से न्यून छः और अधिक से अधिक सात वर्ष का समय लगा। विरजानन्द के पास अध्ययन आरम्भ करने से पहिले दयानन्द जैसे थे, अध्ययन के अन्त में वैसे नहीं रहे। अस्तु। इस देश में गुरुदक्षिणा की एक पद्धति चली आती है। अध्ययन के समाप्त होने पर विद्यार्थिगण अपने-अपने सामर्थ्यानुकूल गुरु को दक्षिणा प्रदान किया करते हैं। संन्यासी दयानन्द के पक्ष में गुरुदक्षिणा रूप अर्थसंग्रह की सम्भावना नहीं थी; विशेषतः विरजानन्द भी उस श्रेणी के गुरु नहीं थे। अध्यापन के समाप्त होने पर दक्षिणा-ग्रहण वा अन्य किसी उपाय से अर्थ संग्रह करना सर्वतोभावेन उनके सङ्कल्प के विरुद्ध था। फलतः

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विदा लेने के समय उस प्रशान्त-प्रकृति वृद्ध पुरुष ने दयानन्द को अन्तःकरण से आशीर्वाद दिया और कुछ तेजस्विता के साथ यह कहा कि, 'तुम आर्यावर्त्त में आर्षग्रन्थों की महिमा प्रतिष्ठित करना, अनार्षग्रन्थ समूह का खण्डन करना और भारत में वैदिक धर्म्म के स्थापन में प्राण तक अर्पण कर देना।'

विरजानन्द के पास अध्ययन समाप्त करके सम्भवतः १८६५ ईस्वी दयानन्द मथुरा से आगरा गये। वहां यमुना तट के पास एक उद्यान में रहने लगे। वह आगरा नगर में प्रायः दो वर्ष रहे। उस समय में पण्डित सुन्दरलाल प्रभृति कई एक व्यक्ति उनके साथ आलाप और आत्मीयता के सूत्र में बद्ध हुए। यहां तक कि सुन्दरलाल के साथ स्वामी जी का प्रीति-सम्बन्ध संस्थापित हो गया। वह प्रीति-सम्बन्ध दोनों के भीतर जीवनपर्यन्त अविच्छिन्न रहा। आगरा रहने के समय दयानन्द प्रगट भाव से शास्त्रार्थ वा वक्तृता आदि कुछ नहीं करते थे। जो लोग उनके पास आते थे, उनके साथ विचार और वार्त्तालाप के भिन्न अधिक समय ध्यानधारणा में निमग्न रहते थे। ऐसा सुनने में आता है कि वह कभी-कभी अट्ठारह घण्टे तक निरन्तर समाधिस्थ रहते थे और कभी शास्त्रालोचना के सम्बन्ध में भागवतादि पुराण आधुनिक ग्रन्थों की असारता प्रतिपादन करते थे, और कभी वेदादि आर्षग्रन्थों की अनिर्वचनीय महिमा के वर्णन करने में व्यापृत होते थे। उस समय वह अपने मन्तव्यामन्तव्य के विषय में कभी कोई कथा परिस्फुट भाव से नहीं कहते थे; तो भी यह प्रतीत होता है कि वह उस समय आदि में वैष्णव मत के आस्थावान् नहीं थे। यह नहीं कह सकते कि शैवमत के सम्बन्ध में आस्थापरायण थे वा नहीं, परन्तु इसमें कुछ भी संशय नहीं है कि शैवमत का समर्थन करते थे। ऐसा कहा जाता है कि उस समय दयानन्द ने पूर्वोल्लिखित पण्डित सुन्दरलाल को शिवोपासना करने की अनुमति दी थी; यहां तक कि उन्होंने अपने कण्ठ की रुद्राक्ष माला अकृत्रिम प्रीति दर्शाने के लिये सुन्दरलाल को अर्पण कर दी थी‡। फलतः दयानन्द उस समय अपने को मत विशेष के ऊपर अविचलित

‡ ऐसा सुना जाता है कि पण्डित सुन्दरलाल पीछे आकर आर्य-समाज के साथ अधिकतर विषयों में सहमत हो गये थे और दयानन्द के सारे कार्यों के साथ आन्तरिक अनुराग प्रकाशित करते थे, परन्तु वह शिवोपासना को सर्वथा परित्याग नहीं कर सके। उन्होंने स्वामी जी की दी हुई रुद्राक्ष माला को बड़े

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भाव से प्रतिष्ठित नहीं कर सके थे। अधिकतर उनका चित्त उस समय संशयान्दोलित था। इसी कारण वह, कभी पत्र द्वारा वा कभी स्वयं जाकर, आचार्य के पास संशय निवारण की चेष्टा करते थे। इस प्रकार प्रायः दो वर्ष आगरे में अतिवाहित करके दयानन्द ग्वालियर चले गये।

यह कुछ नहीं विदित होता कि ग्वालियर में वह किस जगह और कितने दिन रहे। उनके स्वयं लिखे हुए आत्मचरित के विचारने से यह प्रतीत होता है कि वे वहां वैष्णव मत के खण्डन में प्रवृत्त हुए थे। वहां सबके सामने वैष्णव मत के प्रतिकूल वक्तृता देने लगे, और उपस्थित मनुष्यों के साथ उसकी असारता को लेकर विचार में प्रवृत्त होने लगे। दयानन्द ने एक दिन वक्तृता के समय में वैष्णवों के तिलक रेखा के सम्बन्ध में कहा, "यदि मस्तक पर कृष्णवर्ण की रेखा धारण करने से मोक्ष-लाभ होता है, तो सारे मुखमण्डल को कृष्णवर्ण की रेखा से अङ्कित करने से मोक्ष से भी अधिक पद प्राप्त हो सकता है।" धर्म्म विषयक बाह्य चिह्नों में दयानन्द की बाल्य समय से ही श्रद्धा नहीं थी। उपरोक्त उक्ति से उनकी उस वीतश्रद्धता का स्पष्टतर निदर्शन दृष्टिगोचर होता है। फलतः धर्म्म विषयक बाह्य अनुष्ठान और बाह्य चिह्नों की जिस तीव्र भाषा में वह आलोचना करते थे उसका प्रभूत परिचय हम उनके भविष्य जीवन में देखेंगे। अस्तु। यह प्रतीत होता है दयानन्द उस समय तक शास्त्राधिकार में सुप्रतिष्ठित नहीं हो सके थे, और अधीतविद्या में परिपक्वता प्राप्त नहीं कर सके थे, क्योंकि वहां शास्त्र की आलोचना करते समय उनके मुख से बीच-बीच में अशुद्ध शब्द निकल जाया करते थे—यह उन्होंने स्वयं ही स्वीकार किया है। इस विषय में दयानन्द ने कहा है, "वहां अनुमताचार्य्य‡ नामक एक व्यक्ति हमारी शास्त्रालोचना सुनने के लिये सदा ही आया करते थे और अपने को किरानी कह कर परिचित करते थे। विचार

यत्न के साथ घर में रख छोड़ा था और प्रतिदिन पूजा के समय श्रद्धा के साथ उस माला को लेकर जाप किया करते थे। सुन्दरलाल पश्चिमोत्तर प्रदेश की गवर्नमेंट के अधीन डाक-विभाग के उच्चतर पद पर नियुक्त थे।

---

‡भ्रान्तिवशः इन व्यक्ति का नाम अवतरणिकाम अनुत्तमाचार्य्य लिखा गया है। इनका वास्तविक नाम हनुमन्ताचार्य्य था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रसङ्ग में मेरे मुख से कभी कोई अशुद्ध शब्द निकल जाता था, तो वह तत्क्ष ही उसे शुद्ध कर दिया करते थे।"

दयानन्द ग्वालियर से करौली आये। करौली में कोई लिखने योग्य शास्त्र विचार का होना प्रतीत नहीं होता। यह विदित होता है कि वहां एक कबीर पन्थी के साथ शास्त्रार्थ में कुछ-कुछ वार्त्तालाप हुआ था। यह उ करौली में उसी कबीरपंथी से विदित हुआ था कि कबीरोपनिषत् नाम भी उपनिषद् है। इसके पश्चात् वे वहां से जयपुर आये। जय- पुर जाक ठाकुर रणजीतसिंह के घर ठहरे। वहां हरिश्चन्द्र नामक एक पंडित थे हरिश्चन्द्र सम्भवतः वैष्णवमतावलम्बी थे। दयानन्द ने हरिश्चन्द्र के साथ वैष्णवमत के सम्बन्ध में विचार उपस्थित किया। उनके विचारफल को जानने के निमित्त जयपुर निवासी बहुत उत्सुक हुए। अन्त में दयानन्द ने हरिश्चन्द्र को परास्त करके शैवमत प्रतिष्ठित कर दिया। हरिश्चन्द्र के पराजय से दयानन्द जयपुरवासियों में एक असाधारण पण्डित प्रख्यात हो गये और इसके साथ ही जयपुर के महाराजा भी शैवमत के पोषक बन गये और अधिक क्या, उन्होंने स्वयं शैवमत ग्रहण कर लिया। प्रजावर्ग प्रायः सर्वत्र ही राजपथानुसारी होते हैं, इसलिए वहां के अधिकतर व्यक्ति महाराजा के पन्थ का अनुसरण करने लगे। फलतः उपस्थित घटना में जयपुर निवासिवृन्द ऐसे उत्तेजित हो गये थे, प्रत्युत स्वयं महाराज भी नवावलम्बित मत के इतने पृष्ठपोषक हो गये थे कि शिव के नाम और शिवमाहात्म्य के कीर्त्तन से जय- पुर नगर गूंज उठा था। प्रायः सब ने ही अपने-अपने कण्ठ में रुद्राक्ष की माला

---

*जयपुर म शैवमत के साथ वैष्णवमत क संघर्षणसम्बन्ध में अति प्रबल आन्दोलन उपस्थित हुआ था। यह बात बहुतों से सुनी जाती है। इस विषय में किसी-किसी अभिज्ञ व्यक्ति से अनुसन्धान करके मथुरा के सेठों के प्रसिद्ध कार्य्यध्यक्ष श्रीयुत शीतलचन्द्र मुख्योपाध्याय महाशय ने ग्रन्थकार को लिखकर भेजा कि १९२० से १९२४ वि० के भीतर किसी न किसी समय में जयपुराधीश महाराजा रामसिंह ने वैष्णवों को नाना प्रकार से निगृहीत किया था। इस कारण अनेक वैष्णव जयपुर छोड़कर बीकानेर प्रभृति स्थानों को चले गये थे, परन्तु उपर्युल्लिखित घटना के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं दिखाई देता, क्योंकि महाराजा रामसिंह ने लक्ष्मणगिरि नामक एक संन्यासी के परामर्श से परिचालित होकर ऐसा किया था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धारण कर ली थी; यहां तक कि राजकीय पशुशाला में जितने अश्व और हस्ती थे, वे सब ही रुद्राक्ष की माला से विभूषित होकर एक नये और अदृष्ट-पूर्व वेष में नगर में विचरण करने लगे। इस घटना से स्वयं दयानन्द इतने उत्साहित हुए कि वह अपने हाथ से सहस्रों रुद्राक्ष माला स्वेच्छानुसार वितरण करने लगे। उसके पश्चात् वह जयपुर से पुष्कर चले गये। पुष्कर से अजमेर जाकर शैवमत का भी प्रतिवाद करने लगे। उस समय जयपुराधीश गर्वनर-जनरल के निमन्त्रण पर उनसे मिलने के लिए आगरे जाते थे। आगरा जाते हुए मार्ग में उनका सङ्कल्प वृन्दावन के दर्शन करने का भी था। यह हम पहिले ही कह चुके हैं कि पूर्वोल्लिखित रङ्गाचारी वृन्दावन में रहते थे। यदि रङ्गाचारी वैष्णव पक्ष के समर्थन के लिए उद्यत होंगे, तो दयानन्द उनको पराजित करके शैवपक्ष को समर्थित करेंगे—इस उद्देश्य से जयपुराधीश ने दयानन्द को साथ ले जाने का अभिप्राय प्रकाशित किया। महाराजा के इस अभिप्राय को जानने पर दयानन्द ने उनसे असंकुचित चित्त से कह दिया कि मैं शैवमत को भी सत्य वा युक्तिसङ्गत नहीं समझता। इसमें आश्चर्य्य क्या है कि जयपुराधीश उनसे ऐसी आशा के प्रतिकूल कथा सुनकर बहुत विस्मयान्वित हुए। अस्तु। इसके कुछ दिन पीछे अपने सन्देह को दूर करने के अभिप्राय से वह मथुरा आये‡।

ऐसा हो सकता है कि दयानन्द वैष्णव के समान शैवमत के भी सर्वथा विरुद्ध हों, और तुलनाप्रसङ्ग में वैष्णवपक्ष की अपेक्षा शैवपक्ष को अधिकतर

‡ कोई-कोई कहते हैं कि देशीय राजाओं को अपने मत में दीक्षित कर सकने से भारत में सहज में ही वैदिक धर्म्म प्रतिष्ठित हो जायगा—यह विचार करके दयानन्द सबसे पहिले ग्वालियर प्रभृति देशीय राजाओं की राजधानियों में गये थे, और कोई-कोई यह कहते हैं कि गुरुदक्षिणा के लिए अर्थसंग्रह करने के उद्देश्य से वह देशीय राजाओं के पास गये थे। किम्बहुना, शास्त्रीय विचारों में जयलाभ कर सकने पर राजाओं से धनप्राप्ति हो सकेगी यह दयानन्द जानते ही थे और यह जान कर ही वह जयपुर और करौली प्रभृति स्थानों में गये थे। हम इन दोनों ही उक्तियों को अमूलक समझते हैं, क्योंकि अपने मत में दीक्षित करने के अभिप्राय से दयानन्द किसी राजा के पास नहीं गये। वह केवल किसी-किसी राजधानी में गये थे, परन्तु किसी से उन्होंने अर्थयाचना नहीं की और उनके गुरु भी दक्षिणाग्रहण करने की प्रथा के नितान्त विरोधी थे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उन्नत वा विशुद्ध समझा हो। नहीं तो एक वार उसका समर्थन करके पुनः खण्डन करना उनके पक्ष में किस प्रकार से सम्भव हो सकता है ? परन्तु इस विषय में हमारा निश्चय और है। दयानन्द ने जयपुर के प्रसिद्ध पण्डित हरिश्चन्द्र के साथ तुलनाप्रसङ्ग से शैवमत का उत्कर्ष प्रतिपादित किया था, दोनों मतों के गुणदोष का विश्लेषण करके शैवमत को ही अधिकतर निर्दोष वा निष्कलङ्क प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया था—हम ऐसा नहीं मानते। पक्षान्तर में हमें कुछ भी संयम नहीं है कि वह उस समय शैवमत में स्वभाव से ही ग्रास्थावान् थे; किन्तु उनकी वह आस्था परिपक्व वा सुदृढ़ भित्ति के ऊपर स्थापित नहीं थी, क्योंकि हमें ऐसा बोध नहीं होता कि वह उस समय तक अपने को किसी प्रकार सिद्धान्त भूमि के ऊपर प्रतिष्ठित कर सके थे; किन्तु उनका चित्त उस समय घोर सन्देहतरङ्ग से आन्दोलित हो रहा था। वह सन्देह सामयिक वा तात्कालिक नहीं था। उस सन्देह का रेखापात उनके बाल्यचरित्र में ही देखा जा चुका है। फलतः यह कहना आवश्यक नहीं है कि वही सन्देह दयानन्द के तरुणकालोत्थित सन्देह की परिणति व प्रसारतामात्र था। इससे पहिले पाषाणादि पदार्थ निर्मित्त मूर्त्ति के प्रति उनको जो संशय उत्पन्न हुआ था वह उसी समय निराकृत नहीं हुआ। जड़पूजा वा जड़देवता के प्रति उनका घोर अविश्वास अवश्य उत्पादित हो गया था; परन्तु उसके स्थान में जडातीत जीवन्त पुरुष के प्रति उनका जीवन्तविश्वास उस समय तक भी बद्धमूल नहीं हो सका था। एक बात और भी थी कि विरजानन्द की शिक्षा और संसर्ग से दयानन्द का सन्देह पूर्वापेक्षा गाढ़तर हो गया था। इसी कारण उन्होंने उनके सामने चिन्ता के अनेक नये-नये राज्य को उद्घाटित किया था, अनेक अचिन्तितपूर्व विषयों ने उनकी दृष्टि को आकृष्ट कर लिया था। इस कारण दयानन्द के अन्तःकरण में जिस प्रकार नूतनतर जिज्ञासाओं का संचार हुआ था, उसी प्रकार उसके साथ ही उनके सशय ने भी घनतर भाव धारण कर लिया था। अतएव जब वह आगरा में यमुना के तटवर्ती उद्यान में वास करते थे, जब वह ग्वालियर में वैष्णव मत के खण्डन में प्रवृत्त हुए थे, जब करौली में कबीरपन्थी के साथ शास्त्रालाप कर रहे थे, जब वह जयपुर में सब लोगों को शैवपक्ष में उत्तेजित कर रहे थे, अथवा जब उन्होंने अजमेर नगर में शैव पक्ष के प्रतिकूल अस्त्रधारण किया था, तब उनका चित्त संशयतमिस्रा में समावृत था। इसमें विचित्रता ही क्या है ? संशयतमिस्रा में

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भीतर मनुष्य जैसे किसी वस्तु का सत्य वा अभ्रान्त कह कर धारण नहीं कर सकता, वैसे ही विषय विशेष के ऊपर भी अनेकों को प्रतिष्ठित करने में समर्थ नहीं होता। प्रातःकाल के कोहरे में जैसे पथिक् दिशानिर्णय में असमर्थ होकर एक पथ से दूसरे पथ में और दूसरे से तीसरे पथ में परिचलित हो जाता है, वैसे ही संदिग्धचित्त व्यक्ति भी किसी प्रकार सिद्धान्त भूमि का सन्धान न कर सकने पर एक विषय से दूसरे विषय में चला जाता है। किम्बहुना, दयानन्द की यही अवस्था हो गई थी। इसीलिये उन्होंने जयपुर में जिसका समर्थन किया, अजमेर जाकर उसी का खण्डन करने लगे। अस्तु। वह संशयान्दोलित होने पर भी अत्यन्त सरल थे। इसीलिये जब उन्होंने जिसको सत्य समझा, तब तत्क्षणात् उसी का बिना संकोच के ग्रहण कर लिया। उनको तनिक भी चिन्ता नहीं थी कि उनके मतपरिवर्तन के सम्बन्ध में कोई व्यक्ति क्या कहेगा और सम्प्रदाय विशेष में वह यशोभाजन होंगे या नहीं। जनसाधारण की निन्दा के निग्रह पर उन्होंने भ्रूक्षेप भी नहीं किया। जयपुराधिपति जब रङ्गाचारी के साथ विचार करने के लिए वृन्दावन ले जाना चाहते थे, तब उन्होंने यह बात कि वह शैवपक्ष के पोषक नहीं हैं कह कर अपनी अकृत्रिम सरलता के साथ निर्भयता का भी परिचय दिया था। ऐसा सारल्यमिश्रित संशय निन्दा की वस्तु नहीं है; प्रत्युत सर्वतोभावेन प्रशंसा योग्य ही है, क्योंकि मनुष्य के ज्ञानार्जन वा आध्यात्मिक उत्कर्षक के पक्ष में इस प्रकार के संशय से प्रकृत बान्धवता का परिचय मिलता है। अस्तु। यहाँ एक और भी कथा पर विचार करना आवश्यक है। जन्मदाता पिता यदि पुत्र की प्रकृति में सर्व प्रकार से संक्रामित होते हैं, और इसलिये दयानन्द यदि पितृचरित्र की अनुपम धर्मनिष्ठा और दृढ़ चित्तता को प्राप्त करते हैं, तो वह अपने पिता की प्रगाढ़ शिव भक्ति को भी क्यों न प्राप्त करते। इसलिये दयानन्द का शैवपक्ष समर्थन जैसा एक ओर सन्देहजनित था, दूसरी ओर वह वैसा ही वंशागत—यह स्वीकार करना पड़ेगा।

दयानन्द मथुरा में आकर आचार्य के पैरों में प्रणत हुए। विरजानन्द ने भी प्रिय शिष्य के आने से आनन्द को अनुभव किया। तदनन्तर वह अपने सन्देहों की कथा स्पष्ट करके कहने लगे। एक दिन में वा एक समय में सारी कथा का व्यक्त करना सम्भव नहीं था, इसलिये दयानन्द अपने वक्तव्य विषय को धीरता के साथ विवृत करने लगे। व्याधिग्रस्त व्यक्ति निपुण

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चिकित्सक के पास अपनी व्याधि का वृतान्त वर्णन करके जिस प्र आशान्वित हो जाता है, दयानन्द भी आचार्य के पास अपनी संशय-व्याधि वृतान्त विज्ञापित करके वैसे ही आशान्वित हुए। विरजानन्द अपनी प्रोज्ज प्रज्ञादृष्टि के प्रभाव से शिष्य के चित्त की सम्यक अवस्था को उत्तम समझ गये और समझने के पश्चात् उसके प्रतिकार में प्रवृत्त हुए। स्वा की शिक्षा और सुचिकित्सा से दयानन्द की संशयव्याधि थोड़े ही काल दूर हो गई— इसको विस्तार से कहने की आवश्यकता नहीं है। व्याधि व्यक्ति व्याधि के अवसान में जिस प्रकार आनन्दित होता है, अथवा प्रात:क के सूर्य के किरण संचार से विहङ्गकुल जिस प्रकार पुलकातिशय्य से प्रफुल्लि हो जाता है, दयानन्द भी उसी प्रकार व्याधिविमुक्त वा विगतसंशय हो अपार हर्ष के रस से अभिषिक्त हो गये। उसके पश्चात् विरजानन्द ने उन स्वावलम्बित व्रत की कथा अर्थात् भारतवर्ष में वैदिक धर्म के संस्थापन कथा फिर से समझा दी। अधिकन्तु, उस व्रतोद्यापन के निमित्त शिष्य हृदय में अधिकतर उत्साह की अग्नि संचारित कर दी। आचार्य के पास मथुरा से हरिद्वार इस प्रकार विमुक्त संशय और उत्साहित होकर दयानन्द चले गये। इसके पश्चात् उनके साथ विरजानन्द का फिर साक्षात् नहीं हुआ।

हरिद्वार में उस समय कुम्भ का मेला था। वहाँ सहस्रों मनुष्य धर्मार्थी होकर आये थे। नाना श्रेणी और नाना सम्प्रदाय के साधु, संन्यासी, दण्डी, परमहंस, वैरागी, ब्रह्मचारियों ने नाना स्थानों से आकर उस पुण्यभूमि को अधिकतर पवित्र कर दिया था। उनके विचित्र परिच्छेद, विविध भाव और भजन-साधना की भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रणाली से वह लोकारण्य एक अपूर्व शोभा से परिशोभित हो गया था। क्या साधु-संन्यासी, क्या गृहस्थ-उदासीन, सभी उस शुभ मुहूर्त के लिये सतृष्ण हो रहे थे और उस शुभ मुहूर्त में हिमाचलतलवाहिनी जाह्नवी के पवित्र जल से स्नान और निमज्जन करके अक्षय फल की प्राप्ति के उद्देश्य से प्रतीक्षा करते थे। भारत-क्षेत्र में जितने मेले होते हैं, उनमें कुम्भ के समान कोई मेला विशाल वा व्यापक नहीं है। कुम्भ यथार्थ में ही महामेला है। कुम्भ के भिन्न और किसी घटना के उपलक्ष में इतने गृहस्थ वा संन्यासियों का समावेश कभी संघटित नहीं होता। दयानन्द जानते थे कि शास्त्रालोचना के पक्ष में ऐसा उपयुक्त क्षेत्र सहज में प्राप्त नहीं होता। दयानन्द यह भी जानते थे कि भारतवर्षीय सब प्रकार के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

साम्प्रदायिक धर्मों के ऊपर वैदिक धर्म की प्रतिष्ठा स्थापन करने का ऐसा समय और सुविधा सहज में संघटित नहीं होगा। यह सब जानबूझ कर ही वह हरिद्वार गये थे। उस मेलाभूमि में दयानन्द एक पर्णकुटी में रहने लगे। उस कुटी के ऊपर एक पताका लगा दी। पताका का नाम 'पाखण्डखंडिनी' रक्खा। पाखण्डखडिनी पताका उनकी कुटी पर वैदिक धर्म की जयघोषणा करने लगी। इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दि के मध्य भाग में हरिद्वार की पवित्र भूमि और कुम्भ के पवित्र समय में पताका-उत्तोलन करके महात्मा दयानन्द सरस्वती ने वेदप्रतिपादित धर्म का पुनरुद्बोधन किया।

दयानन्द की पताकापरिचिह्नित कुटी पर मेला क्षेत्र के नाना लोग नाना भाव से दृष्टिपात करने लगे। उसको देख कर कोई किञ्चित विस्मित होता था, कोई विरक्त होता था, और कोई कौतूहलाक्रान्त होकर पताका के पास आता था। उसको देख कर साधु-संन्यासियों के हृदयों में नाना प्रश्न उठने लगे। उनमें से अनेकों के भीतर कौतूहल की शिखा जल उठी। यहां तक कि उस पताका के उत्तोलन करने वाले को देखने के अभिप्राय से उनमें से अनेक दयानन्द की कुटी के पास इकट्ठे होने लगे। आये हुये लोगों ने कुटी के भीतर दृष्टिपात करके देखा कि एक तेजः प्रभाव समन्वित संन्यासी गर्जनोन्मुख सिंह के समान बैठा हुआ है। संन्यासी के साथ संन्यासियों का वार्त्तालाप होने लगा। वार्त्तालाप की अग्नि उद्गिरित हुई और उस उद्गिरित्त अग्निराशि ने दोनों ही पक्ष को उत्तेजित करके तीव्र विचार में व्यापृत कर दिया। दयानन्द ने उस विचार-अग्नि से भारतवर्ष के मिथ्याशास्त्रसमूह को जला डाला, मनुष्य प्रचारितमतसमूह को भस्मीभून करने के लिये प्रयास किया, और अन्त में श्रुतिप्रतिपादित धर्म्म को ही सत्य और सनातन धर्म्म सिद्ध करने की चेष्टा की। परन्तु उस विचार प्रसंग में उन्होंने उत्तम रूप से समझ लिया कि क्या संन्यासी, क्या संसारी, प्रायः सब ही उनके अवलम्बित पथ के विरोधी हैं। जिस किसी साधु के साथ उनका परिचय हुआ, जिस किसी संन्यासी के साथ उनका वार्त्तालाप हुआ, और जिस किसी धर्म्म-जिज्ञासु गृहस्थी के साथ उन्होंने धर्म्मालोचना की, सब ही को प्रचलित मतों का अनुरागी और अनार्ष ग्रन्थों का पक्षपाती पाया। जैसे दिगन्त विस्तृत अन्धकार से चारों दिशायें आच्छादित हो जाती हैं, जैसे महाप्लावन में घर, आंगन, अन्तःस्थल, पलङ्ग, पशु, कीट, कीटाणु प्रभृति सब ही प्लावित हो जाते हैं,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द ने देखा वैसे ही अज्ञानता के महाप्लावन में भारत भूमि की
सब ही श्रेणी और सब ही सम्प्रदाय विकृत और विपर्य्यस्तबुद्धि हो गये
सत्य निष्ठा और सरलता के अभाव से इस देश का आद्योपान्त ही जड़प्राय
गया है। इसी कारण उन्होंने स्थिर किया कि इस श्मशान भूमि में
प्रतिष्ठा की चेष्टा करना अथवा इस प्रतिष्ठित और सर्वत्र प्रसारित जड़ता
भीतर जीवन का उद्बोधन करना एक प्रकार से अनर्थक प्रयास हैं; अधि
इस प्रकार का व्रतावलम्बन करना जीवन के लिये बड़ा ही अशान्तिप्रद
इस प्रकार की चिन्ता के पश्चात् उन्होंने स्थिर किया कि किसी प्रकार
प्रतिवाद में प्रवृत्त न होकर और विचार विद्रोह से परिपूरित संसार क्षे
अवतरण न करके शान्त और समाहित चित्त से जीवनयापन करना ही उ
लिए विहित और युक्तिसंगत है। इसके अनुसार दयानन्द ने अपनी ग्रन्थ रा
और अन्यान्य सामग्री को वितरण कर दिया और देह में भस्म लगा कर उ
कुटी में मौन होकर योगचर्य्या में प्रवृत्त हो गये। परन्तु जो शक्ति संसार
हित साधन के उद्देश्य से अवतरित हुई है वह रुद्धगति होकर कैसे रह सक
है? जो ज्योतिः जगत् की अज्ञान-तमिस्रा के हरण करने के निमित्त सृ
हुई है वह प्रछन्न होकर कैसे रह सकती है? शक्ति का विकास हो और
हो। जो ज्योतिः है उसका प्रकाश हो फिर हो। कठिन चट्टानों से
नदी की तेजस्विनी जलधारा नहीं रुक सकती, किंवा चन्द्रमा की उद्भि
किरणमाला जैसे मेघच्छाया से चिरकाल तक समाच्छन्न नहीं रह सकत
दयानन्द की अन्तर्निहित शक्ति भी वैसे ही अधिक समय तक संरुद्ध नहीं
सकी। एक वार कोई व्यक्ति उनकी कुटी में बैठा हुआ 'निगमकल्पतरोर्गलि
फलम्' इत्यादि पढ़ कर भागवत के सर्वोपरि प्राधान्य स्थापन की चेष्टा कर
लगा। तुरन्त ही उनका हृदयनिहित शक्ति निचय वह्नि स्पृष्ट बारुद के सम
भभक उठा। अधिकन्तु वह आया हुआ मनुष्य जब कहने लगा कि भागव
की अपेक्षा वेद निकृष्ट हैं, तब वह और अधिक मौन व्रत की रक्षा नहीं
सके। उस समय उन्होंने सोकर उठे हुए सिंह के समान तेजस्विता के सा
उस मिथ्या और सर्वथा असङ्गत कथा का प्रतिवाद आरम्भ किया। अस्तु
उस समय अपने पूर्वकृत सिद्धान्त का भ्रान्त होना उनकी समझ में आय
क्योंकि उन्होंने सोच कर देखा कि प्रचार का मार्ग कण्टकाकीर्ण भी हो, अथव
मनुष्य के शुभ साधन में पदे-पदे विघ्न और विपत्ति भी उपस्थित हों तो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस विषय में पीछे पग रखना कर्त्तव्य नहीं है; प्रत्युत धर्म्मलाभ वा आध्यात्मिक उन्नति साधन के मार्ग में इसको एक अपरिहार्य्य अङ्ग रूप से स्वीकार करना ही विधेय है। फलतः ऐसी चिन्ता और आलोचना के पीछे मनुष्य जाति के मङ्गल के उद्देश्य से ज्ञान प्रकाश को प्रसारित करना ही दयानन्द ने अपने जीवन का एक अवश्य अनुष्ठेय व्रत निर्धारित कर लिया।

———

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चौथा अध्याय

प्रचारयात्रा,-कम्पिलनगर प्रभृति गङ्गातीरवर्ती स्थानों में भ्रमण, फर्रुखाबाद-आगमन-वहां मूर्तिपूजा का खण्डन उत्पीडन और आक्रमण-चेष्टा-वैदिक पाठशाला का स्थापनरामगढ़ में आगमन और शत्रुओं के हाथों से प्राणविनाश की सम्भावना-प्रयाग में आगमन और व्यक्तिविशेष को क्रिश्चियन धर्म ग्रहण करने से रोकना प्राणविनाश की पुनर्वार चेष्टा ।

व्रतनिर्धारण के पश्चात् दयानन्द एकान्तभाव से चिन्तानिविष्ट हो गये । व्रतोद्यापन में क्या-क्या विघ्न हैं और किस प्रणाली वा पद्धति का अवलम्बन करने से व्रत उद्यापित हो सकता है—इस विषय में उनके मन में नाना प्रकार की चिन्ताओं का उदय होने लगा । भारतवर्ष में वैदिक धर्म्म की प्रतिष्ठा में भिन्न-भिन्न श्रेणी वा भिन्न-भिन्न सम्प्रदायकी की हुई जितने प्रकार की आपत्ति उठ सकती हैं उन्हें वह स्वयं ही उठाकर स्वयं ही खण्डित करने लगे‡ । समरनीतिनिपुण सेनापति जैसे युद्धसंक्रान्त सारे विषयों की एक-एक करके आलोचना करके अस्त्रधारण करता है, दयानन्द ने भी वैसे ही अवलम्बित व्रत के विघ्न, बाधा, प्रकृति, परिणाम प्रभृति सारे विषयों को विशेष रूप से विचार कर अस्त्र धारण किया । उन्होंने सम्भवतः कुम्भ के समाप्त

‡ऐसा सुनने में आता है कि स्वामी जी ने प्रचार यात्रा के लिए बाहर निकलने से पूर्व अपनी कुटी के सम्मुखवर्ती वृक्षविशेष को पूर्वपक्ष और अपने को उत्तर पक्ष कल्पित करके वैदिकधर्म्म के प्रतिपादन में जितनी आपत्ति वा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होने पर हरिद्वार से यात्रा की। उस समय सन् १८६७ अथवा ६८ होगा, क्योंकि संवत् १९२४ में पूर्वकथित कुम्भ का मेला हुआ था। ऐसा से दयानन्द की आयु उस समय ४३ वा ४४ वर्ष की रखनी पड़ती है।

हरिद्वार जैसे पुण्यसलिला भागीरथी की उत्पत्ति का स्थान कह प्रसिद्ध है, उसी प्रकार वह उन्नीसवीं शताब्दि में वैदिक धर्म्म की उदय कह कर भारतीय इतिहास में स्थान पाने योग्य है। हरिद्वार से भागीरथ उद्दाम तरङ्गमाला जैसे भारतभूमि के शतविध कल्याण के निमित्त प्रव होती है, वैसे ही आर्य्यावर्त्त के अशेष प्रकार के मङ्गल के निमित्त वै धर्म की पवित्र जलधारा भी वहां से ही प्रवाहित हुई वैदिकधर्म का गंगा स्रोत के साथ सम्भाव न होने पर भी वह समभूमि में सञ्चारित होने क्योंकि दयानन्द भागीरथीसिञ्चित प्रदेश के भीतर ही वैदिकधर्म की ज्यो प्रसारण पूर्वक आगे बढ़े। इस प्रकार नाना स्थानों में भ्रमण करके वह कम्पि नगर में आये। कम्पिलनगर महाभारतवर्णित द्रुपद राजा की राजधानी क प्रसिद्ध है और वह फर्रुखाबाद नगर से प्रायः १५ कोस पश्चिम की भागीरथी के तट पर बसता है। वहां कमलापति नामक एक व्यक्ति के गङ्गा तीरस्थित उद्यान में वह रहने लगे। पंडित ज्वालादत्त‡ ने पहिले ही प

संशय हो सकते हैं उनका निराकरण किया था अर्थात् वह वृक्ष पूर्वपक्ष रूप एक-एक आपत्ति वा प्रश्न उत्थापित करता था और वह उत्तरपक्ष रूप से उस खण्डन करते थे। इस प्रकार से तत्सम्बन्धी सब आपत्तियों की मीमांसा क और अपनी भित्तिभूमि को सर्वांश में दृढ़ करने के पश्चात् वह प्रचार क्षेत्र उतरे थे। हमने यह कथा आदिब्रह्मसमाज के अन्यतम उपाचार्य्या श्रीयुत हे चन्द्र चक्रवर्ती महाशय से सुनी है। जब वह कानपुर में गङ्गातट पर स्वामी के साथ वास करते थे, तब स्वामी जी ने एक दिन प्रातःकाल मुखप्रक्षालन समय बातों-बातों में उनसे यह कथा कही थी।

‡इनकी कथा इससे पहिले एक वार लिखी जा चुकी है। यह अब अजमे नगर में दयानन्दस्थापित वैदिकयंत्रालय के ग्रन्थ संशोधक के कार्य्य में नियु हैं। फर्रुखाबाद में दयानन्द की वैदिकपाठशाला के स्थापित होने पर यह औ दो विद्यार्थियों के साथ उस पाठशाला में सबसे पहिले प्रविष्ट हुए थे। विशेषत उन्होंने स्वामी जी के संस्कृत-हिन्दीपत्रलेखक और वेदभाष्य के अनुवादका

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कम्पिल नगर में ही स्वामी जी के दर्शन किये थे। ज्वालादत्त कहते थे कि 'स्वमी जी के परिधान में उस समय एक लङ्गोटे के भिन्न और कुछ भी नहीं था। विशेषतः उनके उनके देह से उस समय एक प्रकार की अपूर्व दीप्ति निकलती थी। कम्पिल नगर में ब्राह्मण के हाथ का भोजन करते थे और शीत ऋतु होने पर भी रात्रिकाल में खुले मैदान में कण्ठ से मस्तक पर्यन्त केवल मुख भाग बाहर निकाल कर अपने ऊपर पुराल डाल कर सोते थे।' ज्वालादत्त वहां स्वामी जी से सन्ध्या तर्पण सीखते थे। वहां के अनेक ब्राह्मण पण्डितों ने उनके प्रभाव वा उपदेश के अनुसार प्रतिदिन सहस्रवार गायत्री जाप करने की प्रतिज्ञा की थी। उनमें से अनेक उस प्रतिज्ञा का पालन भी करते थे; किन्तु उनके उपदेश को सुनकर वहां के किसी ब्राह्मण वा किसी पण्डित ने मूर्तिपूजा का परित्याग किया था वा उसमें श्रद्धाहीन हो गये थे, इस विषय में कुछ सुनने में नहीं आया। अस्तु। इस प्रकार कुछ समय व्यतीत करके वह कम्पिल नगर से फर्रुखाबाद के समीपस्थ कायमगञ्ज नामक स्थान में आये। 'दयानन्ददिग्विजय' के प्रणेता पं० गोपालरावहरि के साथ कायमगञ्ज में स्वामी जी का साक्षात् हुआ। इस विषय में गोपालराव ने कहा है कि "मैंने वहां एक दिन शीत ऋतु में सन्ध्या समय गङ्गातीरस्थ एक उद्यान में जाकर देखा कि एक संन्यासी कुछ लकड़ी जलाकर बैठे हुए हैं।" उन्होंने संन्यासी के साथ अनेक विषय में वार्त्तालाप किया। विशेषतः मूर्तिपूजा के सम्बन्ध में आलोचना करने से उन्हें विदित हुआ कि यह वही आत्मान्दकथित दिग्विजयी संन्यासी है*। अस्तु। दयानन्द उसके पश्चात् कायमगञ्ज से फर्रुखाबाद आये।

में नियोजित रहकर अनेक स्थान में भ्रमण किया था। (उस पण्डितजी का अब स्वर्गवास हो गया है—अनुवादक।)

---

*पं० गोपालराव हरि ने ग्रन्थकार से कहा था कि कायमगञ्ज में दयानन्द के साथ साक्षात् होने से पहिले आत्मानन्द स्वामी नामक हरिद्वार से लौट कर आये हुए एक संन्यासी के साथ इमरतपुर में उनकी भेंट और मूर्तिपूजा ~~विषय में~~ बातचीत हुई थी। वहां आत्मानन्द ने गोपालराव से कहा था कि "हमारे पीछे एक ऐसे दिग्विजयी संन्यासी आते हैं जिनका जगत् में प्रधान कार्य्य मूर्तिपूजाखण्डन ही है।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

फर्रुखाबाद में आकर दयानन्द एक स्थान में ठहरे जो गङ्गातट के स
था। उनके आने का संवाद नगर में प्रायः सभी जगह फैल गया। इसी
उनके दर्शन करने और उनसे बातचीत करने के अभिप्राय से प्रतिदिन सैं
मनुष्य आने लगे। लाला पन्नालाल नामक एक सम्भ्रान्त व्यक्ति उनके
प्रतिदिन आते थे। पन्नालाल फर्रुखाबाद के प्रसिद्ध रईस लाला दुर्गाप्रस
के चचा थे। दयानन्द को दिन में बहुत से लोग घेरे रहते थे, इसलिये
के नाना संशय व हृदय की गूढकथाओं का उनसे प्रकाशित करना पन्नाल
के पक्ष में सुविधाजनक नहीं होता था। इस प्रकार पन्नालाल प्रतिदिन र
को दोपहर तक स्वामी जी के पास जाकर मुक्तहृदय से बातचीत वि
करते थे। दयानन्द उस समय संस्कृत बोलते थे। यद्यपि उनकी संस्कृत अ
शय सरल और सुबोध होती थी, तथापि उससे मुक्तभाव से जी खोल
बातचीत करने में पन्नालाल को बाधा पड़ती थी। पन्नालाल स्वभाव
धर्म्मान्वेषी और उनके साथ वार्तालाप करने के नितान्त प्रार्थी हैं—यह जा
कर दयानन्द उनके साथ हिन्दी भाषा में बातचीत करने की चेष्टा क
लगे। फलतः दयानन्द के साथ वार्तालाप करके और उनसे उपदेश पाक
पन्नालाल की तृप्ति हो गई और कुछ दिन पीछे वह उनके अनुरक्त व्यक्ति
में परिगणित होने लगे।

इस ओर मूर्तिपूजा पर तीव्र आक्रमण करने के कारण फर्रुखाबाद
बहुत से मनुष्य दयानन्द के घोर विरोधी हो गये। यहां तक कि उनको मा
कर निकाल देने के लिए जगह २ मंत्रणा होने लगी। एक दुष्ट स्वभाव वैर
गीने गङ्गा पुत्रों* को घोषणा की कि दयानन्द गङ्गा के महात्म्य को नष्ट क
हैं और हिन्दुओं में प्रचार करने लगा कि दयानन्द देवमूर्तिसमूह के देवत
और महिमा को विलुप्त करते हैं। इस कारण अपनी आजीविकाकी आशङ्
से एक ओर गङ्गापुत्र और दूसरी ओर हिन्दु सम्प्रदाय के अशिक्षित व्यक्तिग
उत्तेजित और उष्णशोणित होकर दयानन्द का अपमान करने के निमि
अग्रसर हुए। किन्तु अपमान वा प्रहार करना तो दूर रहा; वे लोग उनक

*ये लोग गङ्गातीर पर रह कर गङ्गास्नानार्थी व्यक्तियों का श्राद्ध
तर्पणादि कार्य में साहाय्य करते हैं और उसके द्वारा अपनी जीविका उपार्ज
करते हैं। इसी कारण उनका नाम गङ्गापुत्र है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देहस्पर्श भी न कर सके और भग्नोद्यम होकर लौट गये। यह कहा जाता है कि फर्रुखाबाद नगर में दयानन्द ने मूर्त्तिपूजा के प्रतिकूल ऐसा प्रबल आन्दोलन उठाया और वह आन्दोलन ऐसा शीघ्र फलप्रद हुआ था कि कितने ही सरल प्रकृति और सत्यानुरागी ब्राह्मण उनके उपदेश के श्रवणमात्र से ही अपने मन्दिरों से मूर्त्तिसमूह को फेंक कर निश्चिन्त हो गये थे *। इस प्रकार की घटना को हम सर्वथा अमूलक नहीं कह सकते, क्योंकि स्वामी जी की विचारशक्ति ऐसी ही हृदयस्पर्शिनी थी और उनकी व्याख्या और वक्तृता समय २ पर श्रोतृवृन्द को ऐसी हृदयोन्मादिनी होती थी कि अनेक लोग उनकी वक्तृता को सुन कर ही उनके प्रदर्शित पथ का अनुसरण करने लगते थे अथवा करने के लिए उत्सुक हो जाते थे। तब ऐसी घटना यदि प्रथम बार ही न हुई हो, तो उसका वारान्तर में होना सम्भव है, क्योंकि वह फर्रुखाबाद एक से अधिक बार आये और समय २ पर एक मास से भी अधिक काल तक वहां रहे। फल कथा, फर्रुखाबाद के निवासियों ने दयानन्द पर बार-बार अत्याचार करने का प्रयास किया था—यह विलक्षण रूप से विदित होता है। एक बार वहां के एक समृद्धि सम्पन्न वैश्य मूर्तिपूजा की विधेयता प्रतिपादित करने के अभिप्राय से बहुत धन व्यय करके काशीस्थ पण्डितों से एक व्यवस्था पत्र लाये थे, और इसका तो कहना ही क्या है कि वह व्यवस्थापत्र प्रतिमापूजा का प्रतिपादक था। इसके पश्चात् गाजे बाजे के साथ और तीन चार सहस्र मनुष्यों को लेकर बड़े समारोह से वही वैश्य दयानन्द रूप दुर्दान्त अरि के दलन करने के लिए उनके पास उपस्थित हुए थे, और एक बार डाक विभाग का एक कर्मचारी सुरापान से उन्मत्त हो कर गाड़ी पर चढ़कर बहुत से लठैतों के साथ दयानन्द के लिए आया था; परन्तु आश्चर्य

---

* The Christian Intelligencer of March 1870, quoted in The Triumph of Truth, page 31.

आर्यसिद्धान्त के सम्पादक पं० भीमसेन शर्मा ने कहा था कि फर्रुखाबाद में जिस समय स्वामी जी को उत्पीडित करने के लिए लोग नाना प्रकार की चेष्टा कर रहे थे, तब कई एक दुष्ट प्रकृति व्यक्तियों ने एक शिव मूर्ति को स्वयं ही उखाड़ कर और गङ्गाजल में फेंक कर सर्व साधारण में प्रसिद्ध कर दिया कि यह कार्य दयानन्द ने ही किया है। इस पर उत्पीडन करने वालों का आक्रोश और भी बढ़ गया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

का विषय है कि विपक्षी लोगों की किसी बार की कोई चेष्टा भी सा
नहीं हो सकी। अस्तु। फर्रुखाबाद के अधिकतर लोगों के दयानन्द से
विरक्त और विरुद्धाचरणों में प्रवृत्त हो जाने पर भी पूर्वोल्लिखित पन्नाल
प्रभृति कतिपय व्यक्तियों की श्रद्धा और भक्ति तनिक भी तिरोहित नहीं
प्रत्युत दिन प्रतिदिन वर्धित होने लगी।

दयानन्द ने फर्रुखाबाद में एक वैदिक पाठशाला स्थापन करने का प्रस्ता
किया। उन्होंने वैदिक पाठशाला स्थापन करने की आवश्यकता इससे पू
ही उत्तम रूप से समझ ली थी। उन्होंने यह अवगत कर लिया था कि आ
जाति के शास्त्र भण्डार में जो महामूल्य रत्न विद्यमान हैं उनका निर्वाचन हो
आवश्यक है, क्योंकि उन सञ्चित रत्नों के साथ रत्नों के नाम से अनेक का
के टुकड़े भी मिश्रित हो गये हैं। इसलिए कांच के टुकड़ों के साथ रत्नों
स्वतन्त्रता का साधन-आर्ष ग्रन्थों से अनार्षग्रन्थों के पार्थक्य का प्रतिपाद
उन्होंने परमकर्त्तव्य निश्चय कर लिया था। इस शास्त्रनिर्वाचन के कार्य
सच्चे शास्त्रियों का होना आवश्यक था। भारत भूमि के नाना स्थानों
शास्त्रों के अध्ययन-अध्यापन के होने पर भी और सभाक्षेत्र वा सामाजि
अनुष्ठानविशेष में अनेक देशीयशास्त्रि-समूह के समावेश होने पर भी यह दे
यथार्थ में शास्त्रि-शून्य हो गया था। वस्तुतः भारतवर्ष में शास्त्रनिर्वाच
शास्त्रियों का नितान्त ही अभाव है। इस अभाव के निवारण करने के लि
ही दयानन्द का वैदिक पाठशाला विषयक सङ्कल्प था। और भी एक बात थ
कि इदानीन्तन पण्डितगण केवल शास्त्रनिर्वाचन में ही अपटु नहीं हैं, किन
सत्यनिष्ठा सम्बन्ध में भी वे इस समय बहुत दूर चले गये हैं, क्योंकि पण्डि
गण शास्त्रीय प्रसङ्ग में पराजित होने पर भी सत्य के अनुरोध से अपने परा
जय को स्वीकार नहीं करते। इन सब कारणों से इस विषय में एक सत्यनिष्ठ
शास्त्रि-दल की सृष्टि के अभिप्राय से दयानन्द वेद विद्यालय की प्रतिष्ठा के
लिए उत्सुक हुए थे। प्रस्तावित विद्यालय के उद्देश्य और आवश्यकता के
विषय में दयानन्द ने पन्नालाल प्रभृति व्यक्तियों को उत्तम रूप से समझा
दिया था। उन सबने ही एक वाक्य होकर इस हितकर प्रस्ताव का अनु-
मोदन किया। इसलिये बिना विलम्ब के ही स्वामी जी के प्रस्ताव और पन्ना
लाल प्रभृतियों के उद्योग और उत्साह से फर्रुखाबाद में एक वैदिक पाठशाला
स्थापित हो गई। पहिले पहल पन्नालाल की वाटिका में वैदिक पाठशाला का

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कार्यारम्भ हुआ। पूर्वोल्लिखित पण्डित ज्वालादत्त और दो मनुष्य पाठशाला में विद्यार्थी रूप से सबसे पहिले प्रविष्ट हुए। उसमें पाणिनि ही प्रथम पाठ्य पुस्तक से अवलम्बित और अध्यापित होने लगी। इसके पश्चात् दयानन्द ने कासगञ्ज, छलेसर और मिरजापुर प्रभृति स्थानों में भी एक २ वैदिक पाठशाला स्थापित की। अस्तु। फर्रुखाबाद में वैदिक पाठशाला स्थापित करने के पश्चात् वह थोड़े दिनों के लिए और स्थानों को चले गये।

दयानन्द फर्रुखाबाद से सम्भवतः रामगढ़ आये। उनके लिखे हुए आत्मचरित्र के पढ़ने से विदित होता है कि इससे पहिले भी वह रामगढ़ आये थे। रामगढ़ में मूर्ति पूजा का प्रतिवाद किया और उसके साथ वैदिक धर्म्म की युक्तियुक्तता के प्रतिपादन में भी प्रवृत्त हुए वह देख कर वहां के कई पण्डित विचारार्थी होकर उनके पास आये। आये हुये पण्डितों के साथ दयानन्द विचार में प्रवृत्त हुए। पण्डितगण विचार पद्धति से अनभिज्ञ होने के कारण अथवा असदिच्छा से परिचालित होकर सब ही एक साथ और एक ही समय में अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार प्रश्न पूछने लगे। इसीलिये उनका विचार कार्य क्रमशः विशृंखलामय हो गया। दयानन्द ने ऐसे अनियमित वा अयथा परिचालित विचार व्यापार का कोलाहल नाम रक्खा। वस्तुतः ऐसा विचार कोलाहल शब्द से अभिहित होने के सर्वथा उपयुक्त था। किन्तु आश्चर्य है कि वे कोलाहल प्रवृत्त पण्डितगण अपने असङ्गत वा अपण्डितोचित आचरण से तनिक भी दुःखित न होकर उलटा स्वामी जी का ही उपहास करने लगे। इससे भी अधिक रामगढ़ में दयानन्द के प्राणवध का भी उद्योग हुआ। चित्रगढ़ से दस व्यक्ति आए और वे महर्षि को मार देने की चेष्टा करने लगे। उन दानवों के साथ कोलाहल प्रिय पण्डित वर्ग का किसी प्रकार का सम्बन्ध वा षड्यन्त्र था वा नहीं— यह नहीं कहा जा सकता। यदि हो तो असम्भव नहीं है। परन्तु उन दुर्वृत्तियों का दुष्टाभि प्रायकार्य में परिणत नहीं हो सका, क्योंकि दयानन्द ने उनके दुष्टाभिसन्धि के विषय को पहिले से ही जान लिया था, और उसे जानकर विशेष रूप से कौशल का अवलम्बन करके उनके आक्रमण से प्राण रक्षा कर के फर्रुखाबाद चले आये।

इस यात्रा में उन्होंने व्याख्यान या विचारादि विषय में कोई कार्य नहीं किया। जितने दिन फर्रुखाबाद रहे उतने ही दिन वैदिक पाठशाला के निरीक्षण और प्रबन्ध कार्य में लगे रहे। इस स्थल में यह कह देना आवश्यक है कि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उनकी अविद्यमानता में वैदिक पाठशाला में विशृङ्खला उपस्थित हो गई। विशृङ्खला का मूल क्या था— यह विदित नहीं हुआ। पाठशाला के एक ... के साथ एक उद्यान रक्षक के विवाद के कारण ही यह विशृङ्खला उपस्थित हुई थी—ऐसा अनेकों से सुनने में आया है। ऐसी विशृङ्खला के संघटित ... से और विशेषत: उद्यान के स्वामी पन्नालाल के उस विवाद जनित विशृङ्खला के निवारण में किसी प्रकार का प्रतिविधान करने की इच्छा न करने पर ... नन्द ने पाठशाला को दूसरे स्थान में ले जाना ही युक्तियुक्त विचारा। ... में जिसमें जिस गङ्गातीरवर्ती स्थान में वह स्वयं रहते थे पाठशाला को ... परिवर्तन के साथ-साथ उसके पोषण और रक्षण की व्यवस्था भी कुछ अंश में परिवर्तित हो गई। निर्भयराम नामक एक सदाशय वैश्य ने विद्यार्थियों के भोजन का भार ग्रहण कर लिया और लाला जगन्नाथ प्रसाद नामक एक उदार चित्त व्यक्ति ने अध्यापकों के वेतन का व्यय अपने ऊपर ले लिया ‡ इस प्र... वैदिक पाठशाला को सुप्रतिष्ठित और सुचारु रूप से व्यवस्थित करके दया... फर्रुखाबाद से कानपुर चले गये। तदन्तर कानपुर से प्रयाग में उपस्थित ...

प्रयाग में महादेव प्रसाद नामक एक सरल चित्त व्यक्ति ने आर्य धर्म ... श्रेष्ठत्व प्रतिपादन करने के लिये एक विज्ञापन प्रकाशित किया था। विज्ञा... में प्रतिपादन का समय केवल तीन मास नियत किया था। इसके अतिरिक्त उसमें यह बात भी लिखी थी कि प्रतिपादन न कर सकने पर वह क्रिश्चियन धर्म ग्रहण कर लेंगे। प्रयागवासी पण्डितगण निर्दिष्ट समय के भीतर निर्दिष्ट विषय का प्रतिपादन करने में समर्थ हुए थे—ऐसा बोध नहीं होता। पण्डितगण ने उस विषय में यथोचित प्रयत्न किया था—यह कहना बाहुल्यमात्र है परन्तु उनके ऐसा करने पर भी उनकी चेष्टा वा मीमांसा से महादेव प्रसाद सन्तुष्ट नहीं हो सके। ऐसे समय में आर्य धर्म के अद्वितीय प्रवक्ता दयानन्द

‡ पहिले पं० व्रजकिशोर फिर मथुरावासी पूर्वोक्त पं० युगलकिशोर प्रभृति इस पाठशाला के अध्यापकपद पर नियुक्त हुए। किम्बहुना, स्वयं दयानन्द भी कुछ दिन इस पाठशाला में अध्यापन के कार्य्य में प्रवृत्त हुए थे। पण्डित ज्वालादत्त के समान पण्डितवर भीमसेन भी कुछ दिन के पश्चात् इस पाठशाला में प्रवृष्ट हुए थे। फलतः विद्यार्थिसंख्या में फर्रुखाबाद की पाठशाला एक समय उन्नत हो गई।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रस्वती के साथ प्रयाग में महादेव प्रसाद का साक्षात् हुआ। दयानन्द ने नको जिज्ञासु देख कर और उनके मनोभाव को जानकर उनके समक्ष अना- ास से ही प्रतिपादित कर दिया कि आर्य धर्म ही सर्वतोभावेन युक्ति सङ्गत र्म है। सुतरां तब महादेव प्रसाद को क्रिश्चियन धर्मावलम्बन विषय से प्रति- निवृत्त होना पड़ा। महादेवप्रसाद को विधर्म के अवलम्बन से हटाने से दया- न्द का नाम और महिमा प्रयाग में सर्वत्र ही फैल गये। किन्तु प्रयाग में भी नके प्राण हरण के लिए कतिपय दुर्वृत्त व्यक्ति प्रेरित हुये थे। इस बार ादेव प्रसाद की चेष्टा से ही उनके प्राणों की रक्षा हुई। अस्तु। हमें अनु- ान होता है कि उनके प्राण विनाश के लिये इस प्रकार के वारंवार उद्योग पीछे कोई निर्दिष्ट परिचालना थी। इसी से ऐसा होना सम्भव है कि कई द्धि परिचालित नीचपना, लोग दयानन्द के निहत करने के अभिप्राय से ्रणावद्ध हुए थे। सम्भवतः प्रतिगुप्त रूप से उन्होंने घातकों के एक दल का नियुक्त किया था घातक लोग अत्यन्त अलक्षित भाव से दयानन्द का ुसरण करते थे और उनके प्राणवध के लिये सर्वदा ही सुयोग की प्रतीक्षा ्रते रहते थे। यदि ऐसा नहीं था, तो फिर उनके प्राण लेने के लिए एक से धिक स्थान में एक से अधिक बार उद्योग क्यों देखने में आता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पांचवां अध्याय

काशी--आगमन,---आगमनजनित आन्दोलन,---कर्तव्य-निरूपण विषय में काशीनरेश के साथ पण्डितों का परामर्श,-काशी का महाविचार-प्रतिमा और पुराण शब्द का अर्थ निर्णय,-विशुद्धानन्द स्वामी और पण्डित बालशास्त्री प्रभृति का प्रश्न विचार विशृंखला-विचार विषय पर भिन्न-भिन्न सम्मतियां-काशी में वेदविद्यालय स्थापन करके का प्रस्ताव।

दयानन्द प्रयाग से काशी आये। भारतीय धर्म के इतिहास में काशी का चिरकीर्त्तित हो गया है। भारतीय धर्म प्रवक्ताओं के पदार्पण से काशी पवित्र भूमि नाम से प्रसिद्ध हो गई है, और भारतवर्षीय भिन्न-भिन्न ...र्यों के आविर्भाव और आन्दोलन से काशी क्षेत्र ने एक प्रकार से धर्म्म की ख्याति लाभ की है। वेदव्यास ने जिस स्थान में ब्रह्मसूत्रों की व्याख्या शङ्कर स्वामी जिस स्थान में शारीरिक भाष्य के प्रणयन में प्रवृत्त हुए, जिस स्थान में इस उन्नीसवीं शताब्दि में एक दिगम्बर संन्यासी वैदिक धर्म विजय पताका कन्धे पर लेकर आये, वह स्थान पवित्र ब्रह्मवाद के पवित्र ...हास में प्रसिद्धि लाभ क्यों नहीं करेगा। सारांश यह कि जो स्थान शास्त्र-...त्र और शास्त्र-गौरव में भारत भूमि के भीतर अद्वितीय कह कर प्रसिद्ध है, ...नन्द उसी स्थान में सत्य शास्त्र के विचार के निमित्त उपस्थित हुए। जिस ...न] में सैंकड़ों देवमन्दिर सिर उठाए मूर्त्तिपूजा की महिमा विघोषित करते हैं, ...स स्थान में बहुत से देवताओं की उपासना के बहुत प्रकार के आडम्बर और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आयोजन के निमित्त लोग अस्थिर हुए-हुए फिरते हैं, और जिस स्था[illegible] में, घाट में, मठ में, और क्षेत्र में सैंकड़ों देवमूर्त्ति पड़ी हुई स[illegible] मूर्त्तिमाहात्म्य को ही प्रचारित करती हैं, दयानन्द उसी स्थान में [illegible] का मिथ्यात्व प्रतिपादन करने के अभिप्राय से निर्भयता के साथ प्रवि[illegible] जो दुर्ग अब तक अभेद्य वा अनधिकृत था, दयानन्द उस पर अधिक[illegible] के उद्देश्य से अदीनसत्त्व वीर के समान अवतीर्ण हुए। काशी में दुर्ग[illegible] समीप आनन्द बाग नामक एक उद्यान है। काशी में उपस्थित हो[illegible] नन्द उसी उद्यान में रहने लगे।

दयानन्द के आगमन पर काशी में आन्दोलन मच गया। एक कोप[illegible] संन्यासी ऋग्वेदादि ग्रन्थों की आलोचना करके मूर्त्तिपूजा का मिथ्या[illegible] पादित करते हैं, शक्तिशैवादि सम्प्रदायों की असारता प्रतिपादन क[illegible] माला ग्रहण और त्रिपुण्डधारणादि बाह्य अनुष्ठान-समूह को वेद विरुद्ध [illegible] पादन करने के निमित्त बद्धपरिकर हुये हैं, और इसी प्रकार और इस[illegible] से अपने मत का प्रचार करते-करते गङ्गातीरवर्त्ती स्थानों में भ्रमण क[illegible] अब वाराणसी नगर में आकर वैदिक-धर्म्म की विजयपताका उत्तोलि[illegible] है—यह बात काशी में सर्वत्र ही शीघ्रता के साथ फैल गई। यह संवा[illegible] कर काशी के निवासियों में किन्हीं ने विस्मय प्रकाश किया, कोई वि[illegible] हो गये, शास्त्रिगण चिन्ता करने लगे, धर्म व्यवसायी पण्डे-पुरोहितगण [illegible] प्रकार से अशान्ति और आशङ्का की कथायें उत्थापित करने लगे, और [illegible] कोई व्यक्ति उपेक्षा के साथ उपहास करके बातों में उड़ाने की चेष्टा [illegible] लगे। फलतः इस बात से काशी के मठों मन्दिरों में, सत्रों और साधुअ[illegible] निवासों में आन्दोलन मच गया। पदस्थ लोगों की बैठकों और विश्राम [illegible] में इस सम्बन्ध में नाना प्रकार की आलोचना होने लगीं। सारांश यह [illegible] उपस्थित विषय पर वहाँ के प्रायः सब ही लोगों के हृदय में एक कौतूहल [illegible] शिखा उद्दीपित हो गई। मूर्त्ति-उपासना सचमुच वेदानुमोदित है वा नहीं, [illegible] शाक्त प्रभृति साम्प्रदायिक मत वास्तव में वेद विरोधी हैं वा नहीं—यह जा[illegible] के लिए अनेक लोग इच्छुक हुए। यहाँ तक कि कोई-कोई पण्डित वेद [illegible] लेकर विचार करने बैठ गए। अन्त में यह संवाद काशी नरेश के भी [illegible] गोचर हुआ।

दयानन्द ने वैदिक धर्म की प्रतिष्ठा के लिये विज्ञापन प्रचारित कि[illegible]

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

र्त्तिपूजा के खण्डन के विषय में काशीस्थ पण्डित मण्डली के साथ विचारार्थी ए; अधिक क्या, उन्होंने स्वयं ही पण्डितों को विचार के लिये आहूत किया। सी दशा म कुछ न बोल कर चुप हो रहना काशी वासियों के लिये किसी श में भी विधेय नहीं था। विशेषतः काशीधाम एक पवित्रधाम करके सिद्ध है। काशी की पवित्रता अथवा काशी की मानमहिमा सब ही श्वनाथादि देवमूर्त्तियों के ऊपर निर्भर है। यदि दयानन्द सरस्वती वारा- ी की छाती पर बैठ कर देवमूर्तिसमूह को मिथ्या प्रमाणित करें, तो एक जैसे देवगण असम्मानित होंगे, वैसे ही दूसरी ओर काशी भी माहात्म्य- हो जायगी। ऐसी अवस्था में कुछ न करके निश्चेष्टता का अवलम्बन किसी प्रकार भी कर्त्तव्य नहीं था। और भी एक बात थी। काशी के न से काशीनरेश सम्मानित हैं। काशी के असम्मान से काशीनरेश म्मानित हैं। इसलिए काशी की सम्मानरक्षा काशीनरेश को भी आवश्यक । इस सब विषय को धीरभाव से चिन्तन करके काशीराज ने पण्डित- ली के परामर्श की प्रार्थना की; और उनके अनुसार काशीस्थ पण्डितवर्ग निमन्त्रित करके उपस्थित विषय में कर्त्तव्यनिर्धारण के निमित्त उनके आलोचना करने लगे। अन्त में दयानन्द सरस्वती के साथ शास्त्रविचार ना ही सबकी सम्मति में विहित है यह स्थिर हुआ। और यह समाचार शीघ्र ही कर्णगोचर होने लगा कि काशी के पण्डितपुङ्गगण दयानन्द के थ शास्त्रसंग्राम में प्रवृत्त होंगे, उनकी पराभूति का साधन करके हिन्दुओं के लित मतविश्वासों की प्रतिष्ठा रक्खेंगे और उनके साथ सुधीशास्त्रिजन- सेवित वाराणसी के गौरव की रक्षा के लिए भी यत्नपर होंगे। इससे सब न्दित हो गये और वड़े कौतूहलाक्रान्त चित्त से शास्त्रार्थ के दिन की क्षा करने लगे।

अन्त में शास्त्रार्थ का दिन निर्धारित हो गया। सन् १८६९ ईस्वी की वीं नवम्बर की तारीख तदनुसार संवत् १९२६ कार्त्तिक शुदि १२ मंगल- र को दोपहर के तीन बजे इतिहासकीर्त्तित वाराणसी नगर में, भागीरथी पुण्यसलिल से प्रक्षालित पवित्र क्षेत्र में हिन्दुओं के सर्वप्रधान तीर्थस्थान में, तपूजा समर्थन के निमित्त महासभा का अधिवेशन हुआ। महासभा में ाराज काशीनरेश ने सभापति का पद ग्रहण किया। वह अपने सभापण्डित राचरण तर्करत्न और पण्डित विशुद्धानन्द स्वामी और बालशास्त्री प्रभृति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अतिरथ-महारथों के साथ बड़े समारोह से नियत समय पर आनन्दवा उद्यान में उपस्थित हुए। काशी की नाना श्रेणियों के सैंकड़ों लोगों अनुगमन किया। आनन्दबाग की ओर जनस्रोत प्रवाहित होने लगा देखते आनन्दबाग जनकल्लो से कल्लोहित हो गया। उस महती सभा दयानन्द का पक्षसमर्थक दूसरा व्यक्ति कोई भी नहीं था। सुतरां मण्डल के बीच में करियूथपरिवेष्टित केशरी के समान अकेले ही शास्त्रार्थ का समय आने पर दयानन्द ने काशीनरेश से जिज्ञासा की पण्डितगण वेदग्रन्थ लाये हैं?" काशीनरेश ने कहा, "वेदग्रन्थ आवश्यकता नहीं है, क्योंकि समस्त वेद पण्डितों के कण्ठस्थ हैं।" य दयानन्द बोले, 'ग्रन्थ न होने से पूर्वापर का मिलान रख कर विचार सकेगा। अस्तु। अब विचार का विषय क्या है?' उसके उत्तर में पण्डितगण बोले, आप मूर्त्तिपूजा का खण्डन करेंगे और हम उसक करेंगे।' यह सुनकर दयानन्द ने कहा, "तो आप में जो पण्डित वही अग्रवर्त्ती हों।" इस पर रघुनाथप्रसाद कोतवाल नामक एक व्य "पण्डित श्रेष्ठ कोई हों वा न हों, आपके साथ एक समय में एक पण्डित विचार करेंगे।" तब पूर्वोक्त पण्डित ताराचरण अग्रवर्ती हुए नन्द ने उनसे पूछा, "आप वेदों को प्रमाण मानते हैं या नहीं?"

तारा०—वर्णाश्रमीमात्र ही वेदों का प्रमाण ग्राह्य करते हैं।

दया०—तो पाषाणादिमूर्तिपूजा के विषय में यदि कोई वैदिक प्र तो बोलिये।

तारा०—जो व्यक्ति वेदभिन्न अन्य प्रमाण नहीं मानना चाहे, उन कहें?

दया०—वेदभिन्न अन्य पुस्तकों की कथा पर पीछे विचार किया जा किन्तु वेदों का ही विचार मुख्य हैं, वेदोक्त धर्म ही श्रेष्ठ धर्म है, इस वेदों की ही आलोचना करनी प्रथम उचित है। मनुस्मृति प्रभृति वेद ग्रन्थ भी प्रामाणिक रूप से ग्रहण किये जा सकते हैं। ऐसा कहने से वेद- वा वेद-अप्रसिद्ध कोई ग्रन्थ भी गण्य नहीं हो सकता।

तारा०—मनुस्मृति किस प्रकार से वेदमूलक है?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दया०—सामवेदीय ब्राह्मण में कथित है कि जो कुछ मनु ने कहा है वह औषध का भी औषध है‡।

इसका कुछ उत्तर न दे सकने पर पण्डित ताराचरण चुप हो गये तब विशुद्धानन्द स्वामी ने एक व्याससूत्र बोल कर प्रश्न किया कि वेद में इसका कोई मूल है वा नहीं।

दया०—यह भिन्न प्रकरण की बात है, इसलिए अब इसका विचार अनावश्यक है।

विशुद्धा०—आप यदि इसे जानते हैं तो अवश्य कहिये।

दया०—यदि कोई विषय किसी के कण्ठस्थ न हो, तो वह पुस्तक देखकर चल सकता है।

विशुद्ध०—यदि कण्ठस्थ नहीं है, तो काशी में शास्त्रार्थ के लिये आपके आने का क्या प्रयोजन था ?

दया०—क्या सब विषय आपके कण्ठस्थ हैं ?

विशुद्ध०—हां हैं।

दया०—तो धर्म का स्वरूप क्या है, बोलिये देखें ?

विशुद्धा०—वेदप्रतिपाद्य फल के सहित जो अर्थ है उसका ही नाम धर्म है।

दया०—यह तो आपका स्वरचित्त संस्कृत है, इसलिए यह प्रमाण के योग्य नहीं है। इस विषय में यदि कोई श्रुति वा स्मृति का प्रमाण जानते हो तो कहिए।

विशुद्धा०—जो चोदना लक्षण युक्त हो वही धर्म है। यह जैमिनि का वचन है।

दया०—आपसे मैंने श्रुति-स्मृति का प्रमाण दिखाने को कहा था। वह न दिखाकर सूत्र का प्रमाण क्यों दिखाते हैं ? क्या इसे ही कण्ठस्थ विद्या कहते हैं ? और चोदना शब्द का अर्थ तो प्रेरणा है ! इसका भी श्रुति-स्मृति का प्रमाण दिखाना होगा।

इसके उत्तर में विशुद्धानन्द ने कोई बात न कही। दयानन्द ने पूछा, "अच्छा आप तो धर्म का स्वरूप नहीं बतला सके, अब देखें, धर्म के लक्षण कितने हैं यही कहिये।"

‡ यद्वै किञ्चन मनुरवदत्तभेषजं भेषजतायाः।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विशु०—धर्म का एक ही लक्षण है।

दया०—वह क्या है ?

इसके उत्तर में विशुद्धानन्द कुछ न बोले। तब दयानन्द ने मनुः अनुसार धर्म के लक्षण‡ बतला कर कहा, "धर्म के यही तो दश लक्ष तब फिर आप यह कैसे कहते हैं कि धर्म का एक ही लक्षण है ?"

इस समय पण्डित बालशास्त्री ने अग्रसर होकर कहा, समस्त धर्मशा हमारे कण्ठस्थ हैं। जो इच्छा हो आप पूछ सकते हैं।"

दया०—आप अधर्म के क्या लक्षण हैं यही कहिये।

इसके उत्तर में बालशास्त्री कुछ भी नहीं कह सके।

तब यह देखकर कि एक-एक व्यक्ति का प्रश्न करना सुविधाजनक है, पण्डितगण ने कोलाहलपूर्वक प्रश्न किया, "वेद में प्रतिमा शब्द नहीं ?"

दया०—है।

पण्डितगण—वेद के किस स्थल में है ?

दया०—सामवेदीय ब्राह्मण के एक स्थल में है।

पण्डितगण—यदि वेद में प्रतिमा शब्द है, तो आप उसका खण्डन करते हैं ?

दया०—उस प्रतिमा शब्द के अर्थ पाषाणादि मूर्त्तिपूजा के नहीं है

यह कहकर उन्होंने सामवेदीय ब्राह्मणान्तर्गत अद्भुतशान्तिप्रकरण जिस अंश में प्रतिमा शब्द है उस अंश के अर्थ परिष्कृत रूप से समझ प्रतिपादित किया कि वेदोक्त प्रतिमा शब्द मूर्त्तिपूजा का प्रतिपादक नहीं तब पण्डितगण निरुत्तर हो गये। उसके पश्चात् विशुद्धानन्द स्वामी ने किया, "वेद किससे उत्पन्न हुआ है ?"

दया०—वेद ईश्वर से उत्पन्न हुआ है।

विशुद्धा०—किस ईश्वर से—न्यायशास्त्रप्रसिद्ध ईश्वर से, वा योगशा प्रसिद्ध ईश्वर से, अथवा वेदान्तशास्त्रप्रसिद्ध ईश्वर से वेद उत्पन्न हुआ है

दया०—तब क्या आप ईश्वर को बहुसंख्यक कहना चाहते हैं ?

‡ धृतिः क्षमादमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥ मनुः ६। ९२।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विशु०—ना ईश्वर तो एक ही है। तब किस लक्षणाक्रान्त ईश्वर से ...पन्न हुआ है—हम यही जानना चाहते हैं।

दया०—सच्चिदानन्दलक्षणक्रान्त ईश्वर से वेद उत्पन्न हुआ है।

विशु०—ईश्वर के साथ वेद का किस प्रकार का सम्बन्ध है? वह प्रति...द्य-प्रतिपादक के समान है, जन्य-जनक, स्व-स्वामिभाव, तादात्म्यभाव ...अथवा समवाय सम्बन्ध के समान है?

दया०—ईश्वर के साथ वेद का कार्यकारणभावसम्बन्ध है।

विशु०—जैसे सूर्य में वा मन में ब्रह्मबुद्धि पूर्वक उपासना की व्यवस्था ...ऐसे ही शालिग्राम में ब्रह्मबुद्धि करके उपासना करनी भी तो उचित है।

दया०—सूर्य में वा मन में ब्रह्मबुद्धि करके उपासना करने के विषय में ...में प्रमाण ‡ देखा जाता है, जैसे "मनो ब्रह्मेत्युपासीत आदित्यं ब्रह्मेत्यु...त।" किन्तु पाषाणादि के विषय में वेद में कोई प्रमाण नहीं है, इस ...वह विधेय नहीं हो सकती।

...इस समय पर माधवाचार्य नामक एक पण्डित ने सहसा एक मन्त्र को ...र उसमें आये हुए, 'पूर्त' शब्द के अर्थ पूछे।

दया०—पूर्त शब्द के अर्थों से वापी, कूप, तडाग और आराम का ग्रहण ...है।

माध०—पूर्त शब्द से पाषाणादि मूर्त्तिपूजा क्यों नहीं समझते?

दया०—पूर्त शब्द पूर्तिवाचक है, इसलिए उसके द्वारा पाषाणादि मूर्त्ति...नहीं समझी जाती। यदि संशय हो तो इस मन्त्र का निरुक्त और ब्राह्मण ...लीजिये।

माध०—वेद में पुराण शब्द है वा नहीं?

...वेद के बहुत से स्थलों में पुराण शब्द है, किन्तु वह ब्रह्मवैवर्त्तादि पुराण ...वाचक नहीं है, क्योंकि वह भूतकालवाची है और विशेषण रूप से व्यव...त हुआ है।

तब विशुद्धानन्द ने माधवाचार्य का पक्ष अवलम्बन करके बृहदारण्यक ...उपनिषद् का यह मन्त्र उद्धृत किया, "एतस्य महतो भूतस्य निःश्वसित-

‡ दयानन्द वास्तव में वेद के ब्राह्मणभाग को वेद नहीं मानते थे। उनके ...त में संहिताभाग ही यथार्थ वेद थे। सुतरां सूर्य में वा मन में ब्रह्मबुद्धि की ...था वेद की कथा नहीं है, केवल ब्राह्मण की कथा है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मेतदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं श्लोका व्याख्या नुव्याख्यानानीति" और प्रश्न किया कि इसमें आया हुआ पुराण शब्द विशेषण है।

दया०—इस विषय का ग्रन्थ लाने पर विचार करके कह सकता

तब पूर्वोल्लिखित माधवाचार्य वेदों के दो पत्र निकालकर बोले, स्थल में पुराण शब्द किसका विशेषण है ?"

दया०—इस स्थल का पाठ क्या है ? पढ़िये।

माध०—पाठ यही हैं, 'ब्राह्मणानीतिहासान पुराणानीति'।

दया०—इस स्थल का पुराण शब्द ब्राह्मण का विशेषण है अर्थात् नामक ब्राह्मण।

इसके उत्तर में बालशास्त्री अग्रेसर होकर बोले, "तो क्या कोई ब्राह्मण है ?"

दया०—कोई नवीन ब्राह्मण नहीं। स्यात् किसी को कभी यह सन्देह कि ब्राह्मण नवीन है, इसीलिये इस स्थल में पुराण शब्द विशेषण व्यवहृत हुआ है।

इसके उत्तर में विशुद्धानन्द स्वामी बोले, "यदि ऐसा है, तो इ शब्द का परवर्ती होकर पुराण शब्द किस प्रकार से विशेषण हो गया ?"

दया०—ऐसा हो सकता हैं जैसे "अजो नित्यः शाश्वतोयं पुराणो न हन्यमाने शरीरे।" जैसे इस स्थल में पुराण शब्द दूर होने पर भी देह विशेषण है और दूरस्थ होने से कोई शब्द विशेषण नहीं हो सकता— कोई नियम व्याकरण में दृष्ट नहीं पड़ता।

विशुद्धा०—इस स्थल में पुराण शब्द जब इतिहास का विशेषण न ह ब्राह्मण का ही विशेषण हो गया, तब इतिहास को नवीन कह कर ही करना होगा।

दया०—नहीं, ऐसा नहीं है, क्योंकि स्थलान्तर में पुराण शब्द इति का भी विशेषण दृष्ट होता है, जैसे "इतिहासः पुराणं पञ्चमो वेदानां वेद इत्यादि।

इसके पश्चात् माधवाचार्य ने पुनर्वार वेद के दो पत्र सबके सामने रख कहा, "इसमें लिखा हुआ है कि यजमान यज्ञ की समाप्ति पर दशवें दि पुराण का पाठ श्रवण करे। अब मैं यह पूछता हूँ कि इस स्थल का पुरा शब्द किसके विशेषण रूप से व्यवहृत हुआ है ?"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दया०—आप पत्र के इस अंश का पाठ कीजिये। तब देखा जायगा कि वह विशेष्य है वा विशेषण।

तब विशुद्धानन्द ने उसके पाठ करने के लिये स्वामी जी को ही अनुरोध किया। इसके उत्तर में स्वामी जी ने विशुद्धानन्द को पढ़ने के लिये कहा। तब विशुद्धानन्द, यह कह कर कि हम बिना चश्मे के नहीं पढ़ सकते, वेद के दोनों पत्र दयानन्द के हाथों में देकर पाठ के लिये अनुरोध करने लगे। इस प्रकार के बारंबार अनुरोध से बाधित होकर उसको पाठ करने के अभिप्राय से वेद के दोनों पत्रों पर दयानन्द दृष्टिपात कर रहे थे कि इतने में, अर्थात् पांच सेकिण्ड भी नहीं बीते थे, विशुद्धानन्द खड़े होकर बोले कि "हमें और प्रतिक्षा करने का समय नहीं है। हम जाते हैं।" इसके सुनते ही अन्य पण्डितवर्ग भी विशुद्धानन्द के दृष्टान्त का अनुसरण करके खड़े हो गये और कोलाहल मचाकर कहने लगे, "दयानन्द पराजित हो गये, दयानन्द पराजित हो गये।"‡

इस सम्बन्ध में विचार क्षेत्र में उपस्थित और दयानन्द से सुपरिचित एक व्यक्ति ने क्रिश्चियनइण्टेलिजेन्सर नामक समाचारपत्र में जो कुछ लिखा था उसको यहां उद्धृत करते हैं। उन्होंने लिखा है:—

"The date of his arrival in Benares I do not know. It must have been in the beginning of October. I was then absent. I first saw him after my return in November. I went to see him in company with the Prince of Bharatpore and one or two pandits. The excitement was then at its height. The whole of the Brahmanic and educated population of Benares seemed to flock to him. In the verandah of a small house at

---

‡इस विचार्य पुराण शब्द के विषय में दयानन्द ने उसके पश्चात् उत्तर प्रदान किया था। उपर्युक्त पत्रोल्लिखित अंश यह था 'दशमे दिवसे यज्ञान्ते पुराणविद्यावेद इत्यस्य श्रवणं यजमानः कुर्यादिति।' दयानन्द ने इसका अर्थ यह किया था 'पुराणविद्या अर्थात् पुरातन विद्या अर्थात् ब्रह्मविद्यावेद पुराणविद्या है क्योंकि वेद ब्रह्मविद्या अर्थात् उपनिषद् समन्वित है और इस मन्त्र के पूर्व प्रकरण में ऋग्वेदादि वेदचतुष्टय के श्रवण की कथा है किन्तु उपनिषद् श्रवण की कथा नहीं है। इसी कारण इस स्थल में पुराणविद्यावेद वाक्य से उपनिषद् ही प्रतिपाद्य है। इसलिये यह पुराण शब्द ब्रह्मवैवर्त्तादि नवीन ग्रन्थों का बोधक न होकर विशेषण रूप से ही व्यवहृत हुआ है।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

the end of a large garden near the monkey-tank, he was h ing daily levees, from early in the morning till late in evening, for a continuous stream of people who came, eager see and listen to, or dispute with the novel reformer. It not appear, however, that the heads of the orthodox party the pandits of the greatest repute ever visited him, unless did it secretly. The intensity of the excitement at last ind the Raja of Benares in concert with his court pandits and men of influence, to take some notice of the reformer, an arrange a public disputation between him and the orth party, in order to allay the excitement by a defeat o reformer. But I fear there was a determination from beginning that they would win the day by any means whe foul or fair. The disputation took place on the 17 November, in the place where the reformer had taken u abode; it lasted from about 3 to 7 P. m. The Raja himsel present and presided......The discussion commenced Dayananda asking Pandit Taracharana, the Raja's pandit, who had been appointed to defend the cau orthodoxy, whether he admitted the Vedas as the autho When this had been agreed to, he requested Taracharana produce passages from the Vedas sanctioning idolatry, pa nacipujana (worship of stones, & c.) Instead of doing Taracharana for some time tried to substitude proofs from Puranas. At last Dayananda happening to say that he admitted the Manusmriti, Sharirak-sutras, &c. as authori tive, because founded on the Vedas, Vishudhananda, great Vedantist interfered and quoting a Vedant-Sutra from Sharirak-Sutras asked Dayananda to show that it was found on the Vedas. After some hesitation Dayananda replied th he could do this only after refering to the Vedas, as he did remember the whole of them. Vishudhananda then taunting said if he could not do that, he should not set himself up as teacher in Benares. Dayananda replied, that none of t

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

pandits had the whole of the Vedas in his memory. Thereupon Vishudhananda and several others asserted that they knew the whole of the Vedas by heart. Then followed several questions ...put by Dayananda to show that his opponents had asserted more than they could justify. They could answer none of his questions. At last some pandits took up the thread of the discussion again by asking Dayananda whether the term pratima (likeness) and purti (fulness) occuring in the Vedas did not sanction idolatry. He answered that rightly interpreted, they did not do so. As none of his opponents objected to his interpretation, it is plain, that they either perceived the correctness of it, or were too little acquainted with the Vedas to venture to contradict it. Then Madhavacharya, a pandit of no repute, produced two leaves of a Vedic MS., and reading a passage containing the word 'Puranas,' asked to what this term referred. Dayananda replied; it was there simply an adjective, meaning "ancient," and not the proper name. Vishudhananda challenging this interpretation, some discussion followed as to its grammatical correctness; but, at last all seemed to acquiesce in it. Then Madhavacharya again produced two other leaves of a Vedic MS, and read a passage with this purport, that upon the completion of a yajna (sacrifice) the reading of the Puranas, should be heard on the 10th day, and asked how the term 'Puranas' could be there an adjective. Dayananda took the MS, in his hand and began to meditate what answer he should give. His opponents waited but two minutes, and as still no answer was forthcoming, they rose, jeering and calling out that he was unable to answer and was defeated, and went away. The answer, he afterwards published in his pamphlet."*

इसका भावार्थ यह है—"मैं नहीं कह सकता कि दयानन्द किस समय काशी में आये । बोध होता है कि वह अक्टूबर मास के आरम्भ में ही आये

* The Christian Intelligencer of March 1870, quoted in the Triumph of Truth p. 31-33.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होंगे। जब मैं नवम्बर मास में काशी लौट कर आया, तब मेरा उनसे
हुआ। भरतपुर के महाराज के साथ मैं उनसे मिलने गया। हमारे सा
एक पण्डित भी गये थे। तब दयानन्द के विषय में काशी में तुमुल आ
हो रहा था। काशीस्थ ब्राह्मण और शिक्षितगणों के दल के दल उनके
जाते थे। दयानन्द एक छोटे से घर के बाराम्दे में बैठ कर आये हुए लो
साथ बातचीत करते थे। वह घर हनुमानकुण्ड के पास एक विस्तृत उ
प्रान्त्यभाग में था। प्रातःकाल से सन्ध्या काल पर्यन्त नाना श्रेणी के लो
के समान अविश्रान्त भाव से उस घर के बाराम्दे में बैठते थे। उनमें
दयानन्द को केवल देखने के लिये और कोई २ उनके साथ बातचीत वा
लोचना करने के निमित्त वहां जाते थे। काशी का कोई समाजपति
कोई प्रसिद्धि सम्पन्न पण्डित दयानन्द के पास जाता हुआ नहीं देखा
सम्भव है गुप्तभाव से वे लोग आते जाते हों। क्रमशः दयानन्द के सम्ब
आन्दोलन इतना प्रबल हो गया कि काशीनरेश की सभा के पण्डि
अन्यान्य सम्भ्रान्त व्यक्तियों के परामर्श के अनुसार प्रकाश्यभाव से
करना ही महाराजा काशी ने युक्तिसंगत समझा, क्योंकि उन्हें
हो गया था कि दयानन्द को विचारक्षेत्र में पराभूत किये विना वह उच्छ्
आन्दोलनस्रोत किसी प्रकार भी निवारित नहीं होगा। इसलिये
होता है कि किसी न किसी प्रकार से दयानन्द को पराजित कर
उन लोगों का पहिले से ही संकल्प था। अस्तु। १७ वीं नवम्बर उनके
विचार का दिन निरूपित हुआ। उस दिन अपराह्न समय में पूर्वोल्लि
उद्यान में उपस्थित होकर महाराजा काशी ने विचारसभा के सभापति
आसन ग्रहण किया। तीन बजे से विचार प्रारम्भ करके सन्ध्या के ७
समाप्त हुआ। प्रथम दयानन्द ने राजपण्डित ताराचरण से प्रश्न किया
वह वेदों की प्रामाणिकता स्वीकार करते हैं वा नहीं। उसके उत्तर में तारा
चरण के उसे स्वीकार करने पर दयानन्द ने उनसे पूछा कि वेदों के कि
स्थल में पाषाणादि मूर्त्तिपूजा की विधि है वा नहीं। उसके उत्तर में तारा
चरण पुराणों के प्रमाण उपस्थित करने की चेष्टा करने लगे। यह देख
दयानन्द बोले कि वह मनुस्मृति और शारीरिकसूत्र प्रभृति वेदमूलक ग्रन्थों
भिन्न और किसी ग्रन्थ की प्रामाणिकता स्वीकार नहीं करते हैं। उसके उत्
में प्रसिद्ध वेदान्ती विशुद्धानन्द स्वामी ने एक वेदान्त सूत्र पढ़ कर दयान

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जिज्ञासा की कि वेद में उसका कोई मूल है वा नहीं। इस पर दयानन्द कुछ र चुप रहने के पश्चात् बोले कि विना वेदों के ग्रन्थ देखे इस बात का उत्तर हीं दे सकते। इसके उत्तर में विशुद्धानन्द ने किञ्चित् अवज्ञा के साथ कहा यदि आप ग्रन्थ देखे विना नहीं कह सकते, तो आपको काशी में विचार लिये आना उचित नहीं था। इस पर दयानन्द ने कहा—सब वेदों को तिपट में अङ्कित करके रखना किसी पण्डित के लिये भी सम्भव नहीं है। ह सुनकर विशुद्धानन्द प्रभृति पण्डितगण बोले कि समस्त वेद उन सबके ही स्थ हैं। तब दयानन्द ने कई प्रश्न पर प्रश्न किये, किन्तु वे दयानन्द के प्रश्न का भी उत्तर न दे सके। इससे सिद्ध हो गया कि समग्र वेद उनमें सी के भी कण्ठस्थ नहीं थे। इसके पश्चात् पण्डितगण ने दयानन्द से कि वेद में प्रतिमा और पूर्ति शब्द हैं वा नहीं। इसके उत्तर में उन्होंने कि वेद में दोनों शब्द हैं तो सही, परन्तु यह दोनों शब्द मूर्तिपूजा के में व्यवहृत नहीं होते। इसके पश्चात् जिन २ अर्थों में दोनों शब्द व्य- होते हैं दयानन्द ने उसकी व्याख्या करके बतला दी। उनकी व्याख्या षय में पण्डितों में से किसी ने कोई आपत्ति नहीं की। इससे जाना गया ा तो पण्डितगण इन दोनों शब्दों के यथार्थ अर्थ नहीं जानते थे, या वे से उत्तम रूप से परिचित नहीं थे। जो हो, कुछ समय पश्चात् माधवा- नामक एक अख्यातनामा पण्डित ने वेदों के दो पत्र निकाले और उनमें हुए पुराण शब्द के अर्थ पूछने पर दयानन्द ने उसकी व्याख्या कर दी वह विशेषण है; किन्तु विशुद्धानन्द स्पर्धा के साथ उस व्याख्या को भ्रान्त द्ध करने की चेष्टा करने लगे। तब उस पुराण शब्द के व्याकरणानुकूल र्थ लेकर कुछ देर तक विचार होने लगा। किन्तु अन्त में आपत्ति करने वालों को चुप होना पड़ा। तदनन्तर पूर्वोक्त माधवाचार्य पुनः दो वेद के पत्र निकाल कर पढ़ने लगा। उसमें लिखा था कि यजमान यज्ञ के पश्चात् दशवें दिन पुराण श्रवण करे। माधवाचार्य ने दयानन्द से पूछा कि यह पुराण शब्द किसका विशेषण है। दयानन्द ने उस उल्लिखित अंश को ध्यानपूर्वक देखने के अभिप्राय से वेद के दोनों पत्रों को हाथ में ले लिया। उन्होंने उन्हें हाथ में लेकर वेद के पत्रों पर दो मिनिट भी दृष्टिपात नहीं किया था कि इतने में पण्डित- गण खड़े होकर उपहास के साथ और ऊँचे स्वर से यह कहते हुए कि दयानन्द उत्तर नहीं दे सके, दयानन्द पराजित हो गये, चले गये। किम्बहुना, दयानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ने उसका उत्तर काशीशास्त्रार्थनामक पुस्तक में प्रकाशित कर दिया।"

इस सम्बन्ध में निम्नलिखित वृत्तान्त सुप्रसिद्ध पायोनियर पत्र से गया है। यद्यपि यह वृत्तान्त बहुत दिन पीछे लिखा गया, तो भी पा समक्ष उपस्थित विषय का एक उज्ज्वल और सच्चा चित्र, अङ्कित अभिप्राय से हम इसे प्रकाशित करते हैं। वृत्तान्त इस प्रकार है :—

"It was about ten years ago that Dayananda Sar Swami made his first debut. at Benares. He threw down lenge to the pandits of Benares to meet him to discuss the tion whether idolatry was sanctioned by the sacred writi the Hindoos. The challenge was taken up by the pandits under the patronage and protection of the Mahara Benares, assembled at a garden-house near the temple of The Maharajah himself presided in the meeting. Hund learned priests and thousands of the unlearned laity th there to witness the great controversy. The spokesmen Pandit Bala Shastri, a late Professor in the Sanskrit C Benares, and Pandit Taracharana Tarkaratna, the Maha court pandit. Several other pandits subsequently joined discussion. The proceedings of the meeting were taken by a reporter, in the person of the learned editor of the Veda (published in the Biblictheca Indica), and which Published in his monthly Sanskrit Journal, the defunct I Kamra Nandini. As I have said before, the question at was whether idolatry was sanctioned by the sacred writin the Hindoos. The pandits urged that the Vedas did not, one of the ten commandments of the Jews, distinctly proh idol-worship, while the Purans evidently enjoined it. The Sw denied the authoritative character of the Purans asser among many other things, that the word Puran was invari used as an adjective, and stood as qualifying word before work that had any pretension to antiquity. The pandits, on other hand, maintained that the word Puran was a pro name, and designated only certain sacred writings, forming ground-work of modern Hindooism. The Swami challenged

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ndits to show him in any portion of the Vedic writings the e of the word as a noun. Unfortunately for his cause one of e pandits happened to be present with some leaves of a very cred work, whose authority the Swami could not deny, con- ining the very word used as a substantive. No effort on the rt of the learned Swami, in changing the construction of the tence, could make it otherwise. The Swami hung down his ad, and the pandits clapped their hands in triumph. An mpt was made by some turbulent spirits to hoot the Swami, to inflict a personal chastisement on him for his audacity uestioning the propriety of the national mode of worship; he presence of the Maharajah quenched the ebullition of spirit. The Swami remained at Benares for some days, e had lost his prestige, and the report of the victory of the its went abroad to gladden the hearts of the pious Hindus. is an unvarnished account of his first combat with the mins of Benares in the arena of theological controversy."*

इसका मर्म यह है-"प्राय: १० वर्ष हुए कि स्वामी दयानन्द सरस्वती के काशीस्थ पण्डितों का प्रथम शास्त्रार्थ हुआ था। उस विचारक्षेत्र में नन्द ने काशी के पण्डितों को स्पर्धा के साथ यह सिद्ध करने के लिये त किया कि मूर्तिपूजा वेदादि शास्त्रों के अनुकूल है वा नहीं। पण्डित- दयानन्द के बुलाने पर और महाराजा काशी की प्रेरणा से प्रेरित होकर वार के लिये उपस्थित हुए। दुर्गामन्दिर के समीप एक उद्यान-वाटिका में हाविचार का आयोजन हुआ। स्वयं काशीनरेश विचार सभा के सभापति ने। सैकड़ों सुशिक्षित पण्डितपुरोहित और सहस्रों अशिक्षित व्यक्ति महा- विचार के देखने के अभिप्राय से वहां उपस्थित हुए। काशी के राजपण्डित ताराचरण तर्करत्न और संस्कृत कालिज के भूतपूर्व अध्यापक पण्डित बाल- शास्त्री उपस्थित पण्डित मण्डली के प्रतिनिधि रूप से दयानन्द के साथ शास्त्रार्थ के लिये प्रवृत्त हुए। पीछे अन्यान्य पण्डितगण भी उनके साथ योग देने लगे। प्रत्नकम्रनन्दनी नामक संस्कृत मासिकपत्रिका के सम्पादक ने शास्त्रार्थ का विवरण लिपिबद्ध किया था। उसके पश्चात् वही विवरण प्रत्न-

* The Pioneer 1880 January 8.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कमनन्दिनी में प्रकाशित हुआ था। अस्तु। जिज्ञासित प्रश्न के सम्ब पण्डितगण ने दृढ़ता के साथ कहा कि यहूदियों के निषेध सूचक दश के समान मूर्तिपूजा वेद में विशिष्ट भाव से निषिद्ध नहीं है; उसके भिन्न में तो स्पष्टाक्षरों में उसकी विधि है।" किन्तु दयानन्द ने पुराणों की णिकता स्वीकार नहीं की। विशेषतः उन्होंने यह सिद्ध करने की चेष्टा पुराण शब्द प्राचीनतर ग्रन्थों के विशेषण रूप से ही व्यवहृत हुआ है विरुद्ध पण्डितगण ने उसे विशेष्य कह कर प्रतिपादन के लिये तर्क उसके पश्चात् दयानन्द ने पण्डितगण से यह दिखाने का अनुरोध कि वेद के किस स्थल में पुराण शब्द विशेष्य रूप से व्यवहृत हुआ है। एक पण्डित ने एक प्रामाण्य ग्रन्थ के कई एक पत्रे निकाल कर यह प्र करने का प्रयास किया कि उनमें पुराण शब्द विशेष्य का वाचक का विषय है कि उसके उत्तर में दयानन्द कुछ भी न कह सके और हो गये। इस प्रकार काशी के पण्डितगण शास्त्रार्थ में जयलाभ करके बजाने लगे। कई उग्रप्रकृति अशिक्षित व्यक्ति दयानन्द पर आक्रमण लिये उद्यत हुए, परन्तु काशीनरेश के सम्मुख ऐसा न कर सके। के पश्चात् दयानन्द कुछ दिन तक काशी में रहे। उन दिनों में वह और हतगौरव होकर रहे। इस ओर पण्डितों के विजय-संवाद के च विघोषित होने से हिन्दुओं का हृदय आनन्द से प्रफुल्लित होने लगा। वाराणसी के पण्डितों के साथ दयानन्द के प्रथम बार के शास्त्रार्थ वृत्तान्त अनतिरञ्जित और यथार्थ है, इस विषय में अणुमात्र भी सन्दे हो सकता।

किन्तु उल्लिखित वृत्तान्त को असत्य बतला कर एक व्यक्ति ने इस प्रकार प्रतिवाद किया है।

"I refrain from giving the details of the discussion, for t would hardly be intelligible to the majority of your read Those who take a special interest in the controversy may r to a small pamphlet, entitled the Shastrarth, which can be l of Messrs. Brij Bhooshan Dass, of Benares. Suffice it to that the question at issue was whether idolatry is sanctioned the Vedas which, according to the orthodox Hindu, are Div Revelation. The Swami maintained that the Vedas do not in

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

e idolatry, and the pandits did not produce at the time nor ve they produced since, a single passage from the Vedas that ld dislodge the Swami from his position. The answer of the ndits were extremely evasive. The whole controversy was no ter than a regular Tamasha, for the Brahmins did not confine ir arguments to the point at issue, but carried on alterations arious points of a Hindu jurisprudence, logic, and Sanskrit mar which had not the least bearing on the main question. —can in the face of the above facts boldly assert that vami got the worst of the fight. I leave for your impartial s to judge."*

का मर्म यह है—"काशी के शास्त्रार्थ का सविस्तार वृत्तान्त प्रकाशित यहां उपयोगी नहीं है। जिन्हें इस विषय का तथ्य जानने की इच्छा बनारस के व्रजभूषणदास से काशी-शास्त्रार्थ नामक पुस्तक क्रय करके कते हैं। मूर्तिपूजा वेदानुमोदित है वा नहीं—यही प्रश्न काशी के र्थ का मूल प्रश्न था। किन्तु पण्डितगण मूल प्रश्न का कोई भी उत्तर और नाना अप्रासङ्गिक बातों पर विचार करने लगे। अर्थात् मूल को छोड़ कर और अन्यान्य नाना विषयों की नाना अप्रासंगिक बातों ा कर काशी के पण्डितों ने उस शास्त्रार्थ के कार्य का वस्तुतः एक ा बना दिया था। फिर···ऐसी दशा में कैसे कहते हैं कि स्वामीजी के पण्डितों से पराजित हो गये थे।

उपस्थित विषय पर एक और व्यक्ति की सम्मति उद्धृत करते हैं। लिखा है :—

That stronghold of Hindu idolatry and bigotry, which cording to Hindu mythology stands on the trident of Siva, d is therfore not liable to the influence of earth-quakes, has tely been shaken to its foundations by the appearance of a ge from Guzerat. The name of this great personage is Daya-anda Saraswati. He has come with the avowed object of giving death-blow to the present system of Hindu worship. He consi-ers the Vedas to be the only religious books worthy of regard d styles the Puranas as cunningly-devised fables—the inven-

* The Pioneer 1880 January 15.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

tion of some shrewd Brahmans of a later period for the subservance of their selfish motives. The Vedas, says he, entirely ignore idol-worship, and he challenges the pandits and great men of Benares to meet him in argument. Some time ago the Maharajah of Ramanagar held a meeting in which he invited the great pandits and the elite of Benares. A furious and protected logomachi took place between Dayanand Saraswati and the pandits, but the latter notwithstanding their boasted learning and deep insight into the Sastras, met with a signal discomfiture. Finding it impossible to overcome the great man by a regular discussion, the pandits resorted to the adoption of a sinister end to subserve their purpose. They made over to the sage an extract from the Puranas that savored of idolatry and handed it over to the Sarasvati saying that it is a text from the Vedas. The latter was pondering over it, when the host of the pandits headed by the Maharajah himself clapped their hands signifying the defeat of the great Pandit in the religious warfare. Though mortified greatly at the unmanly conduct and hard treatment of the Maharajah, Dayananda Swami has not lost courage. He is still waging the religious contest with more earnestness than ever. Though alone, he stands undaunted in the midst of a host of opponents. He has the shield of truth to protect him and his banner of victory is wafting in the air. The Pandit has lately published a pamphlet styled "Tatta Dharma Bichar," containing particulars of the religious contest above alluded to: and has issued a circular calling on the pandits of Benares to show which part of the Vedas sanctions idol-worship. No one has ventured to make his appearence.

"Hearing the great fame of the sage, we made up our minds—to pay him a visit, and accordingly went to Anand Bag, near, Durga Bati in Benares, in which romantic garden he has taken up his temporary residence. The Rishi-like appearance of the venerable Pandit, his cheerful countenance and child like simplicity, made on our minds an impression never to be effaced. When he began to speak, manna dropped from

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

his lips, and the wise instructions he gave us forced us to the conviction that the golden age of India has not altogether disappeared. The great Pandit after 18 years of research into the Vedas has come to the conclusion that they do not savor of idolatry at all and with the view of rususcitating the Vedic religion of the ancient sages of India, he has come out on his mission of religious reformation. He has done adieu to all worldly enjoyments, he has assumed the austerities of an anchorite, and is buoyant with the hope of regenerating Hinduism and securing a lasting boon for his countrymen. With the view of promulgating correct theistic doctrines and dispelling the misunderstanding of the present Sannyasis and pandits who hold pantheism to be the main doctrine of the Vedas, he is now appealing to his educated and enlightened brethren to establish a Vedic School, the teachership of which he will most gladly accept."

उपर्युद्धृत अंग्रेजी अंश का तात्पर्य यह है—"काशीक्षेत्र मूर्तिपूजा का दुर्ग स्वरूप है। अधिकन्तु महादेव के त्रिशूल के ऊपर स्थित होने से काशी भूकम्प में भी कभी कम्पित नहीं होती। परन्तु सम्प्रति गुजरातदेशीय एक संन्यासी के आविर्भाव और प्रभाव से काशी कम्पित हो गई। संन्यासी का नाम दयानन्द सरस्वती है। हिन्दुओं के मूर्तिपूजा का उच्छेद करने के ही अभिप्राय से सरस्वती महाशय काशी में उपस्थित हुए हैं। वह वेद को हिन्दुओं का एक मात्र धर्मशास्त्र मान कर सम्मान करते हैं; और पुराणादि ग्रन्थों को कल्पना-कल्पित, विशेषतः स्वार्थ परायण आधुनिक पण्डितों की बुद्धिप्रसूत, कह कर अग्राह्य बताते हैं। दयानन्द कहते हैं कि वेद में आदि से मूर्त्ति पूजा का प्रसङ्ग नहीं हैं; यहां तक कि यदि वेद के किसी स्थल में मूर्ति पूजा का कोई प्रसङ्ग हो, तो उनके दिखाने के लिये उन्होंने काशी की पण्डित-मण्डली को शास्त्रार्थ के लिए आहूत किया। उसके अनुसार रामनगर ‡ के महाराजा ने काशी के पण्डितों और अन्यान्य शिक्षित व्यक्तियों को बुला कर कुछ दिनों

*The Hindoo Patriot 1870 January 17.

‡ रामनगर में रहने से काशी के महाराजा को रामनगर का महाराजा भी कहते हैं। रामनगर काशी तलवाहिनी गंगा के दूसरे पार है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पहिले एक महासभा का अधिवेशन किया। सभा में दयानन्द के साथ पण्डितों का बहुत देर तक वाग्युद्ध रहा शास्त्र सम्बन्ध में पंडितों की तीक्ष्ण दृष्टि होने पर भी वह लोग निस्संशय ही दयानन्द से पराजित हो गये थे अर्थात् उन्हें न्यायानुसार विचार में पराजित करना असम्भव समझ कर पण्डितों ने अन्यायुक्त विचार का आश्रय ग्रहण कर लिया था। उन्होंने मूर्ति-पूजा को वेद प्रतिपादित सिद्ध करने के अभिप्राय से कई एक पौराणिक मन्त्रों ‡ को वैदिक मन्त्रों के रूप में लिख कर दयानन्द के हाथ में दे दिया। दयानन्द ने उन दिये हुए और पत्र में लिखे हुए मन्त्रों को देखा ही था कि इतने में पंडितगण करतालि दे कर और यह कह कर कि "दयानन्द पराजित हो गये" उठ खड़े हुए दयानन्द पंडितों के ऐसे अन्याय के व्यवहार से दुःखित होने पर भी निरुत्साहित नहीं हुए; प्रत्युत वह अब भी अधिकतर उत्साह के साथ वहां के पंडितों को शास्त्रसंग्राम के लिए आह्वान करते हैं। वह अकेले होने पर भी विपक्षी दल के भीतर वीर के समान अविचलित रहे हैं। कारण यह है कि दयानन्द ने सत्यरूपी दुर्भेद्य वर्म्म से अपने को आवृत किया है। सुतरां उनकी विजय पताका भी वायु से मन्द-मन्द आन्दोलित होती है। उन्होंने 'सत्यधर्मविचार' नामक एक पुस्तक में उक्त शास्त्रार्थ का वृत्तान्त लिपिबद्ध किया है और यह दिखाने के लिये कि वेद के किसी स्थल में मूर्तिपूजा की परिपोषक कोई कथा है वा नहीं वाराणसी के पण्डित वर्ग को आह्वान करते हैं; किन्तु वाराणसी का कोई पण्डित उनके आह्वान का उत्तर देने के लिए उद्यत नहीं हो सका। हम एक दिन उनसे मिलने के लिए दुर्गावाड़ी के निकटस्थ आनन्द बाग में गये थे। हमने जाकर देखा कि दयानन्द की मूर्ति ऋषि के समान है, उनका मुख सर्वदा ही प्रफुल्लित और प्रकृति अत्यन्त सरल है। हमारे साथ बात करते समय, बोध होता था कि, उनके मुख से अमृत गिरता है। अठारह वर्ष वेदों पर विचार करने के पश्चात् दयानन्द इस सिद्धान्त पर पहुंचे हैं कि मूर्त्तिपूजा

‡ "काशी शास्त्रार्थ नामक हिन्दी पुस्तक में जो लिखा हुआ है उससे यह प्रतीत नहीं होता हैं कि पण्डितों ने दयानन्द के हाथ में कोई पौराणिक मन्त्र वेदमन्त्र कह कर दे दिये थे। काशी शास्त्रार्थ में यह लिखा है कि पण्डितों ने उन्हें सामवेदीय ब्राह्मण विशेष के मन्त्र दिए थे, तो भी उपर्युक्त कथा को नाहीं कह कर पौराणिक मन्त्रों की उपस्थिति की कथा को भी असम्भव नहीं कहा जा सकता।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

किसी अंश में भी वेदानुकूल नहीं है। वह सांसारिक सुख का सर्व प्रकार से ही परिहार करके कठोर भाव से कालातिपात करते हैं और हिन्दु धर्म के संस्कार से स्वदेश का यथार्थ कल्याण साधन करने के अभिप्राय से आशान्वित हो रहे हैं। उन्होंने वेदप्रतिपादित विशुद्ध ब्रह्मवाद को प्रतिष्ठित करने के उद्देश्य से एक वेद विद्यालय स्थापना करने का भी संकल्प किया है।"

काशी के पण्डित दयानन्द के साथ शास्त्रार्थ में शास्त्रार्थ की नीति को असम्मानित करके ही चुप नहीं रहे। उन्होंने इस विषय का विज्ञापन प्रचारित किया कि दयानन्द पराजित‡ हो गये। दयानन्द प्रति—विज्ञापन प्रचारित करके उनकी उक्ति के अमूलक होने की घोषणा करने लगे। इसके अतिरिक्त वह शास्त्रार्थ के पश्चात् काशी में जितने दिन रहे, उनमें से एक दिन के लिये भी वहां के पण्डित वर्ग को शास्त्रार्थ के लिए आह्वान करने से कुण्ठित नहीं हुए। केवल यही नहीं, इन घटना के पश्चात् वह जितनी बार वाराणसी गये उतनी ही बार वहां के पण्डितपुंगवों को यह प्रतिपादित करने के लिये कि मूर्तिपूजा वेदानुकूल है वा नहीं आहूत किया। आश्चर्य है कि दयानन्द के

‡ काशी के शास्त्रार्थ में दयानन्द पराजित नहीं हुए। इस विषय में हमारे हाथ में और भी प्रमाण हैं। फर्रुखाबाद के पूर्वोल्लिखित रईस पन्नालाल इस विषय का तथ्य जानने के लिए काशी आये और अनुसन्धान करने पर उन्हें विदित हुआ कि दयानन्द पराजित नहीं, हुए। पूर्वोक्त आत्मानन्द स्वामी काशी शास्त्रार्थ के समय उपस्थित थे। उन्होंने भी पूर्वोल्लिखित पण्डित गोपालराव हरि से आकर कहा था कि दयानन्द परास्त नहीं हुए, काशी के ही पण्डित परास्त हुए। इसके अतिरिक्त हमारे श्रद्धाभाजन सुहृद् वैरिस्टर श्रीयुक्त चन्द्र-शेखर सेन महाशय शास्त्रार्थ के समय काशी में थे और वह दयानन्द के साथ कुछ आत्मीयता के सूत्र में आबद्ध हो गये थे। उनके मुख से भी हमने सुना है कि काशी के शास्त्रार्थ में स्वामी जी पराजित नहीं हुए। शास्त्रार्थ के दूसरे दिन स्वामी जी ने सेन महाशय से कहा था कि मैं पराजित नहीं हुआ, केवल पंडितों ने कोलाहल मचा दिया है कि मैं पराजित हो गया। यह बात भी सेन महाशय के मुख से सुनी है कि शास्त्रार्थ के पश्चात् दयानन्द को मारने का भी उद्योग हुआ था, परन्तु पुलिस के सहाय्य से वह उद्योग व्यर्थ हो गया था। काशी के पंडितों ने उपर्युक्त विज्ञापन पत्र के भिन्न "दयानन्द पराभूति" नामक संस्कृत में और "दुर्जनमतमर्दन" नामक हिन्दी में एक २ पुस्तक भी प्रकाशित की थी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आह्वान करने पर पण्डितों में से कोई भी अग्रेसर नहीं हुआ; और दूसरी ओर उनके पराभूति रूप असत्य संवाद के प्रचार करने से भी पण्डितों को लज्जा का बोध नहीं हुआ। अस्तु। इस बीच में कई एक रेलवे के कर्मचारियों के अनुरोधवश दयानन्द एक दिन मुगलसराय गये। उनका अभिप्राय दयानन्द के निर्विघ्नता पूर्वक धर्मालोचना करने का था। हाली शहर के निवासी श्रीयुक्त दीननाथगङ्गोपाध्याय महाशय स्वामी जी को इस प्रकार आह्वान करने के पक्ष में अग्रणी थे। स्वामी जी उनके साथ मुगलसराय के मठ में गये, और तृणावृत-भूमि पर बैठ कर नाना प्रकार की हितकर कथाओं के प्रसङ्ग से उन की तृप्ति करके काशी में चले आये।

काशी में एक वेदविद्यालय के स्थापित करने की दयानन्द को अभिलाषा थी। केवल काशी में ही नहीं, भारतसाम्राज्य की राजधानी कलकत्ता नगर में भी वैदिक धर्म्म के प्रकाश के विकिरण करने के अभिप्राय से एक वैदिक पाठशाला स्थापन करने का उन्होंने संङ्कल्प किया था। इस विषय पर पैट्रियाट-पत्रिका के पूर्वोल्लिखित सदाशय लेखक ने ऐसा लिखा है :—

"In conclusion, we would make a strong appeal to the heads of the orthodox class of Hindoos to assist Dayananda Saraswati in establishing a Vedic School. Almost all the educated natives are theists at heart, and though some cling to idolatry for the sake of their parents and nearest relations; many have avowedly adopted Brahmaism. It is therefore meet that the Vedic religion should be revived. The tide of progress can not obstructed. and the members of the 'Sanatan Dharm Rakshni Sabha' will ill-succeed in keeping up the present system of Hinduism. They will scure the lasting gratitude of the Hindoos if they try to purify Hinduism from the corruprion that have crept into it, and establish the Vedic religion as the religion of the educated."*

उपर्युक्त अंश का तात्पर्य यह है—"दयानन्द-सरस्वती के प्रस्तावित वैदिकविद्यालय स्थापन करने के विषय में हम हिन्दुसमाज के नेताओं को आग्रहपूर्वक आह्वान करते हैं, क्योंकि यहाँ के शिक्षित व्यक्तियों में प्रायः सबही

*The Hindoo Patriot 1870, January 17.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भीतर से एकेश्वरवादी हैं। कोई २ माता-पिता वा आत्मीय स्वजनों के अनुरोध से मूर्तिपूजा की पोषकता करते हैं; परन्तु अनेकों ने अब प्रकट रूप से ब्राह्ममत, ग्रहण कर लिया है। यह उन्नतिप्रवाह किसी से रुकने वाला नहीं है। इसलिये वैदिक धर्म्म का पुनरुद्दीपन करके प्रचलित हिन्दुधर्म्म के संस्कार करने की चेष्टा करनी सबका ही कर्त्तव्य है। इस कार्य में सहायता करने से सनातन धर्मरक्षिणी सभा निश्चय ही हिन्दु-साधारण की कृतज्ञता का पात्र होगी।

पैट्रियाट पत्रिका के प्रवीण सम्पादक ने इस उत्साहपरिपूरित और सुयुक्तियुक्त कथा का अन्तःकरण से अनुमोदन किया था। उन्होंने यह विलक्षण रूप से हृदयस्थित कर लिया था कि प्रस्तावित वैदिकविद्यालय के प्रतिष्ठित होने से इस देश का बहुत मङ्गल साधित होगा। इस कारण वह केवल पूर्वोल्लिखित कथा के अनुमोदन वा समर्थन करने से ही निश्चिन्त नहीं हुए। किन्तु उन्होंने उपर्युल्लिखित-पत्र लेखक से अनुरोध के साथ ऐसे-ऐसे अत्यावश्यक विषयों पर जिज्ञासा की जैसे कि किस उपाय के अवलम्बन करने से यह शुभसाधक सङ्कल्प कार्य में परिणत हो सकता है, और कार्य में परिणत होने पर इसके परिचालन के लिए कितने व्यय की आवश्यकता होगी—इत्यादि*। पत्र लेखक महाशय ने इस प्रकार के अनुरोध और जिज्ञासा पर

---

*Here is an opportunity for the Dharma Sabha to prove itself useful, which we trust and hope will not be thrown away. The Sabba is an anachronism, but its existence may be tolerated by enlightened puplic opinion, if it makes its objects to revive. Vedic learning and Vedic religion, the glorious heritage of our proud ancestors. We wish our correspondent had given an estimate of the cost of the proposed Vedic School which ought of course to be moderate, and we can not believe that if the objects of the projected institution were properly explained and circulated, there would be lack of funds. A single Native Prince might give the money required. It would certainly redound to the credit of the Darma Sabha, if it should come forward liberally and second the laudable efforts of the new Reformer. Otherwise we would recommend the Brahmo Samaj, as the chief instrument of the revival of Vedic worship under the guidance of the late Rajah Ramamohana

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रस्तावित वेदविद्यालय के व्ययादि के सम्बन्ध में पैट्रियाट सम्पादक को पुनर्वार इस प्रकार लिखा था :—

"Emboldened by your words of encouragement we repaired to Anand Bag in Benares, and explained to the venerable Pandit the substance of your editorial remarks. The joy of the sage knew no bounds; and with a blooming countenance he thanked you most heartily. He then propounded the following plan in accordance with which the working of the proposed Vedic School is intended to be carried out. As a first step, the services of a good Pandit should be secured for teaching Sanskrit literature. As Sarasvatee has in contemplation the introducion of a system of training that

---

Raya, to interest itself in this sacred cause, and lend its support and authority to the new Reformer. The Hindu Patriot 1870 January 17.

उपर्युक्त अंग्रेजी नोट का हिन्दी मर्म यह है—"यह अवसर धर्म्म सभा के लिये अपने आपको उपकारक बनाने का है, और हमें विश्वास और आशा है कि वह इसे हाथ से न जाने देगी। यह सभा समय विरुद्ध घटना है; परन्तु यदि वह अपना उद्देश्य वैदिक शिक्षा और वैदिक धर्म्म के पुनरुद्धार को बनाले, जो हमारे गौरवान्वित पूर्वजों का दिव्य दाय है, तो उसकी स्थिति जनसाधारण की प्रकाशान्वित सम्मति सहन कर सकती है। हमारी इच्छा है कि हमारे संवाददाता प्रस्तावित वेदविद्यालय का आनुमानिक व्यय बतला दें, परन्तु वह अत्यधिक न होना चाहिये, और हमें विश्वास नहीं हो सकता कि यदि प्रस्तावित संस्था के उद्देश्य उत्तम रीति से दर्शाये और प्रचारित किये जावें, तो धन की न्यूनता रहेगी.केवल एक ही देशीय महाराजा आवश्यकीय धन दे सकते हैं। यदि धर्म्मसभा उदारता के साथ अग्रसर हो और नये सुधारक के प्रशंसनीय यत्नों में योग दे, तो यह निस्सन्देह सभा के गौरव का कारण होगा। अन्यथा हम ब्रह्मसमाज से प्रार्थना करेंगे, जो परलोकगत राजा राममोहनराय के नेतृत्व में वैदिक उपासना के पुनरुद्धार का मुख्य साधन है, कि वह इस पवित्र कार्य में मनोयोग दे और नये सुधारक को सहायता और अपना बल प्रदान करे।" दि हिन्दु पैट्रियाट १८७०, जनवरी १७। (अनुवादक)

CC-0. In Public Domain. Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

will lead to a clear understanding of the Vedas, he intends selecting a Pandit from among the few best scholars he is aquainted with. Though a native of Guzerat, he was brought up in a Vedic School at Muttrah, under the tution of the great sage, the late lamented Sura Das. There are a few scholars of this great man, who will gladly accept the teachership of the proposed School, if remunerated on a some what liberal scale. The salary should be from Rs. 75 to Rs. 100 per mensem. After the pupils have been thoroughly initiated into Sanskrit literature, which will take two years to accomplish, the services of another Pandit should be secured at say Rs. 100 per month, for teaching the Vedas, As liberal education has inflamed the hearts of many a youth with the fire of religions zeal, advanced Scholars of the Sanskrit College and Pandits of the Vernacular schools might be induced to enter the Academy with a view to obtain an insight into the Vadic lore. In that case, a night School ought to be organised ; and no Eleemosynary aid will then be needed. But as there is every probability of pupils from Nabodeep or other Somajes joining the School, arrangements should be made for supplying all their necessaries, including purchage of books, &c. At the outset, a monthly subscription should be raised sufficient to pay Rs. 100 per month to a Pandit and to defray the neccessary expenses teaching 10 pupils. In addition to the monthly subscription there should of course be a reserve fund to meet contingent expenses. I do not say anything at present about School building and Boarding-house, because I think, any one of our wealthy countryman might be induced to spare one of their super-numerary buildings for this noble purpose. As soon as arrangements have been made for opening the proposed School, our venerable Pandit Dayananda Sarasvatee will start for Calcutta in company with a Sanskrit teacher, and will stay there as long as his assistance will be considered necessary to place the Pathshala on a firm footing......It is the intention of our Pandit to make Benares, which has an academic fame of

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

no recent date, the centre of his educational scheme, with School spread all over India ; and if the liberal-minded gentry come forward to fulfil the desire of this great man, they will assuredly confer a great boon of India. The branches of the tree of corruption have over-shadowed the whole of India, and it is his noble intention to apply, the axe of truth to the very root of the tree, which has gone deeper at Benares than else; where. Yesterday, the Pandit left his station for Allahabad where he intends staying for a month."*

उपर्युद्धृत अंग्रेजी अंश का मर्म इस प्रकार है—"आपके साहस बंधाने वाले शब्दों से हम साहस लाभ करके काशी में आनन्दबाग में गये और पूजनीय पण्डित जी से आपकी सम्पादकीय सम्मति का सारांश कहा। पण्डितजी के उल्लास की सीमा न रही; और प्रफुल्लवदन होकर उन्होंने आपका हृदय से अत्यन्त धन्यवाद किया। फिर उन्होंने निम्नलिखित पद्धतिका प्रस्ताव किया जिसके अनुकूल भावी वेदविद्यालय के कार्यसञ्चालन की इच्छा है। प्रथमतः संस्कृतसाहित्य की शिक्षा देने के लिये एक योग्य पण्डित को रखना चाहिये। सरस्वती महाशय का विचार एक ऐसे शिक्षण विधि के प्रचार करने का है जिससे वेदों का अर्थ स्पष्टतया समझ में आ जाय, और इसलिये उनकी इच्छा है कि वे पण्डित उन गिनेचुने सर्वश्रेष्ठ विद्वानों में से निर्वाचित किये जांय जिन्हें वे जानते हैं। यद्यपि वे गुजरात के रहने वाले हैं, परन्तु उन्होंने परलोकगत महापण्डित सूरदास जी के निकट मथुरा के वेदविद्यालय में शिक्षा पाई है। इन महापुरुष के कुछ शिष्य हैं, जिन्हें यदि उदारतापूर्वक वेतन दिया जायगा, तो वह प्रसन्नता से प्रस्तावित विद्यालय के अध्यापक पद को ग्रहण कर लेंगे। वेतन ७५) से १००) मासिक तक होना चाहिये। जब विद्यार्थिगण संस्कृत साहित्य में पूर्णतया प्रवेश कर लें, जिसके लिए दो वर्ष लगेंगे, तो वेदों की शिक्षा देने के लिये एक दूसरे पण्डित को १०० रु० मासिक पर रक्खा जाय। क्योंकि उदार शिक्षा ने बहुत से युवकों के मन में धार्मिक उत्साह की अग्नि प्रज्वलित कर दी है, इसलिये संस्कृत कालिज के उच्चश्रेणी के छात्रों और देशीय विद्यालयों के पण्डितों को इस विद्यालय में वैदिक साहित्य से परिचय प्राप्त करने के लिये प्रवेश करने की प्रेरणा की जा सकती है। ऐसा

*The Hindoo Patriot 1870, February 14.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होने पर एक नैतिक विद्यालय खोलना चाहिये, और फिर छात्रों को भोजनादि की सहायता देनी आवश्यक न होगी। परन्तु इस कारण से कि प्रायः यह सम्भावना है कि नवद्वीप और दूसरी समाजों के छात्र भी विद्यालय में सम्मिलित होंगे, उनकी सब आवश्यकताओं को, जिनके अन्तर्गत पुस्तकादि का क्रय करना भी है, पूरा करने का प्रबन्ध करना चाहिये। आरम्भ में इतना मासिक चन्दा कर लेना चाहिये जिससे १००) मासिक पण्डित को दिया जा सके और १० छात्रों की शिक्षा का आवश्यक व्यय चल सके। मासिक चन्दे के अतिरिक्त एक रक्षितनिधि भी अवश्य होना चाहिये जिससे आकस्मिक व्यय पूरे हो सकें। सम्प्रति हम विद्यालय के स्थान और छात्रशाला के विषय में कुछ नहीं कहते, क्योंकि हमारे विचार में हमारे धनाढ्य देशनिवासियों में से किसी एक को ऐसी प्रेरणा की जा सकती है कि वे अपने अनावश्यकीय स्थानों में से एक स्थान इस उत्तम कार्य के लिये दे दें। जैसे ही प्रस्तावित विद्यालय के खोलने का प्रबन्ध हो जाय, हमारे पूजनीय पण्डित दयानन्द-सरस्वती एक संस्कृत अध्यापक के साथ कलकत्ता चले आयेंगे, और जब तक पाठशाला को दृढ़ भित्ति पर स्थापित करने के लिये उनकी सहायता आवश्यक समझी जावेगी वह वहाँ ठहरेंगे.............................. हमारे पण्डितजी का यह विचार है कि काशी को, जिसकी ख्याति विद्याभूमि होने की बहुत प्राचीनकाल से चली आती है, उनके शिक्षा सम्बन्धी कार्य का केन्द्र बनाया जाय और उससे सम्बन्ध रखने वाले विद्यालय सम्पूर्ण भारतवर्ष में फैले हुए हों; और यदि उदारचेता सम्भ्रान्त जन इन महापुरुष के मनोरथ को पूरा करने के लिये अग्रसर होंगे, तो वे निस्सन्देह भारतभूमि का बड़ा कल्याण करेंगे। दुराचार के वृक्ष की शाखाओं ने सम्पूर्ण भारतवर्ष को आच्छादित कर लिया है, और उनका यह अतिश्रेष्ठ विचार है कि इस वृक्ष की जड़ पर, जो और स्थानों की अपेक्षा काशी में अधिक गहरी है, सत्य के कुल्हाड़े का प्रहार किया जाय। कल पण्डित जी ने इस स्थान से प्रयाग के लिये प्रस्थान किया है, जहाँ वे एक मास रहना चाहते हैं।"

(अनुवादक)

ऊपर दिये हुए अंग्रेजी अंश के विचारने से विदित होता है कि स्वामी जी प्रस्तावित वैदिकपाठशाला में प्रथम अध्यापक को ७५) से १००) तक के वेतन पर नियोजित करने के इच्छुक थे। अपने आचार्य के किसी उपयुक्त

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शिष्य को ही अध्यापक पद के लिये निर्वाचित करने का उनका अभिप्राय था। उन्होंने स्वनिर्धारित पद्धति के ऊपर वेदविद्यालय के समस्त शिक्षाकार्य को प्रतिष्ठित करने का सङ्कल्प किया था। विद्यार्थिगण पहले अध्यापक के पास दो वर्ष तक साहित्य की शिक्षा पावेंगे और उसके पश्चात् दूसरे अध्यापक के के पास वेदाध्ययन में प्रवृत्त होंगे। इस प्रकार के नियमानुसार उन्होंने वेद-विद्यालय के शिक्षा सम्पादन की इच्छा की थी। दयानन्द का विश्वास था कि पाठशाला के पण्डितों अथवा संस्कृत कालिज के अपेक्षाकृत उन्नत श्रेणी के छात्रों में से अनेक लोग वेदालोचना के निमित्त उनके स्थापित किये हुए विद्यालय में आवेंगे। अस्तु। सङ्कल्पित विद्यालय के स्थापन के लिये वह कलकत्ता आने पर भी सहमत थे, और विद्यालय को दृढ़तर भित्ति के ऊपर प्रतिष्ठित करने के उद्देश से वहां कुछ समय तक ठहरने के भी इच्छुक थे, और वेदविद्या के विस्तार के पक्ष में काशी को केन्द्र रूप बनाने की भी उनकी इच्छा थी। काशीप्रतिष्ठित वेदविद्यालय की शाखाप्रशाखारूप भारत के प्रधान २ स्थानों में विद्यालय स्थापित हो जांय-यह उनकी आन्तरिक वासना थी। किन्तु उनकी यह वासना सिद्ध नहीं हुई। पूर्वोल्लिखित सदाशय व्यक्ति ने यद्यपि इस विषय की ओर आर्यसाधारण की दृष्टि आकर्षण करने में कुछ भी त्रुटि नहीं की, यहां तक कि वेदसर्वस्व सरस्वती महाशय के इस परमहितकर सङ्कल्प को कार्य क्षेत्र में विषयीभूत करने के अभिप्राय से यद्यपि वह अपने उद्यमोत्साह प्रदर्शन में परिश्रान्त नहीं हुए*, तौभी इस सम्बन्ध में कार्यरूप में कुछ भी होना स्वामीजी के पक्ष में सम्भावित नहीं हुआ। अस्तु। दयानन्द इस प्रकार काशी के सुधीसमाज में अपने सिद्धान्तों को अखण्डित रख कर और अपनी विजयपताका को अनवनत करके जनवरी मास की २६ तारीख को इलाहाबाद चले गये, क्योंकि वेदविद्यालय के व्ययादि सम्बन्ध में पूर्वोद्धृत अंग्रेजी पत्र मुगलसराय से ही २७ तारीख को लिखाया गया था और उस पत्र के अन्तिम भाग में प्रकाशित हुआ था कि —"स्वामी जी गत काल काशी छोड़ कर इलाहाबाद गये हैं।" इससे विदित होता है कि दयानन्द उस वार काशी में प्रायः चार मास रहे थे।

———

* The Hindu Patriot 1870 March 28 and April 4.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

छठा अध्याय

कलकत्ता-आगमन,—प्रमोदकानन में स्थिति और नाना मनुष्यों के साथ वार्त्तालाप —केशवचन्द्रसेन के गृह में गमन और शास्त्रव्याख्या,—ब्रह्मोत्सव में देवेन्द्रनाथ ठाकुर के गृह में आगमन, कतिपय स्थानों में वक्तृता,—हुगलीगमन और पं० ताराचरण प्रभृति के साथ विचार।

सन् १८७२ ई० ३० दिसम्बर के इण्डियनमिरर पत्र में दयानन्द सरस्वती के आगमन का समाचार इस प्रकार लिखा है:—

"The redoubtable Hindu iconoclast, Pandit Dayanada Sarasvati, who recently discomfited the learned Pandits at Benares in an open theological encounter, and has otherwise made himself famous throughout Northern India, has come down to Calcutta, and is now staying in the suberban garden house of Rajah Jotindra Mohan Tagore at Nynan. He has issued notices in Sanskrit, Hindi, Bengali, and English inviting inquirers and others to come and discuss the theological subjects with him."*

इसका अर्थ यह है—"मूर्तिपूजा के महावैरी पण्डित दयानन्द सरस्वती, जिन्होंने थोड़े दिन पहले काशी के पण्डितवृन्द को शास्त्रार्थ में पराजित करके भारत के उत्तराञ्चल में ख्यातिलाभ किया था, अब कलकत्ता में आकर यतीन्द्रमोहन ठाकुर के नगरोपकण्ठस्थित नैनान के उद्यान में ठहरे हुए हैं और जिज्ञासुओं और अन्यान्य व्यक्तियों के साथ धर्मविचार करने के अभि-

*The Indian Mirror 1872 December 30.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्राय से उन्होंने संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी और बङ्गाली भाषाओं में विज्ञापन भी दिया है।" राजा यतीन्द्रमोहन का नंनान का उद्यान प्रमोदकानन के नाम से प्रसिद्ध है।" वह कलकत्ता के निकट उत्तर की ओर स्थित है। नगर में रहने के विषय में दयानन्द की वितृष्णा थी, इसीलिये जब वह किसी नगर में जाते थे, तो नगर के प्रान्तवर्ती किसी उद्यान में अथवा प्रान्तवाहिनी नदी के तट पर अपने ठहरने का प्रबन्ध करते थे। इससे नगर निवासियों के साथ विचारादि करने में कोई असुवधा नहीं होता था और नागरिक अशान्ति और कोलाहल का कष्ट भी उन्हें सहन करना नहीं पड़ता था। इसी हेतु उनकी स्थिति के लिये प्रमोदकानन निर्दिष्ट हुआ था।‡

इण्डियन मिरर पत्र में लिखे हुए संवाद के अनुसार दयानन्द दिसम्बर के अन्त में ही कलकत्ता आये थे—यह बोध होता है। वंगाब्द के अनुसार वह १२७९ वर्ष के अग्रहायण के अन्त में किंवा पौष के आरम्भ में यहां उपस्थित हुए थे। अस्तु। उस समय दयानन्द के साथ गजानन नाम के व्यक्ति थे। गजानन मिर्ज़ापुर के रहने वाले थे। वह स्वामी जी से मनुसंहिता पढ़ते थे और उनकी सेवा और सहायता सम्बन्धी अन्यान्य कार्यों में भी नियोजित रहते थे। यह स्वयं स्वामीजी के हाथ का लिखा हुआ है कि गजानन मनुसंहिता

‡पूर्वोक्त श्रीयुत चन्द्रशेखरसेन बेरिस्टर महाशय दयानन्द को कलकत्ता लाने के विषय में विशेष रूप से उद्योगी हुए थे। वह पहिले दयानन्द के आगमन का समाचार लेकर श्रीयुत द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर के पास गये। किन्तु उन्होंने स्वामीजी के ठहरने के विषय में कोई प्रबन्ध करने में असामर्थ्य प्रकाश किया। तब सेन महाशय राजा शौरीन्द्रमोहन ठाकुर के पास गये। पहिले राजा शौरीन्द्रमोहन ने भी उनके प्रस्ताव से अधिक अनुराग प्रकाश नहीं किया, परन्तु दूसरे दिन प्रातःकाल जब बाबू चन्द्रशेखर दयानन्द को हावड़ा स्टेशन से लेकर शौरीन्द्रमोहन के घर गये, तब शौरीन्द्रमोहन ने अत्यन्त विनय और आग्रह के साथ प्रमोदकानन में स्वामीजी के भोजन और निवास का प्रबन्ध कर दिया।

(स्वामीजी के कई जीवनवृत्तान्तों में यह लिखा है कि जब स्वामीजी कलकत्ता गये, तो उनका भक्तिभाजन देवेन्द्रनाथ ठाकुर से समागम हुआ और ठाकुर महाशय ने ही उनके रहन-सहन और खान-पान का प्रबन्ध किया। किन्तु ग्रन्थकार से पूछने पर विदित हुआ कि यह मिथ्या है, क्योंकि उस समय ठाकुर महाशय कलकत्ता में उपस्थित नहीं थे—अनुवादक)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पढ़ते थे। पूर्वोल्लिखित विज्ञापन के अनुसार दयानन्द से मिलने के लिये अनेक लोग प्रमोदकानन में जाने लगे। दयानन्द प्रातःकाल से दो पहर पर्यन्त तक आये हुए मनुष्यों से बातचीत नहीं करते थे, इसलिये उस समय के भीतर वहां लोगों का आना जाना भी नहीं देखा जाता था। अपराह्न में दो तीन बजे से उद्यान की ओर जनस्रोत प्रवाहित होता था। अनेक लोग केवल उन्हें देखने के लिये ही जाते थे, अनेक लोग उनसे शास्त्रविचार करने के लिये आते थे, और कोई २ छिद्रान्वेषी किसी न किसी दोष के पकड़ने की अभिलाषा से वहां आकार तीक्ष्णदृष्टि के साथ उनके कार्य-कलापादि को देखते थे। दयानन्द कभी उद्यान में, कभी उद्यानस्थित अट्टालिका के भीतर, और कभी उद्यानान्तर्गत पुष्करिणी के घाट पर बैठकर आये हुए मनुष्यों से बातचीत करते थे। आने वाले के भीतर प्रायः सबही श्रेणी के मनुष्य दीख पड़ते थे। पण्डित महेशचन्द्र न्यायरत्न और पंडितवर तारानाथ तर्कवाचस्पति प्रभृति शास्त्रिगण भी सरस्वती महाशय के पास जाते थे। श्रीयुक्त केशवचन्द्रसेन, श्रीयुक्त राजनारायण वसु और श्रीयुक्त द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर प्रभृतिसुशिक्षित और देशप्रसिद्ध व्यक्ति दयानन्द के पास बैठते थे, और राजा शौरीन्द्रमोहन ठाकुर प्रभृति के समान ऐश्वर्य्यपति और उच्चपदारूढ व्यक्तिगण भी बीच २ में वहां जाते थे। इसके भिन्न अन्यान्य आने वाले मनुष्यों की तो कथा ही क्या है। इनके भीतर वाचस्पति और वाग्मिवर केशवचन्द्र को दयानन्द के पास प्रायः देखा जाता था। स्वामीजी के साथ केशवचन्द्र का आवागमन पर विचार हुआ था। इसके अतिरिक्त अद्वैतवाद वेदप्रतिपादित है वा नहीं—इस विषय पर भी सेन महाशय ने उनके साथ विचार किया था। वसु महाशय के साथ होम के विषय में बातचीत हुई थी। उन्होंने होम को मूर्तिपूजा का अन्यतम अङ्ग कहा, तो दयानन्द ने उत्तर दिया कि जिस कार्य का ब्रह्मस्मरणपूर्वक अनुष्ठान किया जाय, और विशेषतः जो जनसाधारण के हित के उद्देश्य से ही सम्पादित हो, उसका कभी भी मूर्तिपूजा के अङ्गों में परिगणन नहीं हो सकता। यह सुनकर बाबू राजनारायण ने उसके सम्बन्ध में फिर कोई बात नहीं कही। वसु महाशय की 'हिन्दुधर्म की श्रेष्ठता' नामक वक्तृता पुस्तक भी दयानन्द को पढ़कर सुनाई गई थी। पाठ के अन्त में दयानन्द ने उनसे कहा था कि 'हिन्दुधर्म की श्रेष्ठता प्रतिपादन के पक्ष में पुराण-तन्त्र का प्रमाण ग्रहण करना

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

युक्तिसङ्गत नहीं है। शास्त्रीय प्रमाण के स्थल में महाभारत पर्यन्त ही गृहीत हो सकते हैं।"

एक दिन सायङ्काल के समय पुष्करिणी के घाट पर बैठे हुए स्वामीजी आये हुए लोगों से वार्त्तालाप कर रहे थे कि इतने में राजा शौरीन्द्रमोहन गाड़ी पर बैठ कर प्रमोदकानन में आये। आने के थोड़ी ही देर पश्चात् एक मनुष्य ने आकर दयानन्द से कहा कि राजा बहादुर आपको बुलाते हैं। इसके उत्तर में दयानन्द ने कहा—'हम आये हुए मनुष्यों के साथ बातचीत कर रहे हैं, इसलिये इस समय हमारा उठ कर जाना सम्भव नहीं है।' शौरीन्द्रमोहन संवाद के लाने वाले के मुख से इस बात को सुनकर अन्त में स्वयं ही वहां चले आये, और कुछ काल पश्चात् स्वर के उत्पत्ति-स्थान के विषय में दयानन्द से प्रश्न किया। जिज्ञासित प्रश्न के उत्तर में उन्होंने जो कुछ कहा उसको न समझ सकने पर, और इसलिये दयानन्द की कुछ विरक्ति प्रकाश करने पर, शौरीद्रमोहन कुछ क्रुद्ध होकर वहां से चले आये। इस घटना के पश्चात् कलकत्ता के किसी-किसी स्थान में, यहां तक कि समाचार पत्र विशेष में, दयानन्द के सम्बन्ध में कई असत्य और भ्रमूलक कथा प्रचारित होने लगीं‡। इससे अनेक लोगों ने यह अनुमान किया था कि शौरीन्द्रमोहन

‡"कस्यचित्वराहनगरवासिन:" इस नाम से एक व्यक्ति ने दयानन्द के सम्बन्ध म कई असत्य और विद्वेषमूलक कथा सोमप्रकाश नामक प्रसिद्ध समाचारपत्र में प्रकाशित की थी। यह व्यक्ति राजा शौरीन्द्रमोहन की प्ररणा से परिचालित होकर इस प्रकार के कार्य्य में रत हुआ था—यह उसके प्रकाशित पत्र के पाठ करने से विदित होता है। सोमप्रकाश के शास्त्रदर्शी सम्पादक ने भी इस विषय में पक्षपात का परिचय दिया था। क्योंकि दयानन्द के कतिपय अनुरागी और सत्यनिष्ठ व्यक्तियों ने पूर्वोक्त असत्य और विद्वेषमूलक पत्र के प्रतिवाद में सोमप्रकाश में छपने को एक पत्र भेजा था; परन्तु सम्पादक महाशय ने उस प्रतिवाद को अपनी पत्रिका में स्थान नहीं दिया। तब उन्होंने ढाका की हिन्दुहितैषिणी पत्रिका में उस पत्र को प्रकाशित करके असत्य आक्रमण से दयानन्द की रक्षा की थी। अधिक क्या, सोमप्रकाश के सम्पादक ने स्वयं भी स्वामीजी के प्रति विद्वेषमिश्रित भाव का परिचय देने में त्रुटि नहीं की, क्योंकि उन्होंने स्वामीजी के सम्बन्ध में लिखा था—"यह दिग्विजय के प्रसंग में प्रवृत होकर अब कलकत्ते में आये हैं। शंकराचार्य ने दिग्विजय में प्रवृत होकर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के आश्रित वा सम्बन्ध वाले व्यक्तियों में से ही किसी ने इन सब अमूलक कथाओं की रचना करके प्रचार किया है। इस प्रकार अनुमान हमारे विचार में असंगत नहीं है।

आये हुए लोगों के साथ बातचीत करके दयानन्द एक दिन निमंत्रित होकर भक्तिभाजन केशवचन्द्रसेन के घर गये। जिसदिन अपराह्न में केशवचन्द्रसेन के घर गये थे, उसी दिन उन्होंने मध्याह्न में भारतवर्षीय कौतुकागार में गमन किया था। इस सम्बन्ध में १२ जनवरी सन् १८७३ के इण्डियन मिरर में निम्नलिखित वृत्तान्त प्रकट हुआ था। वह वृत्तान्त इस प्रकार था:—

"This learned Pundit visited the Asiatic Museum on Thrusday last, with a view chiefly to purchase copies of the Vedas and the Upanishads. He then met a large number of Brahmos at the house of Baboo Keshab Chandra Sen, and in answering the various questions put to him be clearly explained his doctrinal opinions. ***We hope a committee will be formed to undertake the publication and extensive circulation of his reformed ideas in the forms of small tracts."*

इससे विदित होता है कि नवीं जनवरी को वृहस्पतिवार के मध्याह्न में स्वामीजी भारतीय कौतुकागार में गये थे। और उसके पश्चात् बाबू केशवचन्द्र जी के घर गये थे। उनका कौतुकागार में जाने का उद्देश्य प्रधानतः वेद और उपनिषद ग्रन्थों का क्रय करना था। केशवचन्द्र के गृह में दयानन्द के साथ सदालाप करने के प्रयोजन से बहुत से ब्राह्मगण एकत्र हुए थे। एकत्रित ब्राह्मों में से अनेकों ने उनसे आर्यजाति के शास्त्र और धर्मविषय में अनेक प्रकार के प्रश्न किये। उन्होंने जिज्ञासित प्रश्नसमूह का सदुत्तर प्रदान करके जिज्ञासुओं को विमोहित कर दिया। विशेषतः दयानन्द की वक्तृता और शास्त्रव्याख्या को सुनकर समग्र व्यक्तिमात्र ही विस्मित हो गये। क्योंकि एक

अद्वैतवाद का स्थापन करके जैसा जगत् का उपकार किया था, उनके समान इनका कोई महान् उद्देश्य है वा नहीं, हम नहीं कह सकते; किन्तु हमने इनकी विचारप्रणाली का जो प्रवाद सुना है उससे स्पष्ट बोध होता है कि आत्मपाण्डित्य प्रकाश करके ख्यातिलाभ करना ही इनका एकमात्र उद्देश्य है।" सोमप्रकाश वंगाब्द १२७९ फाल्गुन २१।

---

*The Indian Mirror 1873 Junuary 12.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कोपीन-कमण्डलधारी संन्यासी योरुपीय विद्या से सर्वतोभावेन अनभिज्ञ रहते हुए समाज, शास्त्र और धर्म्म सम्बन्ध में इस प्रकार के मार्जित, उच्च और उदार विचारों का पोषण कर सकते हैं, यहां तक कि एकमात्र वेदरूप ब्रह्मास्त्र की सहायता का अवलम्बन करके समाज और धर्म्मसम्बन्धी यावतीय भ्रान्तियों का निराकरण करने में उद्यत हुए हैं—यह देख कर कौन विस्मयाविष्ट न होगा। उपस्थित विषय में श्रद्धाभाजन श्रीयुक्त नगेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय ने लिखा है:—"केशव बाबू के घर जिस दिन मैंने प्रथम दयानन्द की वक्तृता सुनी उस दिन एक नई बात मैंने अनुभव की। मैं नहीं जानता था कि संस्कृत भाषा में ऐसी सरल और मधुर वक्तृता हो सकती है। वह ऐसी सहज संस्कृत बोलने लगे कि संस्कृत भाषा में जो व्यक्ति महामूर्ख हो वह भी अनायास से उनकी बात को समझ लेता था। और एक विषय में मुझे आश्चर्य हुआ। अंग्रेजी भाषा से अनभिज्ञ हिन्दुसंन्यासी के मुख से धर्म्म और समाज विषय में ऐसे उदार विचार मैंने पहिले कभी नहीं सुने थे‡। अस्तु। अन्त में दयानन्द के मन्तव्यामन्तव्य को पुस्तकाकार में प्रकाशित करके देश में सर्वत्र प्रचारित करने के निमित्त अनेकों ने इच्छा प्रकट की। और कोई-कोई उस इच्छा को कार्य्य में परिणत करने के उद्देश्य से एक समिति के स्थापन करने पर उद्यत हुए; किन्तु भविष्यत् में क्या समिति-स्थापन, क्या स्वामीजी के मन्तव्यामन्तव्य का सङ्कलन, कुछ भी कार्य में परिणत नहीं हुआ। किन्तु ऐसा न होने पर भी इस प्रकार का प्रस्ताव केशवचन्द्र के पक्ष में साधारण उदारता का परिचायक नहीं है।

दयानन्द जिस समय कलकत्ता नगर में इस प्रकार वैदिक धर्म्म के विस्तार में व्यापृत थे। उस समय ब्राह्मसमाज में माघोत्सव था। माघोत्सव के उपलक्ष में उपस्थित होने के लिए निमन्त्रण देने के अभिप्राय से श्रीयुक्त द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर महाशय एक दिन रात्रि के समय स्वामीजी के निकट गये। द्विजेन्द्रनाथ के साथ दयानन्द की नाना विषयों पर बातचीत हुई। द्विजेन्द्रनाथ दर्शन-शास्त्रों के अनुरागी थे। इससे बोध होता है कि उन्होंने स्वामीजी के निकट प्रधानतः दार्शनिक प्रसंग ही उत्थापित किये थे; क्योंकि यह सुना जाता है कि उस समय स्वामीजी ने उन्हें यह समझाने की चेष्टा की थी कपिल का सांख्य-

‡ श्रीयुत नगेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय प्रणीत 'महात्मा दयानन्द सरस्वती की संक्षिप्त जीवनी, पृष्ठ २

Dr. Vivek Arya ... Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दर्शन निरीश्वर ग्रन्थ नहीं है। इस प्रकार की कथा-वार्त्ता के पश्चात् द्विजेन्द्रनाथ ने अपने आने का सङ्कल्प प्रकाशित किया। दयानन्द ने उनके अभिप्राय को जान कर पहले तो कुछ असम्मति प्रगट की, परन्तु अन्त में निमंत्रण को स्वीकार कर लिया।‡ दयानन्द इस प्रकार निमन्त्रित होकर ४३ वें ब्राह्मोत्सव की ग्यारहवीं माघ को मध्याह्नकाल में पूज्यपाद देवेन्द्रनाथ ठाकुर महोदय के घर उपस्थित हुए। देवेन्द्रनाथ ठाकुर के शिष्टाचारपरायण पुत्रों ने स्वामीजी के अभ्यर्थना में कुछ भी त्रुटि नहीं की। दयानन्द ने उनके घर अनेकों के साथ असंकुचितभाव से धर्म्मालाप किया। विशेषतः देवेन्द्रनाथ के अन्यतम और स्वर्गारूढ पुत्र हेमेन्द्रनाथ के साथ आत्मा की स्वाधीन इच्छा के विषय में विचार हुआ। दयानन्द स्वाधीन इच्छा के पक्षपाती थे, यहां तक कि उन्होंने स्वाधीन इच्छा के पक्ष में वैदिक प्रमाणों का प्रदर्शन करके हेमेन्द्रनाथ को विस्मित कर दिया+। इसके बाद दयानन्द ने यहां के कई एक

---

‡ पूर्वोल्लिखित श्रीयुत हेमचन्द्र चक्रवर्ती श्रीयुत द्विजेन्द्रनाथ के साथ स्वामीजी के पास निमन्त्रण के लिए गये। उन्होंने कहा है कि ११ वीं माघ को ठाकुर बाबू के घर उपस्थित होने की बात के कहने पर दयानन्द ने कहा कि इसके लिये मुझे केशव बाबू ने भी निमन्त्रित किया था। परन्तु मैंने उनके निमन्त्रण को स्वीकार नहीं किया। ऐसी दशा में आपका निमन्त्रण स्वीकार करके ११ वीं माघ को कैसे जा सकता हूं। इस बात के उत्तर में जब आदिब्रह्मसमाज के उद्देश्य स्पष्ट करके कहे गये और विशेषतः यह कि वेदादि ग्रन्थों में आदिसमाजान्तर्गत लोगों की श्रद्धा है, तो उन्होंने निमन्त्रण ग्रहण कर लिया।

+ श्रीयुत द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर प्रभृति ने अपने तीनतला वाले घर में कुछ दिन ठहरने के लिए अनुरोध किया, तो दयानन्द ने कहा कि संन्यासी के लिए गृहस्थाश्रम में वास करना विधेय नहीं है। उनके घर के आंगन में जो मण्डप है दयानन्द उस मण्डप के मध्यस्थित वेदि को देख कर, विशेषतः वेदि के चारों ओर लिखे हुए संस्कृत श्लोकों को पढ़ कर, अत्यन्त आनन्दित हुए थे। इन सब कारणों से दयानन्द आदि ब्रह्मसमाज और उसके प्राणस्वरूप पूज्यपाद श्रीयुत देवेन्द्रनाथ ठाकुर महाशय के प्रति आस्थावान् हो गये थे। प्रमोदकानन के दालान के भीतर श्रीयुक्त देवेन्द्रनाथ ठाकुर और श्रीयुक्त केशवचन्द्रसेन की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्थानों में कई एक वक्तृतायें दीं फरवरी मास की २३ वीं तारीख का अपराह्न में स्वर्गीय गौराचान्ददत्त के घर के आङ्गन में 'ईश्वर और धर्म्म' विषय पर उनकी एक वक्तृता हुई थी‡। उस वक्तृता में कलकत्ते के सैकड़ों लोग उपस्थित हुए थे। उसके पश्चात् मार्च की नवीं तारीख को वराह नगर के नाइट स्कूल (नैशिक पाठशाला) में एक और वक्तृता हुई थी। इस वक्तृता के सम्बन्ध में वराहनगर के एक सिक्षित व्यक्ति ने इस प्रकार लिखा था :—

"On Sunday, the 9th instant, a lecture was delivered by Pandit Dayananda Saraswati on the 'Vedic Doctrines' at the premises of the Barhanagore Night School. A large number of respectable Native gentlemen were present on the occassion. The lecturer, dressed with a silken cloth, took his seat on the pulpit in the most solemn posture and commenced his duty at half past three P. M. The lecturer opened his address with a a praper to the Almighty Father, and then with a flowing, sweet and easy Sanskrit continued for more than three hours. He proved in simple argument from the Vedas the existense of the unity of God, the iniguity of caste-distinctions, and the injury done by early marriages. His oratory is most wonderful. His language is simple, yet majestic. From his words we can observe that he is not only a man of extensive learning but also a man of deep reflection and vast observation. His arguments are for cible and strong, and his spirit is fearless and brave. I hope that my educated friends of Calcutta will make it a point to attend his future lectures."*

उपर्युक्त अंश का यह मर्म है—"पण्डित दयानन्द सरस्वती ने मार्च की नवीं तारीख रविवार को अहराह्न के साढ़े तीन बजे के समय वैदिक मत के सम्बन्ध में एक वक्तृता दी। वक्तृता देने के स्थान में बहुत से शिक्षित और सम्भ्रान्त व्यक्ति उपस्थित हुए थे। वक्ता महाशय ने वेदि के ऊपर गम्भीर-

---

एक-एक प्रतिकृति लगी हुई थी। दयानन्द ने उन दोनों प्रतिकृतियों को देखकर पहिली प्रतिकृति के सम्बन्ध में कहा था कि—"इनको देखकर बोध होता है कि यह ऋषिभाव के स्वभावतः अनुरागी हैं।

* The Indian Mirror 1873 February 22.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भाव से बैठ कर प्रार्थना करके अपना कार्य आरम्भ किया । वक्तृता के समाप्त होने में तीन घण्टे से भी अधिक लगे । यद्यपि वक्तृता संस्कृत भाषा में थीं, तो भी सरस्वती महाशय की संस्कृत अत्यन्त सरल मधुर और धाराप्रवाहिनी थी । उन्होंने वैदिक प्रमाणों का अवलम्बन करके ईश्वर के एकत्व और जाति-भेद और बाल्य विवाह की अपकारिता को बहुत सुगमता से सिद्ध किया । दयानन्द की वाग्मिता अत्यन्त असाधारण है । उनकी वक्तृता सुनने से वह केवल सर्वशास्त्रदर्शी ही नहीं बोध हाते हैं, प्रत्युत उनके व्याख्यान को सुन कर वह एक विलक्षण विचारशील और सूयोदर्शी व्यक्ति जान पड़ते हैं । दयानन्द की युक्ति नितान्त तीव्र और प्रबल और उन का हृदय सर्वतोभावेन भयशून्य है । हम आशा करते हैं कि कलकत्ता के शिक्षित व्यक्तिगण भविष्यत् में उन की वक्तृता सुनने में सयत्न रहेंगे ।" किन्तु शोक है कि कलकत्ते में उनकी और कोई वक्तृता नहीं हुई । केवल इतना ही नहीं, कलकत्ते में स्वामीजी का जिस प्रकार सम्मान होना उचित था और उनके उठाये हुए लोक हितकर कार्यों की ओर जिस प्रकार के उत्साह और अनुराग को प्रदर्शन करना कर्त्तव्य था, कलकत्ता के निवासि-गण उस प्रकार के सम्मानदान और अनुरागप्रदर्शन में प्रवृत्त नहीं हुए । कारण यह है कि कलकत्ता स्वार्थता की तीव्र अग्नि में नितान्त ही प्रतप्त था । इसीलिये पूर्वप्रस्तावित वेदविद्यालय के सम्बन्ध में भी स्वामीजी यहां कुछ नहीं कर सके । यद्यपि उन्होंने स्थानीय सुधीसमाज के सम्मुख वेदविद्यालय का प्रसंङ्ग उठाया था, और उसकी परिचालन-पद्धति के विषय में अपने मनोभाव को प्रकट करने में संकोच नहीं किया था, तो भी उनमें से किसी ने उनके इस प्रस्ताव को कार्य में परिणत करने के लिये उत्साह प्रदर्शन नहीं किया‡ । इसी

‡ उपस्थित विषय पर 'इण्डियन मिरर' पत्र के सम्पादक ने भी ऐसा ही लिखा था । यथा:—His project of a Vedic School in this city has not, it seems, met with public support." (Indian mirror 1873 March 9) अर्थात् "ऐसा प्रतीत होता है कि उन (दयानन्द)के वैदिक पाठशाला स्थापित करने के प्रस्ताव का इस नगर में सर्वसाधारण ने समर्थन नहीं किया है ।" वेदों के पठनपाठन के बिना संस्कृत-शिक्षा किसी प्रकार कार्यकर नहीं है—यह स्वामीजी ने यहां के अनेक लोगों से कहा था । उस समय छोटे लाट क्यम्बेल साहब ने संस्कृत कालिज

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हेतु से इस विषय में स्वामीजी को कुछ खिन्न होना पड़ा। जो स्थान विशाल भारतसाम्राज्य के भीतर शिक्षा और सभ्यता की केन्द्रभूमि कहलाकर स्पर्धा करता हो, उस स्थान में वेदविद्या के सम्बन्ध में इस प्रकार की विमुखता के प्रदर्शन करने पर कौन सहृदय व्यक्ति दुःखित नहीं होगा। अस्तु। इस प्रसङ्ग में हम एक कौतुकावह कथा का उल्लेख किये बिना नहीं रह सकते। स्वामी जी को देखकर और उनके उपदेशादि को सुनकर यहां के कोई २ अल्पबुद्धि व्यक्ति आपस में ऐसी बातें करते थे कि "यह निश्चय ही कोई जर्मनदेशीय मनुष्य है, केवल हिन्दुधर्म्म को नष्ट करने के उद्देश से ही सन्यासी का रूप धारण करके आये हैं।"

इस प्रकार तीन मास से कुछ अधिक दिन कलकत्ता नगर में अतिवाहित करके दयानन्द हुगली में आये। वहां श्रीयुक्त वृन्दावनचन्द्र मण्डल का उद्यान उनके ठहरने के लिये निरूपित हुआ। रेवरेण्ड लालविहारीदे उस समय हुगली-कालिज के अध्यापक थे। लालविहारी ईसाई धर्म्म के एक विशिष्ट परिपोषक प्रसिद्ध थे। दयानन्द की उपस्थिति का संवाद सुनकर वह उनके पास विचार के लिये आये स्वामीजी के साथ उनका वर्णभेद विषय पर विचार हुआ। अति अल्प समय में ही पराजित हो गये। उसके पश्चात् मण्डल बाबू के घर दयानन्द की एक दिन वक्तृता हुई। उस वक्तृता के स्थान म बङ्गालीसाहित्य के सुपरिचित सेवक श्रीयुक्त अक्षयचन्द्र सरकार महाशय उपस्थित थे। उन्होंने उस वक्तृता के सम्बन्ध में ग्रन्थकार को लिखा था कि "हमारे सामने चूंचड़ा के मण्डलों के घर में पण्डितवर ने एक दिन अपराह्न में वक्तृता दी थी। उस समय भट्टपल्ली के कई पण्डित उपस्थित थे। उनकी अति सहज संस्कृत बोलने की क्षमता को देखकर हमने उनकी मन ही मन में सौ बार प्रशंसा की थी। इससे पहले हमारा यह विश्वास नहीं था कि ऐसा

स्थापन करने का प्रस्ताव किया था। यह सुन कर उन्होंने कहा था कि इस प्रकार के संस्कृतकालिज रहने से क्या लाभ है। मूलायोंड में स्वर्गीय प्रसन्नकुमार ठाकुर का जो संस्कृत विद्यालय है उसमें किसी प्रकार वेदों के पठनपाठन की व्यवस्था हो सकती है—इस विषय में स्वामीजी ने नेशनल पत्रिका के सम्पादक नवगोपाल मित्र महाशय को एक प्रस्ताव लिख कर दिया था। आयुर्वेद की रक्षा पर भी उनकी विशेष दृष्टि थी। ऐसा सुना जाता है कि इस विषय में उन्होंने डाक्टर महेन्द्रलाल सरकार के साथ विचार किया था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सहज संस्कृत में अति कठिन विषयों का व्याख्यान हो सकता है। उनके हाव-भाव से उनकी भाषा को सहज में ही अनेक लोग समझ जाते थे।"

उस सभा में आने के लिये ताराचरण तर्करत्न से भी अनुरोध किया गया था। ताराचरण काशीराज के सभापण्डित होने पर भी भट्टपल्ली के रहने वाले थे। अस्तु। अनुरोध करने पर भी उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया; किन्तु स्वामीजी की अविद्यमानता में अपनी शास्त्रज्ञता का घमण्ड करने लगे। जब एक ओर सभा में आकर उन्होंने शास्त्रविचार नहीं किया, और दूसरी ओर अपनी विद्याबहुलता के प्रदर्शन में प्रवृत हुए, तो वहां के अनेक लोगों ने इच्छा की कि तर्करत्न महाशय अन्ततः केवल एक बार ही स्वामीजी के सामने विचारार्थी रूप से उपस्थित हों‡। अन्त में अनेकों की इच्छा और अनुरोध के अनुसार वह दयानन्द के साथ विचार करने पर सम्मत हुए। दोनों के सुविधा पर ध्यान रखके विचार का दिन स्थिर हो गया। यही स्थिर हुआ कि मण्डज बाबू के जिस उद्यान में दयानन्द ठहरे हुए थे उसी उद्यान में विचार-सभा का अधिवेशन हो। तर्करत्न महाशय भट्टपल्ली के कई पण्डितों के साथ विचार के दिने संध्या समय स्वामीजी के निकट उपस्थित हुए। वह दिन मङ्गलवार था। सुतरां मङ्गलवार सायंकाल को ही ताराचरण तर्करत्न के साथ दयानन्द का हुगली में विचार हुआ था। श्रीयुक्त भूदेव मुखोपाध्याय प्रभृति कई विश्रुतनामा व्यक्ति भी विचारस्थल में उपस्थित थे। विचार-स्थल में किसी प्रकार की वाद-वितण्डा न होने पावे, विशेषतः यथोचित धीरता और गम्भीरता के साथ विचार-कार्य्य सम्पादन हो—इस पक्ष में दोनों ही एकमत थे। अधिकन्तु, स्वामीजी ने न्यायशास्त्र से प्रवर्तक महर्षि गौतम के पथ के अनुसार विचारकार्य करने का प्रस्ताव किया। ताराचरण भी उससे

---

‡ जब दयानन्द प्रमादकानन में ठहरे हुए थे तब पण्डित ताराचरण के एक दिन राजा यतीन्द्रमोहन ठाकुर के पास उपस्थित होने पर यतीन्द्रमोहन ने उनसे स्वामीजी के साथ विचार करने का अनुरोध किया था। इस अनुरोध पर ताराचरण कुछ संकट में पड़ गये थे, क्योंकि वह राजा के अनुरोध को भी अस्वीकार नहीं कर सकते थे और स्वामी जी के साथ विचार करने की भी इच्छा नहीं रखते थे। सुतरां विचार दिन के सम्बन्ध में आज-कल परसों करके अन्त में कलकत्ता से चले आये थे। किन्तु यहां पुनः ऐसा करने का उपाय नहीं था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सहमत हो गये। उसके पश्चात् ग्रन्थों की प्रामाणिकता की बात उठी। इस सम्बन्ध में उन दोनों ने कुछ देर विचार किया और दोनों ने चारों वेद, छः वेदाङ्ग और छः दर्शन को प्रामाणिक ग्रन्थ स्वीकार कर लिया विचार्य्य विषय के प्रसंग में तर्करत्न महाशय ने मूर्तिपूजा की विधेयता का पक्ष अवलम्बन किया, और स्वामीजी वैदिक प्रमाणों के अनुसार उसे अविधेय बतला कर प्रतिवाद करने के निमित्त अग्रसर हुए। उसके पश्चात् विचार आरम्भ हुआ। ताराचरण ने अपने पक्ष के समर्थन में कहा—"पतञ्जलिसूत्रम् 'चित्तस्य आलम्बने स्थूल आभोगो वितर्क' इति व्यासवचनं अर्थात् पातञ्जलसूत्र में कहा गया है कि स्थूल पदार्थ के अवलम्बन के बिना चित स्थिर नहीं हो सकता। इसी कारण उपासना के समय पाषाणादि की मूर्ति आवश्यक है—यह व्यासोक्ति है।"

दया०—आपने जो कहा है वह ठीक पतञ्जलि का सूत्र नहीं है। पतञ्जलि का सूत्र यह है—"विषयवतीवा प्रकृतिरुत्पन्ना मनसः स्थिति निबन्धनी इति।" अर्थात् किसी वस्तु का अवलम्बन करके चित्त की स्थिरता सम्पादन की जा सकती है। इसी कारण व्यासदेव ने व्याख्या में लिखा है—'नासिकाग्रे धारयत इत्यादि।' इसका अर्थ यह है कि नासिका के अग्रभाग पर दृष्टिपात करने से चित्त स्थिर किया जा सकता है। आपके उच्चारण की अशुद्धि और पाठक की अशुद्धि को देखकर बोध होता है कि आप पातञ्जलदर्शन से उत्तम रूप से परिचित नहीं है। तब आपने उल्लिखित सूत्र को पतञ्जलिका कह कर किस प्रकार व्यास का कहा? किन्तु सूत्र न पतञ्जलिप्रोक्त है न व्यास कथित। और यदि वह पतञ्जलिप्रोक्त हो, तो फिर व्यासकथित कैसे हो सकता है और व्यासकथित हो, तो पतञ्जलिप्रोक्त कैसे हो सकता है? इसलिये इससे आप अपना खण्डन स्वयं ही करते हैं।

तारा०—"स्वरूपसाक्षाद्वती प्रज्ञा आभोगः सच स्थूलविषयत्वात् स्थूल इत्यादि।" अर्थात् जो चक्षु के द्वारा देखा जाय वह मन में स्थित हो जाता है और चक्षु द्वारा स्थूल पदार्थ ही देखा जाता है, इसलिए मन भी स्थूल पदार्थ को धारण करता है। सुतरां प्रतिमा आदि स्थूल पदार्थ ही उपासना के उपयोगी हैं।

दया०—आपने विचार के आरम्भ में स्वीकार किया है कि वेदादि सत्य ग्रन्थों के भिन्न और किसी ग्रन्थ को प्रामाणिक कह कर ग्रहण नहीं करेंगे, तो फिर अब आप वाचस्पति के वचन को उद्धृत करके आत्मपक्ष का समर्थन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

क्यों करते हैं; और जागृत अवस्था में मनुष्य को यावतीय वस्तुओं के स्थूल तत्व का ज्ञान होता है, परन्तु स्वप्नावस्था में वस्तुओं के स्थूलतत्व का ज्ञान नहीं रहता। ऐसा होने से आपके कथनानुसार स्वीकार करना पड़ता है कि स्वप्नावस्था में मनुष्य को वस्तुज्ञान भी नहीं रहता। किन्तु यह सत्य के विरुद्ध है। आपने पहले ही कहा है कि वृथा कथा में विचार का समय नहीं खोवेंगे किन्तु अब आप ऐसा ही कर रहे हैं। यदि स्थूल वस्तु के अतिरिक्त किसी प्रकार से चित्त स्थिर नहीं होता, तो संसार में प्रतिमा के अतिरिक्त तो अनेक वस्तु हैं। फिर आप प्रतिमा ही को लेकर इतनी खेंचातानी क्यों करते हैं ?

तारा०—यदुक्तं भवता तेनैव प्रतिमापूजनमेव सिध्यत्येतस्याः स्थूलत्वात्—अर्थात् आपके कथन से ही मूर्तिपूजा सिद्ध होती है, क्योंकि मूर्ति भी एक स्थूल पदार्थ है।

दया०—एव एव को बारम्बार कहने से विदित होता है कि आपका संस्कृत का ज्ञान नितान्त अल्प है, इसीलिये पाण्डित्य का अभिमान करते हैं? फलकथा, उपासना यदि सामीप्यबोधक है, तो आप लोग इस लोक से वैकुण्ठ-लोक के विष्णु की उपासना कैसे करते हैं और शिल्पि गण पाषाणादि पदार्थ द्वारा किस प्रकार से वैकुण्ठलोकवासी विष्णु की मूर्ति निर्माण कर सकते हैं ?

तारा०—'अथ स यदा पितृन्नावाह्यति तेनपितृलोकेन सम्पन्नो महीयते" इस वचन के द्वारा लोकान्तरवासी व्यक्तियों की भी उपासना सम्भव है।

दया०—इस वचन के साथ उपस्थित विषय का कोई सम्बन्ध नहीं है। इस वचन का तात्पर्य यह है कि अष्टैश्वर्य सम्पन्न योगी इच्छा के अनुसार सब स्थानों में जा सकते हैं—इच्छा करने पर वे पितृलोक में जाकर आनन्द उप-भोग करते हैं। सुतरां इससे लोकान्तरस्थित वस्तुओं की उपासना के सम्बन्ध में कोई बात नहीं आती।

इस प्रकार दयानन्द के सामने पदे २ विपर्यस्त होकर अन्त में तर्करत्न महाशय कह उठे—"उपासना मात्रैव भ्रममूलम् अर्थात् उपासना मात्र ही भ्रममूलक है।" यह सुन कर स्वामीजी ने कुछ हँस कर कहा—"मूर्तिपूजा की विधेयता के प्रतिपादन में असमर्थ होकर अब आप उपासनामात्र को ही भ्रममूलक कहते हैं।" अस्तु। पण्डित ताराचरण के पराभूत होने के साथ ही उस दिन की सभा का कार्य समाप्त हो गया। सभा के कार्य के अन्त में बाबू वृन्दावनचन्द्र और बाबू भूदेव मुखोपाध्याय प्रभृति कहने लगे कि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ताराचरण मूर्तिपूजा का समर्थन करने आये थे, परन्तु स्वयं खण्डन करके चले गये। कुछ देर पीछे ताराचरण सभास्थल से उठ कर ऊपर जाने के उद्देश्य से सोपान पर चढ़ते थे कि इतने में स्वामीजी ने जाकर उनका हाथ पकड़ लिया और हाथ पकड़े हुए दोनों ऊपर चले गये। इसके पश्चात् स्वामीजी के सद्भाव से पूछने पर तर्करत्न ने सबके सामने सरल भाव से कह दिया–"मूर्तिपूजा मिथ्या तो है ही परन्तु हम तो उदरपूर्ति के लिये इसका समर्थन करते हैं। ऐसा न करें, तो महाराजा काशी बिना विलम्ब ही बाहर निकाल दें।" तर्करत्न के मुख से ऐसी बात को सुनकर, अनुमान होता है कि, सारे ही उपस्थित व्यक्ति कुछ विस्मित हुए होंगे। किन्तु ताराचरण के समान इस देश के अनेक तर्करत्न अवस्थादोष से वा अर्थवश से मूर्तिपूजा का अनुमोदन कर रहे हैं—यह कहना बाहुल्यमात्र है।

———

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सातवां अध्याय

वङ्गदेश से प्रस्थान,–छपरा नगर में ब्राह्मणों के साथ विचार, डुमरांव में शास्त्रार्थ-काशी में वैदिक पाठशाला का स्थापन,-कानपुर प्रभृति में भ्रमण करके इलाहाबाद में गमन,–वहां वेदादि विषय में आलोचना और धर्म्मव्याख्या

दयानन्द कलकत्ता और हुगली के अतिरिक्त वङ्गदेश के किसी और स्थान में नहीं गये। परन्तु कलकत्ता आने से पहले वह मुर्शिदाबाद जिले के अन्तर्गत बालुचर नामक स्थान में कुछ दिन रह कर आये थे ‡। इसके पश्चात् वह इस देश में फिर कभी नहीं आये। सुतरां बंगाले के विशाल क्षेत्र के भीतर केवल

‡ इस पुस्तक के प्रथम भाग ‡ के प्रकाशित होने के पश्चात् बालुचर निवासी थानसिंह नामक एक जैनधर्म्मावलम्बी व्यक्ति के साथ ग्रन्थकार का साक्षात् हुआ। साक्षात् होने पर, विशेषतः पहले से ही परिचित होने से, पुस्तक-रचयिता ने दयानन्द के सम्बन्ध में थानसिंह से कई बातें पूछीं। उनका जो उत्तर थानसिंह ने दिया वह यहां प्रकाशित किया जाता है। उन्होंने कहा, "ठीक किस सम्वत् में दयानन्द सरस्वती बालुचर आये थे—यह हम नहीं कह सकते। सम्भवतः वह कार्तिक मास में यहां आये थे। यहां आकर प्रथम वह एक मिर्जापुरी

‡ ग्रन्थकार ने यह पुस्तक बंगला में दो भागों में प्रकाशित की थी। प्रथम भाग में अवतरणिका और छः परिच्छेद थे; द्वितीय भाग सप्तम परिच्छेद से आरम्भ होता था। परन्तु अनुवाद में पुस्तक को दो भागों में विभक्त करना उपयोगी नहीं समझा गया। (अनुवादक)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बालुचर, हुगली और कलकत्ता में ही स्वामी जी आये—यही अनुमान होता है। किन्तु वह बङ्गदेश में फिर क्यों नहीं आये ?

कोई-कोई कहते हैं कि स्वामी जी की बङ्गदेश से श्रद्धा आ गई थी। बङ्गवासियों के चरित्र में भ्रष्टाचारिता का प्राचुर्य्य देख कर उन्होंने नितान्त विरक्ति प्रकट की थी। विशेषतः पदे-पदे बङ्गालियों की केवल बकवादिता का परिचय पाकर वह बङ्गभूमि के शुभाशुभ के सम्पर्क में एक प्रकार से निराश होकर गये थे। परन्तु हम इस बात को सत्य मान कर ग्रहण नहीं कर सकते। क्योंकि जो सारे भारतवर्ष के सर्वप्रकार की शुभ चिन्ता में ही अहोरात्र रत रहते थे, जो हिन्दु साधारण का सर्वतोभावेन मङ्गल साधन करने के निमित्त तपोरत रहते थे, उनके पक्ष में एक अङ्ग का परित्याग करके दूसरे अङ्ग का पुष्टिसाधन करना, बङ्गाले के सम्बन्ध में उदासीन रह कर पञ्चनद की परिचर्य्या में शक्ति नियोजन करना किसी रूप से भी सम्भावित नहीं है। अस्तु। जब वह फिर बङ्गदेश में नहीं आये, तब यही विश्वास करना होता है

निवासी वैश्य की कोठी में ठहरे। मैं उसके गुमाश्ते से संवाद पाकर उनके पास गया और वहां से उन्हें अपने उद्यान में ले आया। हमारे उद्यान में वह प्रायः एक मास रहे। स्वामीजी गेरुवे वस्त्रधारी संन्यासी के समान आये थे। उस समय उनके शरीर में विभूति लगी हुई थी। उनके साथ एक ब्राह्मण था। वह स्वामीजी के साथ रसोई करता था। स्वामी जी को देखने हमारे उद्यान में अनेक लोग आते थे, यहां तक कि उनके साथ शास्त्रालाप करने के लिए मुर्शिदाबाद और बहरामपुर तक से लोग आते थे। मैं उनके साथ प्रायः जैन धर्म्म के विषय पर ही बातचीत किया करता था, क्योंकि मैं स्वयं जैन था। दयानन्द उस समय मूर्तिपूजा का प्रतिवाद करते थे, एकमात्र परमेश्वर को मानते थे, सब ग्रन्थों से वेद को श्रेष्ठ कहते थे और उसी के साथ वेदों की प्रचलित टीका और भाष्य समूह को भी भ्रान्तिपूर्ण बतलाते थे। उनकी बातों से उस समय विदित हुआ था कि वह स्वयं एक वेदभाष्य का प्रकाश करेंगे। उद्यान के मालियों से मैंने सुना था कि स्वामीजी मध्याह्न के समय भोजन करके कुछ देर टहलते थे, रात्रि में केवल एक प्रहर सोते थे। और चार बजे उठ कर प्रातःकाल तक ध्यान में बैठे रहते थे। भारतवर्ष का किस प्रकार कल्याण हो—स्वामी जी केवल यही सोचते रहते थे। मैंने उनके समान निःस्वार्थ देश-हितैषी संन्यासी कहीं नहीं देखा।”

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कि बङ्गदेश से वा बङ्गदेशवासियों के साथ उनका यही शेष वा समस्त सम्पर्क हुआ था।

स्वामीजी बङ्गभूमि से विदा लेकर हुगली से बिहार की ओर गये। छपरा बिहार के भीतर एक प्रसिद्ध नगर है। वह बिहार में प्रविष्ट होकर छपरा नगर में गये। छपरा के शिवगुलाम नामक एक सम्भ्रान्त भूपति (जमींदार) ने स्वामीजी को बुलाया था। शिवगुलाम ने यथोचित यत्न के साथ उनके रहन-सहन का प्रबन्ध कर दिया। स्वामी जी के आने का सम्वाद शीघ्र ही सारे छपरा में फैल गया। दयानन्द के आने पर, विशेषतः उनकी ओर शिव-गुलाम के प्रगाढ़ श्रद्धाभक्ति प्रदर्शन करने पर, छपरा के ब्राह्मणगण बहुत कुछ रोषाविष्ट हुए, यहां तक कि नगर में जहां-तहां यह कहकर कि एक नास्तिक आया है स्वामी जी की निन्दा करने लगे।

इस ओर वहाँ के नाना श्रेणी के लोग दयानन्द के पास आने लगे। प्रातः-काल और सन्ध्या में ही लोगों का अधिक समागम होता था। आये हुए लोगों में से कोई-कोई कौतूहलवश होकर प्रश्न करते थे; परन्तु उनमें से अनेक दया-नन्द की तेजोदीप्त मूर्ति, प्रसारित ललाट, प्रतिभामय मुखमण्डल और शास्त्र-व्याख्या के एक प्रकार से अपूर्व ढंग को देख कर ही एकदम चुप हो जाते थे। इस प्रकार छपरा के अनेक लोग स्वामी जी की ओर आकृष्ट हो गये। किन्तु वहाँ के जो धर्म्मजीवी ब्राह्मणगण उनके आने के दिन से ही नाना प्रकार के निन्दावाद में नियोजित हो गये थे, उन्हें दयानन्द का इस प्रकार का प्रताप और प्रतिष्ठा तनिक भी सह्य नहीं हुआ। इसी कारण वे स्वामी जी के प्रति-कूल समरघोषणा करने के अभिप्राय से दल बांध कर पण्डित जगन्नाथ नामक एक प्रसिद्ध पुरोहित के घर गये। परन्तु जगन्नाथ उनकी सहायता करने में सम्मत नहीं हुए, प्रत्युत नाना प्रकार से शास्त्रों के वचनों को पढ़ कर उन्होंने आये हुए ब्राह्मणों को समझा कर कहा कि नास्तिक के मुख देखने से ही महा-पातक होता है, इसलिये दयानन्द के समान एक विशिष्ट नास्तिक के सम्मुख होकर शास्त्रार्थ में प्रवृत होना उनके लिए किस प्रकार से विधेय हो सकता है। ब्राह्मणों का दल जगन्नाथ पुरोहित के मुख से इस प्रकार की आशा के प्रतिकूल बात को सुन कर हताश हो गया और सरस्वती महाशय के प्रतिकूल फिर जाने का आयोजन करना उचित है वा नहीं—इस विषय में परामर्श करने लगे। क्रमशः यह बात स्वामी जी के कानों तक भी पहुंच गई। स्वामी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जी यह अच्छी तरह से जान गये कि जगन्नाथ चालाकी कर रहे हैं कि जिससे उनके साथ शास्त्रार्थ न करना पड़े। इसलिये उन्होंने विरोधी ब्राह्मणों को बुला कर कहा कि—"यदि हमारे समान नास्तिक के सम्मुख होने से जगन्नाथ पण्डित को पातक लगता है, तो वह एक यवनिका (परदे) के पीछे बैठ कर हमारे साथ अनायास से शास्त्रार्थ कर सकते हैं।" यह बात सुन कर विरुद्ध पक्ष के ब्राह्मण कुछ आश्वस्त हुए, और अविलम्ब से पुरोहित पुङ्गव के पास जाकर यवनिका के पीछे बैठ कर शास्त्रार्थ करने की व्यवस्था की। परन्तु जगन्नाथ ने उस प्रस्ताव से भी सहज में सम्मत होना नहीं चाहा। सम्मत न होने ही की तो बात थी, और सम्मत न होने से भी जगन्नाथ का सम्मान न रहता था, क्योंकि वह छपरा नगर में पण्डित कहला कर प्रसिद्ध थे और विशेषतः पुरोहित कहला कर हिन्दु साधारण के निकट पूजित थे। और भी एक बात थी। जब विचार-कार्य सर्वतोभावेन पुरोहित महाशय की इच्छानुकूल ही सम्पादित होने की व्यवस्था होती थी, तब स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ में प्रवृत्त न होने से जगन्नाथ की प्रतिष्ठा वा प्रतिपत्ति की रक्षा के विषय में विशेष विघ्न होगा, यह बोध होता है, सब ही जानते थे। इस सब विषय पर विचार और आलोचना करके जगन्नाथ पण्डित अन्त में पूर्वोल्लिखित प्रस्ताव से बिना सहमत हुए न रह सके। इसलिये स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ अनिवार्य हो गया। तब प्रतिपक्षी ब्राह्मण घमण्ड के साथ आनन्द प्रकट करने लगे।

निर्दिष्ट दिन के निर्दिष्ट समय पर स्वामी दयानन्द सभा के स्थान में उपस्थित हुए। उनके उपस्थित होने पर शब्दायमान सभागृह ने निस्तब्ध भाव धारण कर लिया। पूर्वोल्लिखित प्रस्ताव के अनुसार स्वामीजी के सामने यवनिका (परदा) टांगी गई। जगन्नाथ पुरोहितने यवनिका के भीतर आसन ग्रहण किया। सभा में आये हुए सभी लोग इस विचित्र सभा के विचित्र विचार व्यापार को देखने के लिये उत्सुक होने लगे। प्रथमतः स्वामीजी ने ही प्रश्न उठाया। प्रश्न स्मृतिशास्त्र के एक प्रसङ्ग को लेकर किया गया था। जिज्ञासित प्रश्न के उत्तर में जो कुछ जगन्नाथ ने कहा वह सदुत्तर नहीं था। अधिकन्तु, बोलने के समय उन्होंने बहुत से अशुद्ध शब्दों का व्यवहार किया। अशुद्ध वा व्याकरणदूषित पदों का प्रयोग पण्डितों के कान में बड़ा ही क्लेश-दायक होता है। इसी कारण दयानन्द उनकी भाषा की अशुद्धि और अन-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भिन्नता दिखाये विना न रह सके। इस पर श्रोताओं के मन में सन्देहका सञ्चार हुआ, और सभा में उपस्थित सब ही जान गये कि जगन्नाथ पण्डित का पाण्डित्य का अभिमान एक असार अभिमान है। जगन्नाथ स्वयं ही अप्रतिभ हो गये, लज्जाभिभूत हो गये और स्वामी जी की शास्त्रदर्शिता के सामने किसी न किसी प्रकार शास्त्रीय कथा की अवतारणा करते चले जाना उनके पक्ष में सर्वतोभावेन धृष्टता का परिचायक है—यह समझ कर मन ही मन में क्षुण्ण होने लगे। सुतरां यवनिका के भीतर चुप बैठने के अतिरिक्त जगन्नाथ को और कुछ कार्य न रहा। सभा की ऐसी अवस्था में सरस्वती महाशय चुप न रह सके। उन्होंने गम्भीर स्वर से सभा मण्डल को कम्पित करके आर्यशास्त्रों की व्याख्या आरम्भ कर दी, नाना प्रकार की कथाएँ सुनाने लगे। लगभग चार घंटे तक बोले। सभा में उपस्थित सब ही लोग विमोहित हो गये, और छपरानगर में एक कोलाहल मच गया कि आर्य धर्म्म की इस प्रकार की अद्भुत व्याख्या कभी किसी ने नहीं सुनी। परन्तु इससे विरुद्ध मतावलम्बी ब्राह्मणों का ईर्ष्यानल एक दम जल उठा। यहाँ तक कि जब उन्होंने समझ लिया कि स्वामीजी को पराभूत करने की और कोई सम्भावना नहीं है, तब वे बारंबार यह चीतकर करने लगे कि वेदों की निन्दा होती है। आजीवसर्वंत्र ब्राह्मणों के इस प्रकार के आकस्मिक चीतकार और अब्राह्मणोचित व्यवहार से सभा में आये हुए सारे ही मनुष्य नितान्त विरक्त हो गये, विशेषतः सभागृह से शीघ्र ही चले जाने के लिये उनसे अनुरोध करने लगे। तब ब्राह्मण लोग सभास्थल का त्याग किये बिना न रह सके। परन्तु उनमें जो अधिकतर उद्धृत वा अभद्रप्रकृति के मनुष्य थे वे यह कहते हुए कि "स्वामीजी जब मार्ग में मिलेंगे, तो उन्हें पत्थरों से और छुरी से मार डालेंगे, शीघ्रता से पलायमान हो गये।

स्वामीजी छपरा के विद्यालय में एक दिन उपस्थित हुए। विद्यालय के बालकवृन्द व सञ्चालक आदि दयानन्द के आगमन से अत्यन्त आनन्दित हुए और उनके प्रति सम्भ्रम वा सम्मान प्रदर्शन करने में कुछ भी त्रुटि नहीं की। इस प्रकार स्वामीजी छपरा नगर में एक पक्ष के लगभग रह कर दानापुर चले गये। दानापुर से डुमरांव में आये। डुमरांव बिहार के भीतर कोई प्रधान नगर न होने पर भी महाराजा की राजधानी के नाम से प्रसिद्ध स्थान है। डुमरांव से दयानन्द सर्वथा अपरिचित नहीं थे, क्योंकि उससे पहले वह एक बार वहां आये थे। कलकत्ता यात्रा के समय वह डुमरांव में नागाजी के साथ बातचीत

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

करके गये थे। नागाजी एक साधु थे। वे नागाजी के भिन्न और नाम से भी प्रख्यात थे। अनेक उन्हें साधुराम नाम से भी सम्बोधन करते थे। वहां दुर्गाप्रसाद परमहंस नामक एक व्यक्ति की पाण्डित्य विषय में ख्याति थी। दयानन्द ने इस यात्रा में डुमरांव में आकर दुर्गाप्रसाद के साथ शास्त्रार्थ किया। उनके शास्त्रार्थ सम्बन्ध में डुमरांव में एक प्रबल आन्दोलन हुआ। परन्तु शास्त्रार्थ का परिणाम क्या हुआ— इस विषय में वास्तविक समाचार कुछ नहीं जाना जाता। परलोकगत दीवान लाला जयप्रकाश लाल ने दयानन्द के पास आकर नाना प्रश्न किये। स्वर्गीय महाराज राधाप्रसादसिंह भी धर्म्मालाप करने के अभिप्राय से स्वामी जी के पास आये थे। किन्तु डुमरांव में स्वामीजी और अधिक समय तक न रह सके, क्योंकि काशी में, शीघ्र आना उनके लिए आवश्यक हो गया।

स्वामी दयानन्द वैदिक पाठशाला के बड़े पक्षपाती थे। उनके समान वैदिक पाठशालाओं के पक्षपाती वा परिपोषक और किसी ने इस देश में वर्तमान समय में जन्म ग्रहण नहीं किया। वह जिस प्रकार वेदादि आर्षग्रन्थों का पठन-पाठन आवश्यक वा अपरिहार्य्य मानते थे, उस प्रकार और किसी को मानते हुए हम नहीं देखते। इसी कारण वैदिक पाठशाला के स्थापन में उनका अपरिसीम उत्साह था। उन्होंने फर्रुखाबाद प्रभृति स्थानों में कई एक वैदिक विद्यालय स्थापित किये थे, परन्तु उनसे उनकी सम्यक् रूप से तृप्ति नहीं हुई थी। अनेक कारणों से काशी में एक वैदिक पाठशाला स्थापन के लिये उन्होंने सङ्कल्प किया था। यह शुभ सङ्कल्प स्वामीजी के हृदय से एक दिन के लिये भी अन्तर्हित नहीं हुआ। इसलिये वह प्रथमवार के समान इस बार भी आकर काशी में वैदिक पाठशाला के स्थापनार्थ बद्धपरिकर हो गये। प्रथमवार स्वामीजी की चेष्टा सार्थक नहीं हुई थी; परन्तु इस बार उनकी चेष्टा सार्थक हो गई। उन्होंने हिन्दुओं के पवित्र तीर्थ में हिन्दुओं की पवित्र विद्या की आलोचना के लिये वैदिक पाठशाला स्थापित कर दी। उस पाठशाला ने वैदिक-सार्वभौम पाठशाला नाम ग्रहण किया ‡ और उसके अध्यापन कार्य

‡ १७९६ शकाब्द के ज्येष्ठ मास की 'तत्त्वबोधनी पत्रिका, में परिव्राजक हेमचन्द्र चक्रवर्ती ने लिखा है —"यहां (कानपुर में) पण्डित दयानन्द सरस्वती स्वामी के साथ हमारा साक्षात् हुआ। उन्होंने यह कहा कि काशी में माघ मास के शुक्ल पक्ष में एक वैदिक-सार्वभौम-पाठशाला स्थापित की है।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में पहले पण्डित शिवकुमार शास्त्री नियोजित हुए। काशी के लोगों ने दयानन्द की स्थापित पाठशाला में आशानुरूप सहाय्य नहीं किया। इसी कारण उन्हें पाठशाला-परिचालन के लिये नाना स्थानों से चन्दा संग्रह करना पड़ा ‡ अस्तु। इस प्रकार वाराणसी में वैदिक विद्यालय स्थापित करके और उसकी स्थिति और उन्नति के लिये यथासम्भव सुप्रबन्ध करके दयानन्द कुछ दिन पीछे, कानपुर आये। उसके पश्चात् स्थानीय पाठशाला के कार्य निरीक्षण के अभिप्राय से वह फर्रुखाबाद गये। फर्रुखाबाद में उस यात्रा में व्याख्या वा वक्तृता आदि विशेष रूप से हुई। वह तत्रस्थ वैदिक पाठशाला के प्रबन्ध कार्य्य में ही संलग्न रहे।

उसके पश्चात् स्वामीजी इलाहाबाद आये। नागरिक कोलाहल से दूर रहने के अभिप्राय से वह नागरिक सीमा के बाहर एक विस्तृत उद्यान में रहने लगे। स्थानीय डाकघर द्वारा उन्होंने कई एक विज्ञापन भेजे। उनसे उनकी उपस्थिति का संवाद शीघ्र ही नागरिक जनसाधरण के कर्णगोचर हो गया। अधिकन्तु, उस द्वारा इलाहाबाद के शास्त्री, शिक्षित और सम्भ्रान्त व्यक्तियों को भी स्वामीजी के साथ शास्त्रार्थ वा धर्म्म विचार करने के उद्देश्य से निमन्त्रि किया गया था। उसके अनुसार नाना श्रेणी के लोग दयानन्द के पास आने लगे। म्योरकालिज के अपेक्षाकृत अधिक वयस्क छात्र कौतूहलवश होकर उपस्थित हुए। संस्कृताध्यापक पण्डित काशीनाथ शास्त्री आये। महाराष्ट्रीय क्रिष्टान निहिमिया नीलकान्त गोरे ऋग्वेद लेकर आये; और निजामुद्दीन नामक एक अंग्रेजी शिक्षित मौलवी आकर परमेश्वर के स्वरूपादि के विषय में मोहम्मदी शास्त्र के मन्तव्यावन्तव्य की आलोचना करने लगे।

नीलकान्त के हाथ में जो ऋग्वेद का ग्रन्थ था वह मैक्समूलर नामक योरुपीय पण्डित का प्रकाशित किया हुआ था। नीलकान्त ने उस ऋग्वेद के एक स्थल में से अग्नि शब्द को उद्घृत करके दयानन्द से जिज्ञासा की कि जब

‡ इस विषय में श्रीमान आत्मानन्द सरस्वती ने कहा कि काशी में वैदिक पाठशाला स्थापन-करके उसके व्ययार्थ चन्दा संग्रह करने के लिये स्वामीजी ने जोहरदास उदासी नामक व्यक्ति को नाना स्थानों में भेजा। जोहरदास डुमरांव और आरा प्रभृति में भ्रमण करके कुछ रुपये एककालीन (यकमुश्त) वा मासिक हिसाब से साहाय्य लेकर आये। जोहरदास एक सुपण्डित व्यक्ति थे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इसका अर्थ अग्नि के अतिरिक्त और कुछ समझ में नहीं आता, तब अग्नि शब्द को ब्रह्म बोधक कह कर किस प्रकार से प्रतिपादन कर सकते हैं ? इसके उत्तर में स्वामी जी ने कहा—"अध्यापक मैक्समूलर ने वेदों के यथार्थ तात्पर्य को हृदयङ्गम न करके इस प्रकार का विकृत अर्थ किया है। इसके अतिरिक्त वेद अग्नि-जलादि जागतिक वस्तुओं की पूजा से परिपूरित है—इस बात को विघोषित न करने से बाइबिल वर्णित धर्म्म का उत्कर्ष भी किसी प्रकार सिद्ध न हो सकेगा, इस लिये अग्नि शब्द की इस प्रकार की भ्रान्त व्याख्या करनी ही मैक्समूलर के लिये स्वाभाविक है। इसके उत्तर में निहि-मिया नीलकान्त और कुछ न कह कर चुप हो रहे।

दयानन्द ने उसके पश्चात् ख्रिष्टीय धर्म्म का प्रसङ्ग उठाया। उसके युक्ति-युक्त होने के सम्बन्ध में वह आलोचना करने लगे बाइबिल वर्णित ईश्वर अनेक विषय में मानवीय भावापन्न है, भयभीत और विचलित होता है, और भय से परित्राण पाने के निमित्त समय २ पर मनुष्य जाति के अशुभ सम्मान के लिए भी उत्तेजित हो जाता है—यह सिद्ध करने के लिए स्वामी जी ने बोवलटावर (बुर्ज बाबुल) का वृत्तान्त उत्थापित किया‡। फलतः सभागत लोगों को यह समझाने लगे कि ईसाई लोगों का परमेश्वर विषयक विश्वास और सिद्धान्त सर्वथा समीचीन नहीं है। नीलकान्त गोरे इस बात का कोई

‡ पृथ्वी की प्रथम अवस्था में बहुत से मनुष्य एकत्रित होकर एक स्थान में एक गगन भेदी स्तम्भ निर्माण करते थे। उस स्तम्भ के निर्मित होने पर सारे ही मनुष्य उसके सहाय्य से स्वर्ग के राज्य में जा सकेंगे और स्वर्गधाम मनुष्यों के आने से कलुषित हो जाएगा—इस भय से परमेश्वर ने उस स्तम्भ के बनाने वालों में भाषा-भेद कर दिया। इस घटना पहिले से सारे मनुष्य एक भाषा भाषी थे भाषा भेद हो जाने से एक मनुष्य दूसरे की बात न समझ सका, इसलिये निर्माण कार्य में बाधा पड़ गई। उसके पश्चात् परमेश्वर ने एक प्रबल भूकम्प भेज कर उस निर्मितप्राय स्तम्भ को धराशायी कर दिया। इस प्रकार वह स्तम्भ धूलीसात् हो गया। अस्तु। वही स्तम्भ इतिहास में वेबिलटावर के नाम से विख्यात है। कहा जाता है कि जिस स्थानों में वेबिलटावर निर्मित हुआ था, पीछे आकर उसी स्थान में बाबिलन नगर निर्मित हुआ। Biblical Theological and Ecclesiastical Cyclopedea Vol. I, P. 590.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उत्तर न दे सके। तब हिन्दुश्रोता किसी-किसी विषय में जिज्ञासु हुए। पूर्वोल्लिखित काशीनाथ शास्त्री कुछ अवज्ञा के साथ स्वामी जी पर दृष्टिपात कर के बोले—'आपने किस लिये यह देशव्यापक गोलमाल मचाया है।' इसके उत्तर में स्वामी जी ने गम्भीर भाव से कहा—'मैंने गोलमाल नहीं मचाया। मेरे आने से पहले इस देश के पण्डितों ने भयानक गोलमाल मचा रक्खा था। अब मैं उस गोलमाल का प्रशमन करके सत्य की वाणी को धीरे-धीरे सुनाने की चेष्ठा करता रहा हूं।' दयानन्द के इस प्रकार के उत्तर से काशीनाथ कुछ अप्रतिभ हो गये और कोई बात न कह कर सहचर वर्ग के साथ सभास्थल से चले गये। तब समागत छात्रों के साथ बातचीत आरम्भ हुई। छात्र लोग उत्सुक होकर धर्म्म के सम्बन्ध में नाना प्रकार की बातें पूछने लगे। प्रसङ्गवश हिन्दुओं के नित्यानुष्ठित सन्ध्या का विषय भी आया। सन्ध्या की बात को उत्तमरूप से समझाने के अभिप्राय से उन्होंने उसे पढ़ने के लिये एक व्यक्ति को अनुमति दी।

उसके अनुसार ज्वाला प्रसाद नामक एक छात्र एक पाण्डुलिपि से उसका पाठ करने लगे। वह पाण्डुलिपि, बोध होता है, सरस्वती के स्वयं हाथ की लिखी हुई थी, और सम्भवतः वही पीछे आकर स्वामीजी को सन्ध्या नामक पुस्तक रूप से प्रकाशित हुई थी।

अतः पर मुसलमानों के मत के सम्बन्ध में बात चली। स्वामीजी ने पूर्वोक्त मौलवी से परमेश्वर के विषय में कुरान का अभिप्राय पूछा। किन्तु मौलवी जिज्ञासित विषय में कुरान की कोई बात न कह सका और हैमिलटन नाम के अंग्रेज दार्शनिक का मतामत बतलाने लगा। मौलवी स्वजाति के शास्त्रों से सुपरिचित नहीं थी; और उस समय स्वामीजो भी मुसलमान धर्म्म के मन्तव्यामन्तव्य को सूक्ष्म रूप से नहीं जानते थे। इस कारण उपस्थित प्रसङ्ग पर निजामुद्दीन ने जो कहा उन्होंने उसी को मोहम्मदी शास्त्रों का वास्तविक मत कह कर ग्रहण कर लिया। कुछ देर पीछे मौलवी और अन्यान्य कतिपय अंग्रेजी शिक्षित व्यक्तियों ने जन्मान्तरवाद का प्रसङ्ग उठाया। उन्होंने कहा—जन्मान्तरवाद में विश्वास करना अपेक्षाकृत अज्ञानता का परिचायक है, क्योंकि जीवात्मा का जन्म एक बार से भिन्न अधिक बार नहीं हो सकता। इस देश के पूर्वकालीन लोग महती अज्ञानता के अन्धकार में समावृत थे, इसलिए ऐसे भ्रान्तमत में विश्वास करते थे। किन्तु वे नहीं समझ सकते कि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वामीजी के समान सुपण्डित और सुबुद्धिसम्पन्न लोग किस प्रकार इसमें विश्वास स्थापन कर सकते हैं। उनके मुख से ऐसी बात सुन कर दयानन्द कुछ उत्तेजित हो गये। उत्तेजित होने का कारण क्या था ? कारण यह था कि इससे पहले उन्हें तनिक भी विदित न था कि वैदेशिक शिक्षा के प्रताप से हिन्दुओं की सन्तान स्वधर्म्म विषय में इतनी परिभ्रष्ट हो गई है। अस्तु। तब वह जन्मान्तरवाद के समझाने में अग्रसर हुए। जमान्तरवाद के पक्ष में जितने प्रमाण और युक्ति हैं उन सबको ही वह धीरे-धीरे प्रस्तुत करने लगे। उपस्थित विषय में शास्त्रीयता के साहाय्य का भी अवलम्बन किया। वह जन्मान्तर की कथा में इतने निमग्न हो गये कि बोलते-बोलते सन्ध्योपासना का समय भी अतिवाहित कर दिया। जब रात्रि के आठ बज गये, तब पूर्वोक्त ज्वालाप्रसाद और न ठहर सका, और स्वामीजी से व्याख्याकार्य समाप्त करने का अनुरोध किया। इसलिए उस दिन सभा का कार्य जन्मान्तरवाद के प्रसङ्ग में समाप्त हुआ। दूसरे दिन एक सम्भ्रांत बंगाली के घर दयानन्द ने एक वक्तृता दी। प्रायः एक सहस्र मनुष्यों के सामने वह धर्म्म के लक्षणों की व्याख्या करने लगे। स्वामीजी ने मनु के उपदिष्ट मतानुसार धर्म्म के दश लक्षण बतलाये। प्रसङ्गतः देशाचार की कई कुत्सित कथाओं का उल्लेख करके उन्होंने अत्यन्त आक्षेप किया। उनके आक्षेप का प्रधान अवलम्बन इदानीन्तन हिन्दू महिलाओं की अज्ञानता और अवरोध प्रथा (परदे का रिवाज) था। उन्होंने हमारे अतीत सम्पत्ति और विगत गौरव का उल्लेख करके कहा कि इस देश में भी एक समय वाष्पीय रथ (रेलवे) के समान द्रुतगामी रथ था। उसके प्रमाण में उन्होंने नल राजा के विमान का वर्णन किया। सभा में बैठे सभी व्यक्ति अवाक होकर महर्षि का व्याख्यान सुनते रहे। उस सभा के पश्चात् दयानन्द इलाहाबाद में अधिक दिन नहीं ठहरे। उसके थोड़े दिन पीछे जब्बलपुर चले गये। इस समय सन् १८७४ ईस्वी का जून वा जुलाई मास था।

———

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आठवां अध्याय

बम्बई का आन्दोलन, अहमदाबाद के प्रार्थना समाज में उपदेश, प्रार्थना समाज का नाम आर्य्यसमाज रखने का प्रस्ताव, भोलानाथ साराभाई के साथ वेद-विषयक आलोचना, बम्बई में प्रत्यागमन और महाराज मतखण्डन, आर्य्य-समाज-स्थापन, आर्य्यसमाज की नियमावली, मूर्तिपूजा का प्रतिवाद, पूना का आन्दोलन, वहां दोनों दलों का विवाद, इन्दौर और बड़ौदा प्रभृति स्थानों में विचार और व्याख्या, काशी में आकर वेदभाष्य के रचने का प्रस्ताव।

जब्बलपुर दयानन्द के लिए सुविधाजनक नहीं हुआ, क्योंकि वहां जाने के कुछ काल पीछे ही वहां के कई कपटप्रिय पण्डित उनके विरुद्ध नाना प्रकार के आचरण करने लगे। यद्यपि वह सरदार इंगला नामक एक सम्भ्रांत व्यक्ति के घर में कुछ दिन तक उपदेश करते रहे, यद्यपि उनके उपदेश सुनने के लिए वहां के सैकड़ों लोग आये, तथापि उन कपटाचारी पण्डितों के विद्वेष-मय व्यवहार से जब्बलपुर उन्हें प्रीतिकर नहीं हुआ। इसलिए उन्होंने उस स्थान को शीघ्र ही छोड़ दिया।

यह ठीक नहीं कहा जा सकता कि दयानन्द जब्बलपुर से कहां गये। सम्भवतः वह मध्यप्रदेशान्तर्गत नाना स्थानों में भ्रमण करते हुए नासिक आये और नासिक से बम्बई गये। तब १९३० सम्वत् का कार्तिक अथवा १८७४ ईस्वी का नवम्बर मास था। बम्बई में बालकेश्वर नामक स्थान उनके रहने के लिए निरूपित हुआ। उनके आने का समाचार विघोषित करने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के लिए एक विज्ञापन निकाला गया। विज्ञापन नाना भाषाओं में प्रकाशित होकर बम्बई की गली-गली में बंटने लगा। विज्ञापन को पढ़कर स्वामीजी के संबंध में लोगों में कौतूहल उद्दीपित हुआ। इसलिए उन्हें केवल देखने के लिए ही सैंकड़ों लोग आये। इसके भिन्न उनके साथ शास्त्रार्थ करने के लिए भी बहुत से लोग आने लगे। कोई उनकी मूर्ति, कोई उनके मन्तव्यामन्तव्य, कोई उनके योगबल और कोई उनके दिग्विजय सम्बन्ध में नाना प्रकार की बातें करने लगा। फलतः दयानन्द के विषय में बम्बई में एक अभिनव आन्दोलन मच गया। वहां के अनेक लोग अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार उस आन्दोलन की उद्दाम तरङ्ग में डूब गये। अधिकन्तु, उनके आघात से अनेक साम्प्रदायिकमत छिन्न-भिन्न होने आरम्भ हो गये, अनेक महन्त और महाराजों‡ के हृदय कम्पायमान हो गये, और उनके निर्मल प्रवाह से भावी आर्यसमाज की नींवभूमि परिष्कृत और परिक्षालित होने लगी।

इस वैदिक आन्दोलन का प्रवाह बम्बई की चारों दिशाओं में किस प्रकार परिव्याप्त हो—स्वामी जी को यह चिन्ता हुई। बम्बई के चतुपार्शवर्ती जितने स्थान शिक्षा वा सद्विचार के लिये प्रसिद्ध हैं दयानन्द ने उन सब स्थानों में जाने का सङ्कल्प किया। अहमदाबाद बम्बई-विभाग के भीतर एक प्रधान नगर है। इसी कारण वह कुछ दिन के लिये अहमदाबाद गये। वहां इससे पहले ही प्रार्थना समाज स्थापित हो गया था +। प्रार्थना समाज के सभ्यों ने दयानन्द के प्रति यथोचित सद्व्यवहार प्रदर्शन किया, यहां तक कि उपदेशादि देने के लिए आग्रह के साथ उन्हें समाज की वेदि छोड़ दी। स्वामी जी ने प्रार्थना समाज की वेदि पर अधिरूढ होकर कई वक्तृतायें दीं। इसके अतिरिक्त वहां के पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ भी हुआ। रावबहादुर भोलानाथ साराभाई अहमदाबाद के एक विशिष्ट व्यक्ति थे। वही इस प्रार्थना समाज के संस्थापक थे। इसके भिन्न वह गुजरात देश के सब प्रकार के सदनुष्ठान और शुभ कर्म्मों के सहायक थे। इस कारण साराभाई बम्बई में सर्वत्र संस्कारक नाम से परिचित थे। विशेषतः वह गुजरातीय समाज के शिरोभूषण रूप से समादृत होते थे। सुतरां उनके साथ वार्त्तालाप करके स्वामी जी बहुत प्रसन्न हुए।

‡ वल्लभाचारी नामक वैष्णव सम्प्रदाय के गुरु महाराज कहलाते हैं।

+ प्रार्थनासमाज बंगाले के ब्राह्मसमाज के न्याई सभाविशेष का नाम है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भोलानाथ ने उनसे बहुत बातें पूछीं, किन्तु उनके साथ वह सब बातों में एक-मत नहीं हो सके। इसलिये भोलानाथ को किसी-किसी विषय में भिन्नमत ही रहना पड़ा। प्रधानतः वेदों की अभ्रान्तता विषय में ही मतभेद हुआ। दयानन्द ने कहा कि वेदों की अपेक्षा पृथिवी भर में और कोई धर्म्म-शास्त्र उत्कृष्ट-तर नहीं है। इसके भिन्न वेद हैं। इसलिये हम वेदों को छोड़ कर किसी प्रकार से धर्म्म विचार नहीं कर सकते, और यदि करें भी, तो ऐसा करने से कृतकार्य नहीं हो सकेंगे। परन्तु भोलानाथ स्वामी दयानन्द की इन सब बातों से सहमत नहीं हो सके; किन्तु स्वामी जी की सत्यता के सम्बन्ध में भी कुछ सन्देह करने लगे, और ऐसा विश्वास करने लगे कि स्वामी जी किसी गूढ लक्ष्य की सिद्धि के अभिप्राय से ही वेदों की सर्वोपरि श्रेष्ठता का कीर्त्तन करते हैं। तब स्वामीजी ने वेदों की बात छोड़कर प्रार्थनासमाज की बात उठाई। यह बात सबके सामने न उठा कर कुछ एकान्त में कही। उस समय रावबहादुर भोलानाथ और रावसाहब महीपतराम रूपराम के भिन्न और कोई भी स्वामी जी के पास नहीं रहा। फलतः यही दो पुरुष प्रार्थनासमाज के वास्तविक हिताकांक्षी थे।

इस स्थल में एक अवान्तर कथा का समावेश भी आवश्यक है। स्वामी दयानन्द ने भारत में वैदिक धर्म्म की प्रतिष्ठा के लिये वैदिक पाठशालायें स्थापित तो की थीं, परन्तु वे सुफलप्रसव नहीं हुई थीं। उन्होंने आर्यों के अमूल्य शास्त्र स्वरूप वेदादि के अध्यापन के लिये फर्रुखाबाद, मिरजापुर, काशी और कासगंज प्रभृति स्थानों में एक-एक विद्यालय खोला था, परन्तु उनसे आशानुरूप कार्य नहीं हुआ था। इसीलिये वह कुछ क्षुण्ण हो गये थे, और क्षुण्ण होकर ही किसी नये उपाय की चिन्ता करते थे। परन्तु उन्होंने पुरातन प्रणाली का परित्याग नहीं किया, अथवा उल्लिखित स्थान समूह में पाठशालायें नहीं तोड़ दीं। वह केवल यही सोचते थे कि वैदिकधर्म्म की सुप्रतिष्ठा के लिये कोई उत्कृष्टतर प्रणाली है वा नहीं, और यदि है तो वह अवलम्बनीय है वा नहीं स्वामी जी की चिन्ता का यह विषय भी था कि अवलम्बनीय प्रणाली के विषय में किसी प्रकार की सभा का स्थापन करना विधेय है वा नहीं, और यदि विधेय हो तो वैदिकधर्म्म का वास्तव में प्रचार होगा वा नहीं। और भी एक बात थी कि वह जातीयता के साथ सम्बन्ध छोड़ कर किसी विषय में प्रवृत्त नहीं होते थे। अधिक क्या, विजातीयता की नींव बना कर दयानन्द को

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कोई काम करना अभीष्ट नहीं था। इसलिये उनकी चिन्ता का अङ्गीभूत यह भी हो गया था कि वैदिक पाठशालाओं के समान सभा विशेष का सङ्गठन वा स्थापन करना जातीय व्यापार होगा वा नहीं। वह समय-समय पर ब्रह्म समाज के साथ संसृष्ट हुए थे। बम्बई प्रदेश में प्रार्थना समाज के कार्य्यादि की भी पर्यालोचना करते थे। इसी हेतु उन्हें धर्म्म सभा विषयक अभिज्ञता भी हो गई थी। चिन्ता के उपस्थित क्षेत्र में वही अभिज्ञता उनकी सहायता भी करती थी, और वह सभा की उपकारिता को भी नाना कारणों से जानते थे। वह देखते थे कि कार्य का प्रबन्ध एक व्यक्ति की अपेक्षा अधिक व्यक्तियों पर अर्पित करने से उत्तम रूप से सम्पादित होता है। जो एक की शक्ति से नहीं होता, वह एक से अधिक व्यक्तियों की सम्मिलित शक्ति से अनायास से ही सिद्ध हो जाता है। इसलिये सभा संसृष्ट वा सभावलम्बित कार्यों के सुसम्पादन पक्ष में प्रायः आशङ्का नहीं रह सकती। परन्तु इस विषय में उनका चित्त सन्देहाच्छन्न होता था कि सभाओं के द्वारा वास्तव में धर्म्म का प्रचार होगा वा नहीं। परन्तु यदि सर्वाङ्गीन भाव से धर्म्म प्रचारित न भी हो, तौ भी सभाओं के साहाय्य से मत विशेष विस्तारित हो सकता है—इस विषय में वह निस्सन्देह हो गये थे। फलतः इन सब बातों पर मन ही मन में बहुत बार विचार और चिन्ता करके उन्होंने यह स्थिर कर लिया कि वैदिक मत के प्रचार के लिये सभाविशेष का स्थापित करना ही कर्त्तव्य है। वह मनः कल्पित वा प्रस्तावित सभा मनुष्य समाज में किस नाम से प्रख्यात होगी—इस सम्बन्ध में भी उन्होंने एक मीमांसा कर ली थी। अस्तु। इस प्रकार आर्यसमाज का बीज दयानन्द के हृदय में बोया जाकर अंकुरित हो गया था। इस समय दयानन्द उस अंकुरित बीज को वृक्षाकार में परिणत करने के लिये ही उद्योग करते थे। वह कुछ दिनों से सरस और ऊर्वर भूमि की खोज कर रहे थे। आनन्द का विषय है कि अहमदाबाद आकर उस उद्दिष्ट भूमि के उन्हें दर्शन हुए और उन्होंने प्रार्थना समाज में आर्यसमाज की स्थापना का प्रस्ताव किया।

साराभाई और रूपराम ने स्वामी जी के प्रस्ताव को आदरपूर्वक ग्रहण किया; परन्तु प्रार्थना समाज का नाम परिवर्तन आवश्यक है वा नहीं, विशेषतः उसका नाम आर्यसमाज रक्खा जा सकता है वा नहीं—इस विषय में वे दोनों चिन्ता करने लगे। स्वामी जी ने नाम का परिवर्तन चाहने से अर्थात् प्रार्थना समाज को आर्यसमाज नाम से प्रख्यात करने को उद्यत होने से एक अवि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सङ्गत प्रस्ताव किया था, क्योंकि उसके साथ प्रस्तावित आर्यसमाज का कोई विशेष मत विरोध नहीं था। केवल वेदों की अभ्रान्तता पर ही कुछ विरोध था। वह विरोध किसी आपत्ति का कारण नहीं होता, क्योंकि वेद अभ्रान्त रूप से परिगृहीत न होने पर भी पृथिवी में एक अद्वितीय धर्म्म-शास्त्र हैं। इस विषय में प्रार्थना समाज के सदस्य भी सम्भवत: भिन्नमत नहीं थे। सुतरां उससे वैदिक भाव की ही श्रेष्ठता प्रतिष्ठित रहती। अस्तु। उपस्थित प्रस्ताव जैसा सङ्गत था, वैसा ही प्रकृत संस्कारक के उपयुक्त भी था। क्योंकि जो लोग संसार में संस्कारक नाम से प्रख्यात होते हैं, जो लोग मानवजाति के धर्म्म-शास्त्र, रीति-नीति का परिशोधन और परिमार्जन करके संस्कारक के समुन्नत आसन पर अधिरूढ होते हैं, वे कभी ध्वंसनीति के पक्षपाती नहीं हो सकते। वे वस्तु विशेष को विध्वस्त करके उसके स्थान में नई वस्तु का समावेश करना नहीं चाहते, पुरातन को तोड़ कर उसके बदले किसी नये सङ्गठन करने की अभिलाषा नहीं करते। वे पुरातन को ही नूतन करके उठाना चाहते हैं, अथवा जो मलिन वा अपरिस्फुट अवस्था में गिर पड़ता है, उसे ही परिष्कृत और परिस्फुट करने के लिये सचेष्ट रहते हैं। इसी हेतु दयानन्द प्रार्थना समाज को ही आर्यसमाज में परिणत करने की चेष्टा करने लगे। किन्तु उनकी वह चेष्टा सफल नहीं हुई। पूर्वोल्लिखित दोनों पुरुषों में से एक भी स्वामी जी के प्रस्ताव से सहमत नहीं हुआ। यहां तक कि भोलानाथ साराभाई उपस्थित विषय की मीमांसा के लिये सारी रात चिन्तित रह कर भी कुछ नहीं कर सके‡। इसलिये स्वामी जी को अहमदाबाद से लौटना पड़ा।

---

*About the end of the year 1874, the great reformer, Dayanand Saraswati, the founder of the Arya Samaj, visited Ahmedabad on his grand missionary tour. The Prarthana Samaj eagerly offered its pulpit to this great man who delivered several discourses on religious and social topics......During his stay at Ahmedabad Dayanand proposed to Bholanath, and Rao Sahib Mahiput-Ram Rupram at a private audience that the name of the Prarthana Samaj be changed to that of Arya Samaj......Bholanath promised to consider the question before he gave his assent. He passed the whole of that night in

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बम्बई का आन्दोलन कुछ निर्जीव सा हो गया था, दयानन्द ने अहमदाबाद से लौट कर उसे फिर सञ्जीवित कर दिया। बम्बई वल्लभाचारियों का एक प्रधान स्थान है, क्योंकि बम्बई प्रदेश के अधिकांश लाग वल्लभाचारी सम्प्रदाय के अन्तर्निविष्ट हैं। इसलिये पहले वल्लभाचारियों के साथ ही दयानन्द के संग्राम होने की सूचना हुई। किन्तु सूचना के अतिरिक्त और कुछ नहीं हुआ। क्योंकि पण्डित गुट्टूलाल स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ करने पर उद्यत होने पर भी उपस्थित नहीं हो सके। गुट्टूलाल के आने पर भी दयानन्द ने महाराजमत का तीव्र प्रतिवाद किया। जो लोग जिज्ञासु होकर दयानन्द के पास आते जाते थे क्रमशः उनके भीतर दो दल हो गये। एक दल ने दयानन्द के प्रचारित धर्म्म को ही प्रकृत आर्य-धर्म्म कह कर विश्वास कर लिया और दूसरा दल उसे आर्य-धर्म्म न बतला कर विश्वास करने लगा। प्रथमोक्त दल के भीतर सेवकलाल कृष्णदास, मथुरादास लवजी और गिरधारीलाल-दयालदास कोठारी प्रभृति छः मनुष्य प्रधान थे। अस्तु वेद में यथार्थ में मूर्तिपूजा की कोई व्यवस्था है वा नहीं-इसी को लेकर इन दोनों श्रेणियों के बीच में एक घोर वितर्क उपस्थित हुआ। उत्थापित विषय में जितनी वार स्वामीजी

---

anxiously revolving this point and finally decided to decline Dayanand's proposal. Life of Rao Bahadur Bholanath Sarabhai, quoted in the Pandit Dayanand unveiled P. 4.

इस उद्धृतांश का हिन्दी मर्म यह है—"सन् १८७४ ईस्वी के अन्त में आर्यसमाज के संस्थापक, प्रख्यातनामा संस्कारक, दयानन्द सरस्वती प्रचार के निमित्त अहमदाबाद में पधारे। प्रार्थना समाज ने आग्रहपूर्वक अपनी वेदि को इन महापुरुषों के लिये छोड़ दी, जिन्होंने धार्मिक और सामाजिक विषयों पर कतिपय वक्तृतायें दी।.........जब दयानन्द अहमदाबाद में ठहरे हुए थे, तो उन्होंने एक दिन एकान्त में भोलानाथ और रावसाहिब महीपतराम से रूपराम से प्रस्ताव किया कि प्रार्थना समाज का नाम परिवर्तित करके आर्य-समाज रख दिया जाय।.........भोलानाथ ने अपनी अनुमति देने से पूर्व इस प्रश्न पर विचार करने का प्रण किया। उन्होंने वह सारी रात्रि इसी प्रश्न पर चिन्तापूर्वक विचार करने में विताई और अन्त में दयानन्द के प्रस्ताव को अस्वीकार करना ही निर्धारित किया। (अनुवादक)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

से जिज्ञासा की गई, उतनी ही बार उन्होंने स्पष्ट अक्षरों में कहा कि व्यवस्था की कथा तो दूर रही, वेद में मूर्तिपूजा का उल्लेख मात्र भी नहीं है। इससे लोगों का कौतूहल और भी बढ़ गया। तब पारितोषिक का संवाद प्रचारित हुआ। पूर्वोक्त सेवकलाल पांच सहस्त्र देने पर सहमत हुए, मथुरादास ने दश सहस्त्र रुपये देने की प्रतिज्ञा की। मूर्तिपूजा को वेदानुमोदित सिद्ध कर सकने पर सहस्त्रों रुपये मिलने की सम्भावना हो गई यह क्या साधारण सुयोग था? परन्तु खेद है कि बम्बई का कोई व्यक्ति भी प्रतिज्ञात पारितोषिक के लेने के लिये अग्रसर नहीं हुआ। वेद के किस स्थल में वा किस मन्त्र में मूर्तिपूजा की कथा है-यह कोई भी सिद्ध न कर सका। सुतरां ऐसी दशा में स्वामी जी की ही बात अखण्डनीय रही। इससे उनके पक्षावलम्बियों का आनन्द और उत्साह वर्द्धित हुआ, और दिन प्रतिदिन नये २ लोग आकर स्वामीजी के मतावलम्बी होने लगे। इस प्रकार थोड़े ही दिनों में स्वामीजी के पक्षावलम्बियों का एक दल बंध गया और कुछ दिन पीछे उन्हीं दलबद्ध लोगों ने भारतक्षेत्र में आर्यसमाज का बीज बोया।

जिससे बम्बई का उपस्थित आन्दोलन निर्वापित न हो जाय, इसलिये सेवकलाल कृष्णदास और अन्यान्य कई व्यक्ति सचेष्ट हुए। उन्होंने स्वामीजी के पास जाकर इस विषय में कुछ न कुछ करने का प्रस्ताव किया। उन्होंने निःसंशय रूप से बतलाया कि जब तक सनातन धर्म्म का आन्दोलन सुरक्षित नहीं होगा, वैदिक धर्म्म के विस्तार की व्यवस्था न की जायगी, तब तक भारत भूमिका वास्तविक कल्याण किसी प्रकार साधित नहीं हो सकेगा। फलकथा, स्वामीजी ने उनके प्रस्ताव को सर्वांश में सङ्गत मान कर ग्रहण कर लिया, और वह यह चिन्ता करने लगे कि किस उपाय से वर्तमान आन्दोलन का स्थायित्व सम्पादित किया जा सकता है। अन्त में पूर्वसङ्कल्पित सभा का स्थापन करना ही उपयोगी निश्चय हुआ। इस सभा द्वारा वर्तमान आन्दोलन सुरक्षित होगा, विशेषतः इसके द्वारा वदिकमत संगत भाव और सम्मिलित शक्ति से भारतवर्ष में प्रसारित हो सकेगा, यह बात स्वामीजी ने कृष्णदास प्रभृति को समझा दी। उन सबने भी स्वामीजी के साथ एकमत होकर प्रस्तावित सभा की आवश्यकता को स्वीकार किया। तदनुसार १ मार्च सन् १८७५ ईस्वी को दयानन्द की यह प्रस्तावित सभा स्थापित हुई। इस

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रकार चैत्र शुदि प्रतिपदा संवत् १९३१ को बम्बई नगर में आर्यसमाज‡ ने जन्मग्रहण किया।

इसके पश्चात् सभा के अङ्गादिका संगठन होने लगा। सभा के सभापति, मन्त्री और सभ्यादि निर्वाचित हुए, पूर्वोक्त गिरधारीलाल दयालदास समाज के सभापति हुए। और कृष्णादास ने मन्त्री का पद ग्रहण किया, और बम्बई के प्रायः आठ लाख निवासियों में से केवल २३ लोगों ने आकर उनकी सभ्य श्रेणी में प्रवेश किया। स्वामी दयानन्द सहस्रवार अनुरोध करने पर भी उसके सभापति नहीं हुए, और न अधिनायक पद ही ग्रहण किया। केवल आर्यसमाज के एक सभ्यमात्र होकर ही तृप्त रहे। सभा के लिये नियमावली आवश्यक है। बिना नियमावली के सभा नहीं चल सकती। इसलिये आर्य-समाज की नियमावली बनाने का उद्योग होने लगा। दयानन्द स्वयं ही उसे बनाने लगे और ६८ नियम बना कर उनके द्वारा आर्य समाज को नियमित किया। इसके अतिरिक्त कई उपनियम भी प्रस्तुत हुए। सभापति महाशय ने मन्त्री के योग से उपनियम प्रस्तुत किये। आर्यसमाज की नियमावली के विषय में यहां एक बात कहनी नितान्त आवश्यक है। जो लोग आर्यसमाज के साथ संसृष्ट रहे हैं, अथवा जिन्हें आर्यसमाज की आभ्यन्तरिक अवस्था का ज्ञान है, वे जानते हैं कि वह दश नियमों के द्वारा परिचालित है, यहां तक कि वे ही दश नियम आर्यसमाज के मूलनियम वा मूलमत परिणत होते हैं। स्यात् यहां कोई जिज्ञासा करेंगे कि यदि आर्यसमाज के आदि में ६८ नियम थे और आदि में अवलम्बित होने से ही यदि वे मूल नियमों में परिगणित होते थे, तो फिर दश नियम ही मूलनियम कह कर कैसे परिणत हो गये ? हमें ऐसा जान पड़ता है कि पीछे आकर इस विषय में स्वामीजी की सम्मति

---

‡ कोई २ कहते हैं कि स्वामीजी ने ब्राह्मसमाज और प्रार्थना समाज का अनुकरण करके ही प्रस्तावित सभा का नाम आर्यसमाज रक्खा था। हम नहीं कह सकते कि यह कथा कहां तक सत्य है।

(जनसाधारण का यह विश्वास है कि बम्बई आर्यसमाज ही सबसे पहिला आर्य समाज है जो स्वामीजी ने स्थापित किया था, परन्तु ग्रन्थकार ने अपनी 'आदर्श संस्कारक दयानन्द' नामक पुस्तिका में यह लिखा है कि सबसे पहिला आर्यसमाज राजकोट में स्थापित हुआ था।—अनुवादक।)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

परिवर्तित हो गई थी।‡ क्योंकि यदि ऐसा नहीं हो तो ६८ के स्थान में दश नियमों के प्रतिष्ठित वा प्रचलित होने का क्या कारण है ? फलतः आर्यसमाज के स्थापन के पश्चात् बम्बई का आन्दोलन अधिक प्रबल हो गया। जितने व्यक्ति आर्य समाज के स्थापन में उद्योगी हुए थे, जिन्होंने सहायता की थी, और जो सरस्वती महाशय की शक्ति से आकृष्ट होकर उनके प्रदर्शित मार्ग का अनुसरण करते थे, वे अपने कुटुम्बियों द्वारा नाना प्रकार से निगृहीत होने लगे। सेवकलाल प्रभृति को अपमान और आक्रमण का भय दिखलाया गया, इसलिये उन्हें बम्बई के राजमार्ग में शस्त्र लेकर चलना पड़ता था। उनके नाम से अनेक निन्दनीय कथा प्रचारित होने लगीं, और बम्बई के निवासी वर्ग इस प्रकार की बातें करने लगे कि आर्यसमाज का परिपोषक होकर उन्होंने एक अत्यन्त अनार्योचित कार्य किया है। परन्तु वे अणुमात्र भी विचलित न होकर पूर्ववत् उत्साह और अनुराग के साथ आर्यसमाज। रूपी नवाङ्कुरित तरु के सम्वर्द्धनकार्य में लगे रहे।

दयानन्द पुनर्वार बम्बई से अहमदाबाद गये। अहमदाबाद से राजकोट जाकर वेदोक्त धर्म्म की श्रेष्ठता का प्रतिपदान करने लगे। अनेक लोग कहते हैं कि उस समय स्वामी जी के हृदय में जन्म भूमि के देखने की इच्छा बलवती हो गई थी। और उनकी जन्मभूमि राजकोट से थोड़ी दूर थी, क्योंकि पहले ही कहा जा चुका हैं कि राजकोट से मोरवी केवल ३५ मील है। फलतः यह सुना जाता है कि वह इस यात्रा में राजकोट से जन्मभूमि की ओर गये थे। इस ओर कमल नयनाचारी के साथ शास्त्रार्थ का दिन सन्निकट देखकर बम्बई के बन्धुगण ने उन्हें तार द्वारा संवाद भेजा। इसलिये वह अहमदाबाद से शीघ्र ही लौट आये।

जून मास की बारहवीं तारीख को बम्बई नगर में एक विज्ञापन दिया गया। उसके अनुसार वहां के काउजी इन्स्टीट्यूट हाल में सैकड़ों लोग आने लगे। आये हुए लोगों में सब ही उत्सुक थे। क्योंकि दयानन्द के समान दिग्विजयी पण्डित के सामने कमलनयनाचारी उपस्थित होकर मूर्त्तिपूजा का

‡ उपस्थित विषय पर सेवकलाल कृष्णदास के साथ बातचीत होने पर उन्होंने कहा कि स्वामीजी पंजाब से लौट कर जब दूसरी बार बम्बई आये, तब उनके मुख से दश नियमों की कथा सुनी गई थी। इससे बोध होता है कि पंजाब जा कर नियमों के सम्बध में उनका मतपरिवर्तन हुआ था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समर्थन करेंगे—यह देखने के लिए किस को उत्कण्ठा न होगी ? कमलनयनाचारी रामानुजपन्थी थे, विशेषतः बम्बई निवासियों में वह पण्डित प्रसिद्ध थे। परन्तु दयानन्द के साथ शास्त्रार्थ के विषय में कमलनयनाचारी ने कई एक आपत्तियें उत्थापित कीं। उन्होंने कहा कि विचार मण्डप में वेदों के सम्पूर्ण ग्रन्थ एकत्र किये विना और कतिपय निष्पक्षपाती सुपण्डित व्यक्तियों को मीमांसक के पद पर अधिष्ठित किये बिना, वह किसी प्रकार भी स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ करने में प्रवृत्त न होंगे। अतएव कमलनयनाचारी के कथन के अनुसार ही काम होने लगा। सभा के प्रबन्ध कर्त्ताओं ने बहुत यत्न करके वेदों के प्रायः सब ही ग्रन्थ उपस्थित कर दिये; कतिपय पण्डित व्यक्ति भी मध्यस्थ-पद पर प्रतिष्ठित हो गये। किन्तु तौ भी कमलनयनाचारी विचार के लिए अग्रसर नहीं हुए। आये हुए लोग उत्सुक होने लगे, मूर्तिपूजा के पोषक अधीर हो गये। यहां तक कि उस विशाल सभा में सर्वत्र ही अस्थिरता का दृश्य दिखाई देने लगा। तब कमलनयनाचारी से असम्मति का कारण पूछा गया। उसके उत्तर में उन्होंने कहा कि जब तक भारतवर्ष की चारों दिशाओं के पण्डित वृन्द सभा में नहीं आयेंगे, तब तक हम किसी प्रकार शास्त्रार्थ में प्रवृत्त नहीं होंगे। उपस्थित सभा क्षेत्र में भारतवर्ष के उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम दिशाओं के पण्डितों का समावेश होना सर्वतोभावेन ही असम्भव था, और असम्भव समझ कर ही कमलनयनाचारी उसके प्रस्तावक हुए थे। कमलनयनाचारी जान गये थे कि दयानन्द सरस्वती के सामने होकर मूर्तिपूजा का समर्थन करना उनके लिये सर्वांश में ही असाध्य है। इसलिये प्रस्तावित शास्त्रार्थ से छुटकारा पाने के उद्देश्य से वह यदि ऐसे कौशल का अवलम्बन करते, तो क्या करते ? उनके मुख से पूर्वोक्त कौशलात्मक कथा सुनकर सभा के सब ही लोग विरक्त हो गये; कोई २ तो रोषाविष्ठ हो गये। सुतरां कमलनयनाचारी के लिए सभागृह असह्य हो गया। वह सभागृह को त्याग करके जाने लगे। उस समय आये हुए बालक गण और स्थिर न रह सके। यहां यह कहना आवश्यक है कि उस दिन शनिवार होने से बालकों को और दिन की अपेक्षा सवेरा छुट्टी मिल गई थी। छुट्टी पाते ही उनमें से अनेक उत्सुक हो कर विद्यालय से सभा में चले आये थे और शास्त्रार्थ का फल जानने के निमित्त वह व्यग्रचित्त होकर इधर-उधर घूम रहे थे। किन्तु जब उन्होंने देखा कि कमलनयनाचारी शास्त्रार्थ करने पर उद्यत न होकर प्रस्थान करने पर उद्यत

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हैं, विशेषत: जब उन्हें विदित हुआ कि उल्लिखित प्रकार चातुरी का अवलम्बन करके वह स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ करने में असम्मत हैं, तब उन्होंने उनके प्रति नाना प्रकार का व्यङ्ग क्रियाओं का आरम्भ किया। अधिक क्या, वे प्रस्थानोद्यत कमलनयनाचारी के पीछे २ हंसी उड़ाते हुए करतालि प्रदान करते-करते जाने लगे। अस्तु। स्वामी दयानन्द चुप रहने वाले मनुष्य नहीं थे। कमलनयनाचारी के चले जाने पर वह ज्वालामयी भाषा में मूर्तिपूजा का खण्डन करने में प्रवृत्त हुए। उन्होंने अखण्डनीय भाव और अग्निस्राविनी भाषा में मूर्ति पूजा की असारता सिद्ध की। सभा मण्डप में प्राय: पांच सहस्र मनुष्य एकत्रित थे। पूर्वोक्त सेवकलाल इस वक्तृता के विषय में कहते थे कि उन्होंने मूर्ति पूजा के प्रतिकूल वैसी अकाट्य और उत्तापमयी वक्तृता कभी नहीं सुनी। रावबहादुर बेचरदास अम्बरदास उस सभा के प्रधान हुए। अम्बरदास एक सम्भ्रान्त व्यवसायी और धनाढ्य व्यक्ति थे, और वह अहमदाबाद नगर के रहने वाले थे। आश्चर्य है कि अम्बरदास मूर्ति पूजा के परिपोषक होते हुए भी उक्त सभा के प्रधान होने में तनिक भी क्षुण्ण न हुए। क्या यह अम्बरदास के पक्ष में उदारता का परिचायक है?

दयानन्द ने बम्बई से १ जुलाई सन् १८७५ ईस्वी को पूना के लिये प्रस्थान किया। वह वहाँ श्रीमान् महादेव गोविन्द रानाडे और कुन्ते के विशेष निमन्त्रण पर गये थे। उस समय रानाडे महोदय पूना के स्मालकाज़कोर्ट के जज थे। पूना के रेलवे स्टेशन पर नगर के सम्भ्रान्त और प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने उनका स्वागत किया। पूना में जुलाई मास की ८ वीं तारीख से स्वामी जी ने वक्तृता आरम्भ की। वहां की बुधवार पीठ के हाल में उनकी वक्तृता होने लगीं वक्तृतास्रोत अगस्त मास की १५ वीं तारीख तक चला। वहां प्रायः चालीस दिन तक उनकी वक्तृताओं से पूनानिवासियों ने आर्य धर्म्म और आर्यशास्त्र विषय में अनेक नई २ बातें सीखीं। अन्तिम दिवस अर्थात् अगस्त मास की पन्द्रहवीं तारीख को बहुत से लोगों के अनुरोध करने पर दयानन्द ने अपने जीवन के इतिहास सम्बन्ध में कुछ बातें कहीं। पूना के अनेक शिक्षित और सम्भ्रान्त व्यक्ति उनके साथ परिचित होने से प्रसन्न हुए। यह कहना अनावश्यक है कि रानाडे के साथ बातचीत करने से रानाडे की स्वामी जी के साथ मित्रता हो गई और स्वामी जी के देहान्त पर्यन्त वह अक्षुण्ण अवस्था में रही।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पूना के रेजीमेण्ट बाजार में दयानन्द की अन्तिम वक्तृता हुई। देशीय सैनिक लोग साग्रह होकर उनके उपदेश सुनने लगे। फलतः दयानन्द से पूना के प्रायः सब ही लोग प्रोत्साहित हो गये। केवल कुछ स्वार्थान्ध ब्राह्मण स्वामी जी के प्रतिकूल आचरण करने से न रुक सके। व्याख्या के पश्चात् एक सुसज्जित जलूस रेजिमेण्ट बाजार से पूना शहर की ओर चला जिसमें हस्ती-अश्व, बाजा-गाजा आदि थे स्वार्थान्ध ब्राह्मणों ने यहां तक विरोध किया कि उस जलूस से मिलने के लिए उन्होंने एक दूसरा जलूस निकाला, जिसमें एक गधे को सजाकर उस पर गधानन्द लिख रखा था। ये दोनों जलूस जब एक दूसरे से मिले, तो उनमें दंगा हुआ। अन्त में दोनों दलों को पुलिस ने पकड़ कर विचारालय में भेज दिया। उपस्थित घटना से पूना नगर आन्दोलित होने लगा। दयानन्द इन सब अप्रत्याशित घटनाओं से अतिशय दुःखित हुए और दो मास से कुछ अधिक रह कर पुना से बम्बई लौट आये। जिस दिन बम्बई में आये, उस दिन वहां के स्टेशन पर समारोह की सीमा नहीं रही शिक्षित लोगों की तो कथा ही क्या है, नगर के सामान्य व्यवसायिगण तक अपनी २ हाटें बन्द करके दयानन्द को लेने के लिए स्टेशन पर जाने लगे। इससे बोध होता है कि स्वामी जी की चारित्र्यशक्ति ने बम्बई के व्यवसायियों के हृदय तक पर अधिकार जमा लिया था।

कुछ ही दिन रह कर स्वामी जी बम्बई से इन्दौर चले गये। इन्दौर में बालकृष्ण शास्त्री नामक एक व्यक्ति के पाण्डित्य की ख्याति थी, यहां तक कि उसके कारण स्थानीय राजसभा तक से बालकृष्ण सम्मानित होते थे। दयानन्द के आने से बालकृष्ण का पाण्डित्याभिमान कुछ प्रतप्त हो गया। इसलिये वह दयानन्द के साथ शास्त्रार्थ की अभिलाषा किये बिना न रह सके। दयानन्द भी इस विषय में अप्रस्तुत नहीं थे। इस कारण इन्दौर में शीघ्र ही एक सभा बुलाई गई। इन्दौराधीश उस सभा के सभापति हुए। दयानन्द ने उस सभा में उपस्थित होकर सिद्ध किया कि वेदोक्त धर्म्म ही वास्तविक आर्य धर्म्म है। बालकृष्ण ने उसके विरुद्ध जो कुछ कहा वह दयानन्द के तीक्ष्ण तर्कास्त्र के आघात से विखण्डित हो गया। इसलिए इन्दौराधीश स्वामी जी से अत्यन्त प्रसन्न हुए, और स्वामी जी के असाधारण पाण्डित्य की कुछ पूजा करने की अभिलाषा से शालादि बहुमूल्य सामग्री लाकर उनके सामने रख दी। परन्तु उसका ग्रहण करना तो दूर रहा, बारम्बार अनुरोध करने पर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भी दयानन्द ने उसमें से किसी को स्पर्श तक नहीं किया। इसके पश्चात् वह इन्दौर से बड़ौदा गये। बड़ौदा में भी पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ हुआ। बड़ौदा से वह फिर बम्बई चले आये। वह बम्बई को सहसा नहीं छोड़ सकते थे, क्योंकि उस समय बम्बई नगर उनके कार्यक्षेत्र का केन्द्रस्थल हो गया था। फलतः वह इस प्रकार बम्बई और बम्बई के अन्तर्गत पूना, अहमदाबाद, सितारा, सूरत और राजकोट प्रभृति स्थानों में वैदिक धर्म्म के प्रचार और प्रतिष्ठा रूपी पवित्र कार्य में दो वर्ष से कुछ न्यून अतिवाहित करके संवत् १९३३ के वैशाख वा ज्येष्ठ मास में अथवा सन् १८७६ ईस्वी के मई मास के मध्य में काशी में आकर उपस्थित हुए। इस समय दयानन्द के हृदय में एक अभिनव सङ्कल्प उद्भावित हो रहा था। वह उस सङ्कल्प को शीघ्र ही कार्य में परिणत करने के अभिप्राय से काशी आये थे। वह अभिनव सङ्कल्प वेद-भाष्य के प्रणयन और प्रचार के भिन्न और कुछ नहीं था।

———

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद प्रकाश माला

आस्तिक-नास्तिक संवाद

[महर्षि दयानन्द सरस्वती]

गोविन्दराम हासानन्द
नई सड़क, देहली

४

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

❀ ओ३म् ❀

आस्तिक--नास्तिक सम्वाद

[महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती]

—❀❀❀—

नास्तिक—ईश्वर की इच्छा से कुछ नहीं होता जो कुछ होता है, वह कर्म से।

आस्तिक—जो सब कर्म से होता है तो कर्म किससे होता है? जो कहो कि जीव आदि से होता है तो जिन श्रोत्रादि साधनों से जीव कर्म करता है, वे किन से हुए? जो कहो कि अनादि काल और स्वभाव से होते हैं, तो अनादि का छूटना असम्भव होकर तुम्हारे मत में मुक्ति का अभाव होगा। जो कहो कि प्रागभागवत् अनादि सान्त हैं, तो बिना यत्न के सब के कर्म निवृत्त हो जायेंगे। यदि ईश्वर फल-प्रदाता न हो तो पाप के फल दुःख को जीव अपनी इच्छा से कभी नहीं भोगेगा जैसे चोर आदि चोरी का फल दण्ड अपनी इच्छा से नहीं भोगते किन्तु राज्य व्यवस्था से भोगते हैं वैसे ही परमेश्वर के भुगाने से जीव पाप और पुण्य के फलों को भोगते हैं अन्यथा कर्मसकर हो जायेंगे अन्य के कर्म अन्य को भोगने पड़ेंगे।

नास्तिक—ईश्वर अक्रीय है क्योंकि जो कर्म करता होता, तो कर्म का फल भी भोगना पड़ता। इसलिये जैसे हम केवली प्राप्त मुक्तों को अक्रीय मानते हैं, वैसे तुम भी मानो।

आस्तिक—ईश्वर अक्रीय नहीं किन्तु सक्रीय है जब चेतन है, तो कर्त्ता क्यों नहीं? और जो कर्ता है, तो वह क्रिया से पृथक् कभी नहीं हो सकता। जैसा तुम कृत्रिम बनावट के ईश्वर तीर्थंकर को जीव

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

१२२१

से बने हुए मानते हो इस प्रकार के ईश्वर को कोई भी विद्वान् नहीं मान सकता। क्योंकि जो निमित्त से ईश्वर बने तो अनित्य और पराधीन हो जाय क्योंकि ईश्वर बनने के प्रथम जीव था पश्चात् किसी निमित्त से ईश्वर बना। तो फिर भी जीव हो जायेगा। अपने जीवत्व स्वभाव को कभी नहीं छोड़ सकता क्योंकि अनन्तकाल से जीव है और अनन्तकाल तक रहेगा। इस लिये इस अनादि स्वतः सिद्ध ईश्वर को मानना योग्य है। देखो ! जैसे वर्तमान समय में जीव पाप पुण्य करता, सुख दुःख भोगता हैं वैसे ईश्वर कभी नहीं होता। जो ईश्वर क्रियावान न होता तो इस जगत् को कैसे बना सकता ? जो कर्मों को प्रागभाववत अनादि सान्त मानते हो तो कर्म समवाय सम्बन्ध से नहीं रहेगा। जो समवाय सम्बन्ध से नहीं वह संयोगज होके अनित्य होता है, जो मुक्ति में क्रिया ही न मानते हो, तो वे मुक्त जीव ज्ञान वाले होते हैं वा नहीं ? जो कहो होते हैं तो अन्त क्रिया वाले हुए, क्या मुक्ति में पाषाणवत जड़ हो जाते, एक ठिकाने पड़े रहते और कुछ भी चेष्टा नहीं करते, तो मुक्ति क्या हुई ? किन्तु अन्धकार और बन्धन में पड़ गये।

नास्तिक—ईश्वर व्यापक नहीं है जो व्यापक होता तो सब वस्तु चेतन क्यों नहीं होती ? और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्व, शूद्र आदि की उत्तम, मध्यम, निकृष्ट, अवस्था क्यों हुई। क्योंकि सब में ईश्वर एकसा व्याप्त है तो छोटाई बड़ाई न होनी चाहिये।

आस्तिक—व्याप्य और व्यापक एक नहीं होते; किन्तु व्याप्य एक देशी और व्यापक सर्वदेशी होता है जैसे आकाश सब में व्यापक है और भूगोल और घटपटादि सब व्याप्य एक देशी हैं, जैसे पृथ्वी आकाश एक नहीं वैसे ईश्वर और जगत् एक नहीं जैसे सब घटपटादि में आकाश व्यापक है और घटपटादि आकाश नहीं, वैसे परमेश्वर चेतन सब में है और सब चेतन नहीं होता, जैसे विद्वान् अविद्वान् और धर्मात्मा अधर्मात्मा बराबर नहीं होते। विद्यादि सद्गुण और सत्यभाषणादि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर्म सुशीलतादि स्वभाव के न्यूनाधिक होने से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज बड़े छोटे माने जाते हैं वर्णों की व्याख्या जैसी "चतुर्थसमुल्लास" में लिख आये हैं वहां देख लो।

नास्तिक—जो ईश्वर की रचना से सृष्टि होती तो माता पितादि का क्या काम ?

आस्तिक—ऐश्वरी सृष्टि का ईश्वर कर्ता है, जैसी सृष्टि का नहीं, जो जीवों के कर्त्तव्य कर्म हैं उनको ईश्वर नहीं करता; किन्तु जीव ही करता है। जैसे वृक्ष, फल, औषधि, अन्नादि ईश्वर ने उत्पन्न किया है उसको लेकर मनुष्य न पीसे, न कूटें, न रोटी आदि पदार्थ बनावें और न खावें तो क्या ईश्वर उसके बदले इन कामों को कभी करेगा ? और जो न करे जो जीव का जीवन भी न हो सके। इसलिए आदि सृष्टि में जीव के शरीरों और सांचे को बनाना ईश्वराधीन पश्चात्, उनसे पुत्रादि की उत्पत्ति करना जीव का कर्त्तव्य काम है।

नास्तिक—जब परमात्मा शाश्वत, अनादि, चिदानन्द, ज्ञान स्वरूप है, तो जगत् के प्रपञ्च और दुःख में क्यों पड़ा ? आनन्द छोड़ दुःख का ग्रहण ऐसा काम कोई साधारण मनुष्य भी नहीं करता। ईश्वर ने क्यों किया।

आस्तिक—परमात्मा किसी प्रपंच और दुःख में नहीं गिरता न अपने आनन्द को छोड़ता है, क्योंकि प्रपंच और दुःख में गिरना जो एकदेशी हो उसका हो सकता है सर्वदेशी का नहीं। जो अनादि, चिदानन्द, ज्ञानस्वरूप परमात्मा जगत् को न बनावे तो अन्य कौन बना सके ? जगत् बनाने का जीव में सामर्थ्य नहीं, और जड़ में स्वयं बनने का भी सामर्थ्य नहीं, इससे यह सिद्ध हुआ कि परमात्मा ही जगत् को बनाता और सदा आनन्द में रहता है, जैसे परमात्मा परमाणुओं से सृष्टि करता है, वैसे माता-पिता रूप निमित्तकारण से भी उत्पत्ति का प्रबन्ध नियम उसी ने किया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नास्तिक—ईश्वर मुक्तिरूप सुख को छोड़ जगत् को सृष्टिकरण, धारण और प्रलय करने के बखेड़े में क्यों पड़ा ?

आस्तिक—ईश्वर सदा मुक्त होने से, तुम्हारे साधनों से सिद्ध हुए तीर्थंकरों के समान एक देश में रहने हारे बन्धपूर्वक मुक्ति से युक्त, सनातन परमात्मा नहीं है, जो अनन्त स्वरूप गुण कर्म स्वभाव युक्त परमात्मा हैं, वह इस किंचिन्मात्र जगत् को बनाता, धरता और प्रलय करता हुआ भी बन्ध में नहीं पड़ता। क्योंकि बन्ध और मोक्ष सापेक्षता से हैं, मुक्ति की अपेक्षा से बंध और बंध की अपेक्षा से मुक्ति होती है। जो कभी बद्ध नहीं था, वह मुक्त क्यों कर कहा जा सकता है ? और जो एक देशी जीव हैं, वे ही बद्ध और मुक्त सदा हुआ करते हैं, अनन्त, सर्वदेशी, सर्व व्यापक, ईश्वर बन्धन वा नैमित्तिक मुक्ति के चक्र में, जैसे कि तुम्हारे तीर्थंकर हैं, कभी नहीं पड़ता इसलिये वह परमात्मा सदैव मुक्त कहाता हैं।

नास्तिक—जीव कर्मों के फल ऐसे ही भोग सकते हैं जैसे भांग पीने के मद को स्वयंमेव भोगता है, इसमें ईश्वर का काम नहीं।

आस्तिक—जैसे बिना राजा के डाकू, लम्पट चोरादि दुष्ट मनुष्य स्वयं फांसी वा कारागृह में नहीं जाते, न वे जाना चाहते हैं; किन्तु राज्य की न्याय व्यवस्थानुसार बलात्कार से पकड़ कर यथोचित राजा दण्ड देता है, इसी प्रकार जीव को भी ईश्वर अपनी न्याय व्यवस्था से स्व-स्वकर्मानुसार यथायोग्य दण्ड देता है क्योंकि कोई भी जीव अपने दुष्ट कर्मों के फल भोगना नहीं चाहता, इसलिये अवश्य परमात्मा न्यायाधीश होना चाहिये।

नास्तिक—जगत में एक ईश्वर नहीं, किन्तु जितने मुक्त जीव हैं, वे सब ईश्वर हैं।

आस्तिक—यह कथन सर्वथा व्यर्थ है, क्योंकि जो प्रथम बद्ध होकर मुक्त हो, तो पुनः बन्ध में अवश्य पड़े, क्योंकि वे स्वाभाविक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सदैव मुक्त नहीं, जैसे तुम्हारे चौबीस तीर्थंकर पहिले बद्ध थे, पुनः मुक्त हुए, फिर भी बन्ध में अवश्य गिरेंगे और जब बहुत से ईश्वर हैं तो जैसे जीव अनेक होने से लड़ते, भिड़ते फिरते हैं, वैसे ईश्वर भी लड़ा भिड़ा करेंगे।

नास्तिक—हे मूढ़! जगत् का कर्ता कोई नहीं, किन्तु जगत् स्वयंसिद्ध है।

आस्तिक—यह जैनियों की कितनी बड़ी भूल हैं भला बिना कर्त्ता के कोई कर्म, कर्म के बिना कोई कार्य जगत् में होता दीखता है! यह ऐसी बात है कि जैसे गेहूँ के खेत में स्वयंसिद्ध किसान, रोटी बन बन के जैनियों के पेट में चली जाती हो! कपास, सूत, कपड़ा, अंग-रखा, दुपट्टा, धोती, पगड़ी आदि बन के कभी नहीं आते। जब ऐसा नहीं तो ईश्वर कर्त्ता के बिना यह विविध जगत् और नाना प्रकार की रचना विशेष कैसे बन सकती? जो हठ धर्म से स्वयंसिद्ध जगत् को मानो तो स्वयंसिद्ध उपरोक्त वस्त्रादिकों को कर्त्ता के बिना प्रत्यक्ष कर दिखलाओ, जब ऐसा सिद्ध नहीं कर सकते, उन्हें प्रमाणशून्य कथन को कौन बुद्धिमान मान सकता है।

नास्तिक—ईश्वर विरक्त है, वा मोहित? जो विरक्त है तो जगत् के प्रपंच में क्यों पड़ा? जो मोहित है, तो जगत् के बनाने को समर्थ नहीं हो सकेगा।

आस्तिक—परमेश्वर में वैराग्य वा मोह कभी नहीं घट सकता, क्योंकि जो सर्वव्यापक वह किसको छोड़े और किस को ग्रहण करे ईश्वर से उत्तम वा उसको अप्राप्त कोई पदार्थ नहीं है। इसीलिये किसी में मोह भी नहीं होता। वैराग्य और मोह में घटता है ईश्वर में नहीं।

नास्तिक—जो ईश्वर को जगत् का कर्त्ता और जीवों के कर्मों के फलों का दाता मानोगे, तो ईश्वर प्रपंची होकर दुखी हो जायेगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आस्तिक—भला अनेकविध कर्मों का कर्त्ता और प्राणियों को फलों का दाता धार्मिक न्यायाधीश विद्वान् कर्मों में नहीं फंसता, न प्रपंची होता है, तो परमेश्वर अनन्त सामर्थ्य वाला प्रपंची और दुःखी क्यों कर होगा ? हां तुम अपने और अपने तीर्थंकरों के समान परमेश्वर को भी अपने अज्ञान से समझते हो, सो तुम्हारी अविद्या की लीला है, जो अविद्यादि दोषों से छूटना चाहो, तो वेदादि सत्य शास्त्रों का आश्रय लेओ क्यों भ्रम में पड़े-पड़े ठोकरें खाते हो।

अब जैन लोग जगत् को जैसा मानते हैं वैसा इनके सूत्रों के अनुसार दिखलाते और संक्षेपतः मूलार्थ के लिये पश्चात् सत्य झूठ की समीक्षा कर के दिखलाते हैं:—

मूल—सामिअणाइ अणन्ते च नुगइ संसार घोरकान्तरे। मोहाइ कम्मगुरु ठिइ विवाग बसनु ममइजीव से॥ प्रकरण रत्नाकर॥ भाग दूसरा २ षष्ठी शतक ६०, सूत्र २।

यह रत्नसार भाग नायक ग्रन्थ के सम्यकत्व प्रकाश प्रकरण में गौतम और महावीर का सम्वाद है।

इसका संक्षेप से उपयोगी यह अर्थ है कि यह संसार अनादि अनन्त है, न कभी इसकी उत्पत्ति हुई, न कभी विनाश होता है अर्थात् किसी का बनाया जगत नहीं, सो ही आस्तिक नास्तिक के संवाद में, हे मूढ़ ! जगत का कर्ता कोई नहीं, न कभी बना और न कभी नाश होता है।

समीक्षक—जो संयोग से उत्पन्न होता है, वह अनादि और अनन्त कभी नहीं हो सकता। और उत्पत्ति तथा विनाश हुए बिना कर्म नहीं रहता। जगत् में जितने पदार्थ उत्पन्न होते हैं वे सब संयोजक उत्पत्ति विनाश वाले देखे जाते हैं। पुनः जगत् उत्पन्न और विनाश वाला क्यों नहीं। इसलिये तुम्हारे तीर्थंकरों को सम्यक् बोध

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

न था । जो उनको सम्यक ज्ञान होता, तो ऐसी असम्भव बातें क्यों लिखते ? जैसा तुम्हारे गुरु हैं, वैसे तुम शिष्य भी हो, तुम्हारी बातें सुनने वाले को पदार्थ ज्ञान कभी नहीं हो सकता । भला जो प्रत्यक्ष संयुक्त पदार्थ दीखता है उसकी उत्पत्ति और विनाश क्योंकर नहीं मानते अर्थात् इनके आचार्य व जैनियों का भूगोल खगोल विद्या भी नहीं आती थी और न अब वह विद्या इनमें है । नहीं तो निम्नलिखित ऐसी असम्भव बातें क्योंकर मानते और कहते ? देखो ! इस सृष्टि में पृथिवी का अर्थात् पृथिवी भी जीव का शरीर है और जलकायादि जीव भी मानते हैं, इसको भी नहीं मान सकता ।

—❀—

श्रीमद्दयानन्द प्रकाश

लेखकः—श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

महर्षि दयानन्द का सुप्रसिद्ध जीवन चरित्र

❀ इतने मोटे अक्षरों में ❀

बड़े साइज के ६०० पृष्ठ । मजबूत जिल्द । बढ़िया एण्टिक कागज फिर भी मूल्य केवल १२) ।

गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८ नई सड़क, देहली ।

बदलियां प्रिंटिंग प्रेस, देहली ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आठवां अध्याय

वेदचर्चा विषय में अनास्था, वेदों के भिन्न-भिन्न भाष्य-कर्त्ता, योरुपीय पण्डितों की वेदव्याख्या, स्वामी जी की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, भाष्यरचना, दिल्लीदर्बार में आगमन, भारत में एकता स्थापन करने का प्रस्ताव, उपाय निर्धारण, मेरठगमन चांदपुर के मेले में मौलवी और पादरियों के साथ महाशास्त्रार्थ, पंजाब में प्रवेश और लाहौर की यात्रा।

स्वामी जी ने वेद भाष्य के प्रणयन का क्यों संकल्प किया ? वेदों के नाना प्रकार के भाष्य तो इस देश में विद्यमान थे ही; रावण, उव्वट, और सायणादि ‡ सुधीजन ने समय-समय पर भारत क्षेत्र में अभ्युदित होकर वेद

‡ उव्वट और रावण नामक दो पण्डित वेदों के अपेक्षाकृत प्राचीन व्याख्याता हैं। इनमें रावण ही सर्वोपरि प्राचीन है। इनका भाष्य भी इस समय दुष्प्राप्य है। अभी थोड़े ही दिन हुये, काशी के एक पण्डित ने उव्वटकृत भाष्य के साथ समस्त यजुर्वेद को प्रकाशित किया है। दूसरे भाष्यकार महीधर हैं। उन्होंने केवल यजुर्वेद का भाष्य किया है। महीधर सायण के पूर्ववर्ती हैं। सायणाचार्य अपेक्षाकृत आधुनिक भाष्यकार हैं। सायण माधवाचार्य नामक प्रसिद्ध पण्डित के भ्राता और विजय नगराधिपति बुक्क राजा के मन्त्री थे। कोई-कोई कहते हैं सायणाचार्य ने बुक्क के पिता संगम राजा के भी मन्त्री का कार्य किया था। यह विदित है कि बुक्क राजा ईसा की चौदहवीं शताब्दि के अन्तिम भाग में विद्यमान थे। ऐसा होने से सायणाचार्य को भी उसी समय के मनुष्यों में रखना होगा। किसी-किसी ग्रन्थ में लिखा है कि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के ज्ञान के निमित्त एक-एक भाष्य प्रचारित किया था। तब फिर स्वतन्त्र भाष्य प्रचारित करने का क्या कारण था? विशेषत: दयानन्द तो किसी अभिनव ग्रन्थ के प्रचार के पक्षपाती भी नहीं थे, यहां तक कि उनके गुरु विरजानन्द स्वामी भी नवीन ग्रन्थों के घोर विरोधी थे। वह कहा करते थे कि पृथ्वी पर आर्षग्रन्थों के रहते हुये अनार्ष ग्रन्थों की कोई आवश्यकता नहीं है; प्रत्युत अनार्ष ग्रन्थावली के विलुप्त होने में ही भारतवर्ष का मंगल है। इसीलिये शिष्य वर्ग के प्रति विरजानन्द का कठोर आदेश था कि उनमें से कोई कभी अपनी विद्वत्ता वा पाण्डित्य की प्रतिष्ठा के अभिप्राय से कोई ग्रन्थ प्रचारित न करे। गुरुदेव के इस ज्ञान गम्भीर आदेश को दयानन्द भी अब तक शिरोधार्य्य करते हुए चले आये थे ‡। तब फिर वेदभाष्य रूपी अभिनव ग्रन्थ के प्रचार का उन्होंने क्यों व्रत किया?

व्रत करने का विशेष कारण था। क्योंकि भारत क्षेत्र में वेदों का अध्ययन बहुत शताब्दियों से लुप्तप्राय था, बहुत दिनों से हिन्दुओं के जीवन में वेद प्रियता और वेदानुगामिता का परिस्फुट भाव दृष्ट नहीं होता था। साधारणत इस समय हिन्दु वैदिक शासन के अनुवर्ती होकर चलना नहीं चाहते थे। विशेषत: ब्राह्मणगण भी इस समय अतिशय वेदवितृष्ण हो गये थे। वेदानुशीलन और वेदाध्ययन तो दूर रहा, संकड़ों ब्राह्मण पुत्र चारों वेदों के नाम बतलाने

सायण ने साधना बल से भुवनेश्वरी नाम्नी देवी विशेष को प्रसन्न करके वर प्राप्त किया था और उसी वर के प्रभाव से प्रबुद्ध बुद्धि होकर चारों वेदों के भाष्य रचना रूपी दुरूह व्रत में कृतकार्य्य हुये थे।

‡ वेदभाष्य के प्रचार से पहले दयानन्द ने किसी ग्रन्थ का प्रचार नहीं किया था—ऐसा नहीं है। उससे पहले उन्होंने बम्बई नगर में आर्याभिविनय नामक एक छोटी पुस्तक प्रकाशित की थी। यह पुस्तक कई वैदिक स्तोत्रों के संग्रह वा समावेश के भिन्न और कुछ नहीं है। कोई-कोई कहते हैं कि स्वामी जी राजा जयकृष्णदास के अनुरोध से परतन्त्र होकर पुस्तक रचना के कार्य्य में प्रवृत्त हुये थे। राजा जयकृष्ण दास ने स्वामी जी को अनेक प्रकार से जतलाकर कहा था कि आप जिन महामूल्य बातों का प्रचार करते हैं वे यदि लिपिबद्ध होकर पुस्ताकाकार में प्रकाशित न होंगी, तो संसार की विशेष क्षति होगी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में भी इस समय असमर्थ थे। ब्राह्मणों की ऐसी शोचनीय वेदच्युति एक दिन में नहीं हो गई थी। फलतः वे लोग बहुत दिनों से वेदविहीन हो गये थे; वे लोग बहुत दिन से ही वृत्तिच्युत और विपन्न हो गये थे। ब्राह्मणों की वृत्तिच्युति और विपत्ति कुछ तो अपने ही दोष से हुई थी और कुछ बान्धवविहीनता के कारण हुई थी। क्योंकि क्षत्रिय लोग ही ब्राह्मणों के यथार्थ बान्धव हैं। क्षत्रियगण केवल ब्राह्मणों के ही बन्धुगण नहीं हैं, प्रत्युत आर्यसमाज के भी रक्षक हैं। किन्तु कौरव-पाण्डव के संग्राम के पीछे से भारतवर्ष में क्षात्रशक्ति निर्वापितप्राय हो गई थी। इसलिये जैसे ब्राह्मणगण बान्धवहीन होने से अवसन्न हो गये थे, वैसे ही समाज भी रक्षकहीन होने से विपन्न हो गया था। तब वेद चर्चा और वेदालोचना कौन करे? इसके अतिरिक्त वेदों के लोप के और भी कई एक गुरुतर कारण थे। इससे इतिहासज्ञ पाठकमात्र ही अवगत हैं कि भारत-भूमि बहुत काल से कई एक प्रबल धर्म्म विप्लवों से विप्लवित थी उन संघटित विप्लवों में से कितने ही तो अवैदिक थे। और कितने ही वेदविरोधी थे। बौद्धधर्म्म का आविर्भाव और अधिकार एक प्रधान विप्लव रूप से परिगणित है उसमें अवैदिकता की अपेक्षा वेदविरोधिता ही अधिक है। इसलिये बौद्धविप्लव को वेदविरोधी विप्लव कहना ही अधिक सङ्गत है। जैनविप्लव भी वेदविरोधी विप्लवों के अन्तर्गत है। रामानुज, माधवाचार्य और वल्लभाचार्य प्रभृति महापुरुषों ने भारत के भिन्न-भिन्न स्थानों में समय-समय पर अभ्युदित होकर जिन विप्लवों को प्रवर्तित किया है हम उन सबको ही अवैदिक विप्लवों के भीतर निविष्ट करके उल्लेख करेंगे। इसके अतिरिक्त पंजाब के गुरु नानक, नवद्वीप के निमाई संन्यासी ने जिस विप्लव प्रवाह को भारत भूमि के कुछ अंशों में विलोडित किया था, हम उनका अवैदिक विप्लव नाम रखने में अणुमात्र भी संकुचित नहीं होंगे। वेदार्थविकृति का एक विशेष कारण था। निघण्टु और निरुक्त प्रभृति जितने ग्रन्थ वैदिक साहित्य के सत्यार्थ के निर्णायक कह कर प्रसिद्ध और परिगृहीत हैं, वेदचर्चा के विलोप के साथ-साथ उन सब ग्रन्थों का पठनपाठन भी लुप्त प्राय हो गया था। इस हेतु यह सहज में ही जाना जा सकता हैं कि उल्लिखित अवैदिक युग में जितने वेदव्याख्याता भारत क्षेत्र में आविर्भूत हुए, उनकी व्याख्या सर्वतोभावेन निरुक्तादि ग्रन्थों के अनुकूल नहीं है। केवल यही नहीं, प्रत्युत यह भी अनुमान होता है कि उनमें से किसी-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

किसी ने बौद्धादिसम्प्रदाय से परिचालित होकर वेदों के यथार्थ मर्म को प्रच्छन्न कर दिया है* ।

दयानन्द इस विषय में बहुत दिनों से चिन्ता करते आये थे । उन्होंने इसे किसी अंश तक दूर करने के उद्देश्य से एक उपाय का भी अवलम्बन किया था । वह उपाय वैदिक-पाठशाला स्थापन करने के भिन्न और कुछ न था । वेदादि शास्त्रों के विचार के निमित ही वैदिक पाठशालाओं का द्वार खोला गया था । परन्तु ज्ञान के निवारण के लिये वैदिक पाठशालायें ही पर्याप्त नहीं थीं, क्योंकि आर्य जीवन को वेदोज्ज्वल ज्ञान में परिचालित करने किंवा आर्यावर्त्त के आद्योपान्त में वेद महिमा को प्रतिष्ठित करने के लिये वेदों के वास्तविक अर्थों का प्रकाश करना नितान्त आवश्यक था । ऐसा किये विना पूर्वोल्लिखित वैदिक विभ्राट जैसे दूर नहीं हो सकता था, वैसे ही वेदोद्धार रूपी महाव्रत भी सर्वतोभावेन साधित नहीं हो सकता था । इसलिये दयानन्द इस महाव्रत की सिद्धि के अभिप्राय से वेदों के सत्य अर्थ के विस्तार में सङ्कल्प रूढ हुए । यद्यपि प्रचलित व्याख्यासमूह पर उन्हें बहुत दिनों से सन्देह हो गया था, यद्यपि विरजानन्द के शिक्षा-प्रभाव से उनका वह सन्देह बद्धमूल हो गया था, यहां तक कि रावण, सायण और महीधरादिरचित भाष्य समूह को विकृत वा भ्रान्तिसंकुल कहने में उनके अन्त:करण में एक उज्ज्वल प्रतीति उत्पन्न हो गई थी, तथापि वह अब तक वेदभाष्य के प्रचार में हस्तार्पण नहीं कर सके थे । कारण यह था कि दयानन्द सरस्वती किसी काम में सहसा प्रवृत्त होने वाले मनुष्य नहीं थे । उनके सारे ही कामों में धीरता और विचार-शीलता का परिचय पाया जाता है । शिवव्रत की उस वसन्तऋतु की निशा में देव-मूर्ति पर अश्रद्धा का उदय होने पर भी जैसे उन्होंने सहसा मूर्ति पूजा के प्रति-कूल अस्त्र धारण नहीं किया था, वैसे ही वेदों की आधुनिक व्याख्याओं पर अत्यन्त सन्देहक्रान्त हो जाने पर भी वह किसी नई व्याख्या के रचने में हठात् उद्यत नहीं हो सकते थे* । फलतः दयानन्द के चरित्र में चञ्चलता की अपेक्षा

*यजुर्वेद के दूसरे भाष्यकार महीधर ने बौद्धों से आदिष्ट वा परिचालित होकर ही वेदार्थ का विकृति साधन किया है—ऐसा सुना जाता है । कोई-कोई महीधर को वाममार्गावलम्वी कहते हैं ।

*वालुचर में थानसिंह नामक जैनी के साथ स्वामी जी का जो कथोपकथन हुआ था उसमें उन्होंने थानसिंह के सामने प्रचलित भाष्य-समूह पर अश्रद्धा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धीरता और आकस्मिकता की अपेक्षा कालोपेक्षिता की शक्ति प्रबला थी। इसी हेतु उन्होंने इतने दिन तक चिन्ता पर रहने पर भी इस समय इस महाव्रत की सूचना की।

दयानन्द ने काशी में वेदभाष्य रचने का सूत्रपात क्यों किया ? वह सबसे पहले काशी में ही वैदिकधर्म्म की जय घोषणा करने के महाविचार में क्यों प्रवृत्त हुए ? इस विषय में हम पहले ही कह आये हैं कि स्वामी जी आर्यभाव के साथ विरोध करके कोई कार्य नहीं करते थे। उनके प्रायः सब ही कार्य आर्य प्रकृति की अनुसूया से रहित हैं। आर्य्यों के निकट जो स्थान शास्त्र विचार के सम्बन्ध में अतिशय पवित्र है, जिस स्थान में हिन्दुओं के ज्ञानकाण्ड और कर्मकाण्ड सम्बन्धी नाना शास्त्र प्रचारित हैं, और जिस स्थान में व्यास देव के ब्रह्म सूत्रों पर स्वयं शङ्कर स्वामी ने वृत्ति और व्याख्या की, स्वामी दयानन्द ने उसी स्थान से वेदभाष्य का प्रचार करके अपने को सर्वतोभावेन हिन्दू-संस्कारक के उपयोगी किया है। अस्तु। दयानन्द ने काशी की पवित्र भूमि में वेद भाष्य प्रचार रूपी पवित्र व्रत धारण किया, परन्तु इस विषय में कोई निजत्व वा नूतनत्व रखने का कुछ प्रयास नहीं किया। प्रयास करने पर भी उनके समान अद्वितीय धीमान् व्यक्ति उसमें कभी विफल नहीं होते।

किन्तु ऐसा प्रयास न करने में ही दयानन्द का यथार्थ महत्त्व प्रकाशित होता है। जैसे ब्राह्मसमाज के संस्थापक राजा राममोहन राय अपने को किसी नये धर्म्म का आविष्कारकर्त्ता कहना बारम्बार अस्वीकार करते थे, वैसे ही आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने भी अपने को वेदों के अभिनव भाष्यकर्त्ता कहना बारम्बार अस्वीकार किया है। महात्मा राममोहन जैसे आर्य्य धर्म को पुनरुद्दीपित करने के निमित्त ही वङ्गभूमि में बद्धपरिकर हुए थे, महात्मा दयानन्द भी वैसे ही आर्य पथ का अनुवर्तन करके वेद भाष्य के प्रणयन में प्रवृत्त हुए। उपस्थित विषय में स्वामी जी ने एक स्थान में कहा है—"मैं प्राचीन आर्य रीति का अवलम्बन करके ही इस वेद भाष्य की रचना में प्रवृत्त हुआ हूँ। यह भाष्य ऐतरेय और शतपथादि के व्याख्या ग्रन्थों के

और उसके साथ ही आर्य रीति के अनुकूल भाष्य प्रचार की आकांक्षा प्रकाश की थी। हम यह बात पहले ही कह चुके हैं। यहाँ पाठकों के स्मरणार्थ ही उसका पुनः उल्लेख किया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अनुकूल होगा; इसमें कोई अप्रमाणिक बात नहीं होगी।"* फिर कहा है— "इस भाष्य में स्वकपोल-कल्पित कोई बात नहीं लिखी जायगी, किन्तु ब्रह्मा से व्यासदेव पर्यन्त महर्षिगण ने जिस भाव और जिस प्रणाली में वेदार्थ निर्धारित किया है, मैं इस भाष्य में केवल उसी भाव और उसी प्रणाली का अनुसरण करता हूँ।"‡ अस्तु। इसलिये यह जानना चाहिये कि स्वामी दयानन्द का वेद भाष्य किसी अंश में नवीन वा स्वकपोलकल्पित नहीं है।

दयानन्द भाष्य रचना में सङ्कल्पारूढ़ होकर जैसे महीधर आदि की व्याख्याओं की विशेष रूप से समालोचना करने लगे, वैसे ही विलसन और मैक्समूलर प्रभृति योरुपीय मनीषिवर्ग के वेद विषयक मत को जानने के लिये भी उत्सुक हुए। इस प्रकार की औत्सुक्य दयानन्द की दूरदर्शिता प्रतिपादन करता है। क्योंकि इस देश में इस समय अंग्रेजी-चिन्ता की गति जिस प्रकार बढ़ रही है, योरुपीय पण्डितों पर लोगों की जैसी सम्माननना है, और धर्म्म वा किसी शास्त्रसंसृष्ट विषय में योरुपीय लोगों के मतामत जानने के लिये नव्यसम्प्रदायस्थ व्यक्तियों की जैसी साधना है, उससे पूर्वोक्त विलसन प्रभृति योरुपीय वेदानुवादकों के वास्तविक मतामत से अवगत होना स्वामी जी के लिये भी अत्यन्त आवश्यक हो गया था। किन्तु जिस भाषा में पूर्वोक्त पण्डितों ने वेदादि ग्रन्थों का अनुवाद किया है स्वामी जी उस भाषा से सर्वथा अपरिचित थे।‡ इसलिये उन्होंने अंग्रेजी विद्या में सुशिक्षित एक बंगाली

---

*ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, भाष्यकरणशंकासमाधानादि विषयक पृष्ठ ३२२।

‡ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पृष्ठ २।

---

‡अंग्रेजी भाषा न जानने के कारण उसे सीखने की दयानन्द की प्रबल इच्छा थी। दयानन्द जब कलकत्ते में आकर कई एक मास रहे थे, तब उन्होंने हमारे सुपरिचित एक व्यक्ति से अंग्रेजी सीखने का अभिप्राय प्रकाशित किया था। केवल अंग्रेजी भाषा सीखने की ही इच्छा नही थी, किन्तु इंग्लैंड जाने का भी उनका प्रबल विचार था। परन्तु उनका प्रीतिभाजन छात्र और अन्त में उनके सुहृदों में परिगणित श्रीयुक्त श्याम जी कृष्ण वर्म्मा महाशय के इंग्लैंड जाने पर उन्होंने उस विचार को त्याग दिया था—ऐसा सुना जाता है। स्यात् उन्होंने यह सोच लिया था कि कृष्णवर्म्मा द्वारा ही उनका इंग्लैंड जाने का उद्देश्य सिद्ध हो जायगा। परन्तु वास्तव में ऐसा हुआ नहीं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को नियोजित किया और उसी नियोजित बंगाली बाबू से बीच-बीच में मैक्समूलर प्रभृति के वेदों के अनुवाद को सुनने लगे। स्वामी जी जिस समय इस प्रकार भाष्य प्रचार में व्यापृत होने के लिए काशी में सज्जित हो रहे थे, उस समय पूर्वोल्लिखित भीमसेन शर्मा उनके पास उपस्थित हुए। भीमसेन की उपस्थिति यद्यपि आकस्मिक थी, परन्तु वह समयोपयोगी हुई। क्योंकि भाष्य रचना के काम में भीमसेन शास्त्री के समान कई एक व्यक्ति बड़े आवश्यक थे, क्योंकि उनके समान कई शिक्षित और दक्ष लेखकों के बिना भाष्य प्रचार में और भी काल विलम्ब होता, इसलिये भीमसेन के आने से स्वामी जी ने हृष्ट चित्त होकर उपस्थित व्यापार में उनकी आवश्यकता की बात उठाई। भीमसेन उसे सुनकर आह्लाद के साथ उस प्रस्ताव से सम्मत हो गये। तब और कालक्षेपण को अनर्थक और अनावश्यक समझ कर दयानन्द ने पण्डित भीमसेन और पूर्वलिखित बंगाली बाबू के साथ काशी से अयोध्या की ओर यात्रा की। मार्ग में जौनपुर नगर में कुछ दिन रह कर उन्होंने सरयु तटवर्तिनी अयोध्यापुरी में प्रवेश किया। वहाँ सरयु बाग नामक मनोरम स्थान में स्वामी जी रहने लगे। सरयु बाग की शान्तरसाभिषिक्त भूमि में स्वामी जी का भाष्य प्रचार रूपी सङ्कल्प-बीज अंकुरित हुआ। उनकी ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका सरयु बाग में ही रची जाने लगी। इसलिये दयानन्द के वेदभाष्य के इतिहास में सरयू बाग स्मरणीय रहने योग्य है। केवल सरयू बाग ही नहीं, १९३३ सम्वत् के भाद्र मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि रविवार का दिन भी स्मरणीय रहेगा, क्योंकि स्वामी दयानन्द इसी दिन वेद भाष्य के प्रचार का सूत्रपात करके आर्यावर्त्त में अपने अति उज्ज्वल कीर्ति-स्तम्भ को स्थापित कर गये हैं।

दयानन्द अयोध्या से शाहजहाँपुर और बरेली होते हुए अलीगढ़ के जिले में छलेश्वर गये। छलेश्वर में दयानन्द की दूसरी संस्कृत पाठशाला थी। सम्भवतः उसी पाठशाला के निरीक्षण के लिये ही वह छलेश्वर गये थे। छलेश्वर से स्वामी जी दिल्ली आये। दिल्ली में उस समय दरबार था। महारानी विक्टोरिया को "भारतराजराजेश्वरी" की उपाधि से अभिहित करने के लिए ही उस दरबार का समावेश हुआ था। इसलिये बड़े समारोह के साथ उसका आयोजन हो रहा था। राज-प्रतिनिधि लार्ड लिटन दरबार के सम्पूर्ण कामों को सर्वाङ्ग रूप से सम्पादित करने के लिए अक्लान्तदेह से परिश्रम कर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रहे थे, नीची कक्षा के राजकीय कर्मचारी वर्ग दिल्ली की ओर दौड़े आ रहे थे। दरबार में उपस्थित होने के लिये राज प्रतिनिधि किसी को अनुरोध कर रहे थे, किसी को आह्वान कर रहे थे, और किसी को निमन्त्रित करके आ रहे थे। भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न प्रदेशों के विशिष्ट व्यक्तिगत आज्ञाबद्ध होकर सामन्तवर्ग आहूत होकर, और मित्र और करप्रद राजगण निमन्त्रित होकर एक-एक करके दिल्ली में आ रहे थे। निमन्त्रित राजगण में कोई ग्रीवा अवनत किये हुए, कोई अस्वाभाविक हास्य से अपने मुख-मण्डल को विकृत किये हुए और कोई रेखा के ऊपर रेखा से अपने ललाट पट को संकुचित किये हुए दरबार भूमि में प्रविष्ट हो रहे थे। इसके अतिरिक्त नाना श्रेणियों के लोग नाना स्थानों से आकर दिल्ली के भीतर प्रवेश कर रहे थे। वहां के राजपथ जनप्रवाह से अवरुद्धप्राय हो रहे थे। अगणित लोगों के आने से, अशेषविध कण्ठों के कोलाहल से, और अश्वरथादि के आने-जाने की घोर रव से नगर-वक्ष विकम्पित हो रहा था। फलतः जिस समय ऐसे समारोह से दिल्ली का वक्षःस्थल विलोडित हो रहा था उस समय दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादि भाष्य की पाण्डुलिपि हाथ में लिए हुए वहां पदार्पण किया।

ऐसे समय में स्वामी जी दिल्ली में क्यों आये? क्या वह दरबार देखने के अभिप्राय से उपस्थित हुये थे, अथवा क्या उन्होंने उस समारोहशालिता से आकृष्ट होकर आगमन किया था? हमारा विश्वास ऐसा नहीं है। तो क्या बंगाल के केशवचन्द्र जिस कारण से उपस्थित हुए थे, बम्बई के गोपालराव हरिदेशमुख जिस कारण से आये थे, किंवा सय्यद अहमद प्रभृति के समान प्रतिनिधिपदारूढ व्यक्तिगण जिस कारण से दर्बार-क्षेत्र में आये थे, दयानन्द भी उसी कारण से दिल्ली आगये थे? ऐसा भी नहीं है तो क्या जिस उद्देश्य से भारत के भिन्न-भिन्न प्रदेशों के राजन्यवर्ग वहां एकत्रित हो रहे थे, जिस उद्देश्य से ग्वालियर और इन्दौर, जम्मू और जोधपुर, कपूरथला और कोल्हापुर प्रभृति के अधिपतिगण दर्बार-भूमि के चारों ओर शिविर सन्निवेश करके निवास कर रहे थे; संन्यासी दयानन्द ने भी उसी उद्देश्य से परिचालित होकर दिल्ली में प्रवेश किया था? ऐसा भी नहीं है। तो दयानन्द का दिल्ली आने का क्या प्रयोजन था? दिल्ली में आनेका एक विशेष प्रयोजन था। वह प्रयोजन किसी प्रकार से दयानन्द का स्वार्थप्रसूत नहीं था, किन्तु वह समस्त भारत के स्वार्थ के साथ ही संसृष्ट था। दयानन्द ने जान लिया था कि भारत-भूमि विच्छिन्न विभक्तीकृत है। उन्होंने समझ लिया था कि भारत निवासी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भिन्न-भिन्न मन्त्रों की सिद्धि में विभिन्न पथों पर चल रहे हैं। इसी कारण वह वेद की प्रतिष्ठा के लिये बद्धपरिकर होकर इतने दिन तक संग्राम करते हुए आरहे थे, क्योंकि उनका दृढ विश्वास था कि वेद-प्रकाश के विस्तार से ही भारत की सर्व प्रकार की विभिन्नता दूर होगी। इस समय किस उपाय का अवलम्बन करने से वह वेद-प्रतिष्ठा रूपी पवित्र व्रत सर्वतोभावेन सुसाधित हो सकेगा—इस विषय में मन्त्रणा करने के लिये ही वह दिल्ली में आकर उपस्थित हुये थे।

उपस्थित विषय की आलोचना के लिये यह एक प्रकृत सुयोग था। क्योंकि जिस स्थान में भारत के सारे प्रदेशों के सुधीवर्ग सम्मिलित होंगे, स्वदेश हितैषिता के आग्रणी व्यक्तिगण एकत्रित हो जिस स्थल को समलंकृत करेंगे, और सिन्ध्या हुल्कर और राणा महाराणाओं के विश्रुतनामा वंशधर जिस स्थल में इकट्ठे होकर क्षात्र वैभव की पूर्वस्मृति को पुनरुद्दीपित करेंगे, उल्लिखित प्रस्ताव की पर्यालोचना के विषय में वह स्थान अतीव उपयोगी होगा—इसमें और क्या सन्देह है ? अस्तु। दिल्ली का जो भाग अब पुरानी दिल्ली के नाम से प्रसिद्ध है दयानन्द आकर वहां के एक उद्यान में ठहरे‡। यद्यपि उस समय दिल्ली की चारों दिशा सावक्ष के समान विक्षोभित हो रहीं थीं, तथापि उससे स्वामी जी का अणुमात्र भी चित्तविक्षेप नहीं हुआ। इसलिये वह पूर्व के समान ही अव्याहत भाव से भाष्य की रचना में नियोजित रहे। इसके पश्चात् प्रस्तावित विषय की आलोचना के लिए एक दिन निरूपित हुआ। उस नियत दिवस के निर्दिष्ट समय पर भारत के नाना सुधी और सज्जनगण एकत्रित हुए। बंगाल देश के केशवचन्द्रसेन, बम्बई के हरिदेशमुख, अलीगढ़ के सैयद अहमद, लुधियाने के कन्हैयालाल अलखधारी, और लाहौर के पण्डित मनफूल प्रभृति प्रोज्ज्वलकीर्त्ति व्यक्तिगण एक-एक आकर उस सभाक्षेत्र को सुशोभित करने लगे। फलतः नाना दिशाओं से आये हुए

‡ कोई-कोई कहते हैं कि स्वामी दयानन्द दिल्ली में आकर इन्दौराधीश के शिविर में ठहरे थे, यहां तक कि वह इन्दौराधीश के अनुरोध से ही दिल्ली में आये थे। ऐसा सुना जाता है कि इन्दौराधीश ने यह प्रतिज्ञा भी की थी कि वेद प्रतिष्ठा विषय में परामर्श करने के उद्देश्य से दर्बार में आये हुए राजगण को स्वामी जी से मिलायेंगे, परन्तु शोक है कि इन्दौरपति उस प्रतिज्ञा का पालन नहीं कर सके।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तारागण के अभ्युदय से वह सभा मण्डल प्रभासित हो उठा। स्वामी दयानन्द उस सभा-भूमि में चन्द्रमा के समान अधिष्ठित होकर आर्यावर्त्त की उन्नति और एकता विषयक प्रसङ्ग उठाया। यह मानना होगा कि उत्थापित प्रसङ्ग जैसा क्षेत्रोपयोगी था, वैसा ही पात्रोपयोगी भी था। अधिक क्या, उत्थापित प्रसङ्ग उस सभा और सभसदों के पक्ष में सर्वतोभावेन गौरव साधक था। किन्तु ऐसा होने पर भी उस विषय में सब एकमत नहीं हो सके। इसके सम्बन्ध में उनमें एक दूसरे से सम्मतिभेद होने लगा। भारतभूमि में एकता स्थापन करने के विषय में प्राय: सब ही भिन्न-भिन्न मार्गों का निर्देश करने लगे। केशवचन्द्रसेन ने यह बात कही कि ब्राह्मसमाजप्रसूत शक्ति ही इस देश में एकता स्थापन का प्रधान कारण होगी। इसलिये उसी शक्ति को सर्वतोभावेन प्रतिष्ठत और प्रसारित करने की चेष्टा करना ही, उनके विचार में, भारतभूमि के लिये नितान्त आवश्यक है। इस प्रकार से प्राय: सब ही के अपने-अपने मनोभाव को व्यक्त करने पर स्वामी जी ने अतीव विज्ञता के साथ उनकी सम्मतियों की आलोचना करके कहा कि वेद प्रतिष्ठा के सिवाय आर्यावर्त्त में एकता स्थापित करना किसी प्रकार सम्भव नहीं है, क्योंकि वेदों के तुल्य ऐसा कोई ग्रन्थ नहीं है जिसके नाम पर आर्य्यमात्र मस्तक झुकायेंगे, वैदिक मार्ग के समान ऐसा कोई मार्ग नहीं है जिसके ऊपर शैव, शाक्त और सौर आदि भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय आकर समान भाव से खड़े होंगे, और वेदों के समान आर्यों के बीच में ऐसा कोई आश्रयतरु नहीं है जिसके नीचे आकर भारत के उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम दिशाओं के नर-नारीगण शान्ति लाभ कर सकेंगे। इसलिये वेद ही आर्यों के एक मात्र अवलम्बन हैं और एक मात्र वेदों के अवलम्बन में ही आर्यावर्त्त की एकता और उन्नति है। स्वामी जी की इन बातों ने श्रोतृवर्ग के हृदयों में चोट तो अवश्य लगाई, परन्तु उनके हृदयों को वे आकृष्ट नहीं कर सकीं। विशेषत: स्वामी जी का यह अशेषहितकर प्रस्ताव केशवचन्द्र के पक्ष में नितान्त आपत्तिकर हुआ, और उनकी आपत्ति अनेकों के निकट अनुपेक्षित प्रतीत होने लगी। उसी के होने की तो बात थी, क्योंकि उस समय के प्रभाव और ज्ञान सम्बन्ध में केशवचन्द्र जितने अग्रवर्ती हो रहे थे, दयानन्द उतने नहीं हुए थे। इसलिये अपेक्षाकृत अल्पबुद्धि मनुष्यों में केशवचन्द्र का ही पक्ष प्रबल रहा। सुतरां स्वामी जी को व्यर्थ मनोरथ होकर उस सभा स्थल को परित्याग करना पड़ा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उसके पश्चात् दयानन्द मेरठ गये। मेरठ जाने के समय पूर्वोक्त बंगाली बाबू पर वेदभाष्य के मुद्रण का भार अर्पण करके उन्हें काशी भेज दिया। उन्होंने काशी जाकर लाज़रस साहब के प्रसिद्ध यन्त्रालय में भाष्य छापने का प्रबन्ध किया। स्वामी जी मेरठ आकर वहां के सूर्य्यकुण्ड के पास एक गृह में रहने लगे। इसके अतिरिक्त वहां के एक उद्यान में भी कुछ दिन रहे। परन्तु स्वामी जी इस यात्रा में एक पक्ष के समय से अधिक नहीं रहे। मेरठ में उनकी वक्तृता या व्याख्यानादि कुछ नहीं हुआ, तो भी उनके आने का समाचार सुन कर वहां के अनेक व्यक्ति बातचीत करने के लिए कौतूहला-क्रान्त हुए, और हिन्दू मुसलमान प्रभृति अनेक सम्प्रदायों के बहुत से व्यक्ति उनके पास आकर बहुत प्रश्न करने लगे! ऐसा कहा जाता है कि उस समय वहां के एक पण्डित स्वामी जी के पास आकर प्रायः धूम्रपान का खण्डन किया करते थे। स्वामी जी उस समय धूम्रपान करते थे। स्यात् इसी कारण पण्डित जी उसके प्रतिवाद में प्रवृत्त हुए थे ‡। किम्बहुना, स्वामी जी उनके तम्बाकू सम्बन्धी प्रतिवाद को साग्रह होकर सुनते थे। इस यात्रा को मेरठ में इस प्रकार अतिवाहित करके दयानन्द चांदापुर चले गये।

चांदापुर में उस समय मेला था। मेले में बहुत से लोग आये हुए थे। इस कारण वहां की मेला भूमि में वैदिक धर्म्म के विचार के लिये किसी न किसी उपाय का अवलम्बन करना अनेक लोगों ने उचित समझा। इसलिये स्वामी दयानन्द से विशेष रूप से अनुरोध किया गया, और उन्होंने भी प्रतिज्ञा की कि वे अनुरोधकों के इच्छानुसार ही कार्य करेंगे। अन्यान्य मेलों के समान चांदापुर के मेले में भी पादरी लोग उपस्थित हुए थे। मुसलमान मत की महिमा के विस्तार करने के लिये एक मौलवी भी आये थे। यथा कृष्टान,

---

‡ दयानन्द उस समय धूम्रपान करते थे, इसीलिये अनेक लोग अति उत्कृष्ट और सुगन्धित तम्बाकू क्रय करके उन्हें उपहार में देते थे। परन्तु एक दिन की एक घटना से स्वामी जी ने धूम्रपान का अभ्यास छोड़ दिया। वह एक वार लाहौर में बैठे हुए धूम्रपान कर रहे थे कि इतने में एक व्यक्ति ने आकर कहा—"आप सर्वत्यागी संन्यासी हैं। क्या आप के पक्ष में इस प्रकार बहुमूल्य तम्बाकू सेवन करना विधेय है?" इस बात के सुनते ही स्वामी जी ने उसी क्षण से धूम्रपान का अभ्यास छोड़ दिया और उस व्यक्ति की स्पष्ट-वादिता की मन-मन में प्रशंसा करने लगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

क्या मुसलमान, सब ही लोग मेले में आये हुए मनुष्यों के सामने अपने-अपने साम्प्रदायिक मतों की श्रेष्ठता प्रतिपादन करने के लिये बद्धपरिकर होने लगे। उस समय भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के प्रतिनिधियों के अनुरोध से, विशेषतः मुन्शी प्यारेलाल नामक एक स्वधर्म्मनिष्ठ सदाशय व्यक्ति के विशेष उद्योग से, एक सभा बुलाने का आयोजन होने लगा। तदनुसार सन् १८७७ इस्वी को मार्च की १६ वीं तारीख को उस विस्तृत मेलाभूमि के एक स्थल में एक महती सभा का अधिवेशन हुआ। सभास्थल में नाना सम्प्रदायों के व्यक्ति आये। कोई सत्यार्थी होकर और कोई-कोई कौतूहल की तृप्ति के लिये ही आये। कृष्टान, मुसलमान और हिन्दू तीनों सम्प्रदायों में से कई एक प्रतिनिधि नियत हुए। स्काट, नोबिल, पार्कर और जानसन नामक चार पादरी ईसाई मत के, मोहम्मद कासिम और अब्दुलमंसूर दो मौलवी मुसलमान मत के, और स्वामी दयानन्द सरस्वती वैदिक मत के पक्ष समर्थनार्थ सभाभूमि में आकर अपने-अपने आसनों पर बैठ गये। एक वेदनिष्ठ हिन्दू भी सहायक रूप से स्वामी जी के साथ आये। उन सहायक का नाम मुंशी इन्द्रमणि था। उस के पश्चात् उस सभा के विचारणीय विषय सम्बन्धों में आलोचना होने लगी। अन्त मे सब की सम्मति के अनुसार सभा का विचारणीय विषय धर्म्म के मूलतत्व का निरूपण करना निश्चित हुआ। परन्तु विचारणीय विषय की मीमांसा कतिपय शाखा प्रश्नों की मीमांसा पर निर्भर की गई। वे शाखा-प्रश्न ये थे :—

(१) परमेश्वर ने किस समय और किस-किस उपकरण से सृष्टि-रचना की ?

(२) परमेश्वर सर्वत्र विद्यमान है वा नहीं ?

(३) ईश्वर की दया और न्याय किस प्रकार है ?

(४) वेद, कुरान, और बाइबिल के ईश्वरोक्त होने का क्या प्रमाण है ?

(५) मुक्ति और उसका उपाय क्या है ?

इन्हीं पांच विषयों पर विचार होने लगा। स्वामी जी ने सब से अनुरोध किया कि इस प्रकार कार्य किया जाय कि जिस से विचार का काम स्थिर और गम्भीर भाव से हो। परन्तु ऐसा करने पर भी कोई-कोई भावावेग से अधीर हो गये, और कोई जिगीषापरवश होकर सत्यप्रतिष्ठा के प्रति शिथिलता प्रकट करने लगे। तब दयानन्द ने उन्हें सचेत करने के निमित्त

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कहा—"मैं यहां सत्य के निर्धारण के लिये ही आया हूँ, इसलिये अपनी-अपनी जिगीषा का परिहार करके प्रत्येक को केवल प्रस्तावित विषय का ही अनुसरण करना होगा।" अस्तु। उल्लिखित प्रश्न समूह ऐसा व्यापक और विचारसापेक्ष था कि उन में से एक-एक पर ही विचार करने में दीर्घकाल लगने की सम्भावना थी। यहां तक कि प्रथम प्रश्न की ही मीमांसा करने में कई घण्टे लग गये। किन्तु तो भी, क्या पादरी और क्या मौलवी, कोई भी उसकी भले प्रकार मीमांसा करने में समर्थ नहीं हुए। तब स्वामी दयानन्द उसके मतामत की आलोचना करके सृष्टि विषय में वैदिक सिद्धान्त की व्याख्या करने लगे। उनकी व्याख्या भी बहुक्षणव्यापिनी हुई, इसलिये उस सभा क्षेत्र में अन्यान्य प्रश्नों पर विचार करना असम्भव हो गया। विशेषतः दयानन्द के समान अगाधबुद्ध और असाधारणतार्किक व्यक्ति के सामने विषय विशेष पर बहुत कहना उनके विचार में अनर्थक ठहरा। इसी हेतु एक स्पष्टवादी कृष्टान ने उठ कर कहा—"हम स्वामी जी के सामने कोई प्रश्न उत्थापित नहीं करते हैं, क्योंकि वह उसका सहस्र प्रकार से उत्तर देंगे। यहां तक कि यदि हम में से सहस्र मनुष्य एक साथ उनसे किसी बात की जिज्ञासा करें, तो भी वे उसके उत्तर देने में कुछ भी संकोच नहीं करेंगे। इसलिये उनके सामने हमारा वागाडम्बनामात्र है।" अस्तु। उन्होंने अन्यान्य प्रश्नों की आलोचना से निवृत्त होकर केवल अन्त के ही प्रश्न को विचार का विषय रखा तब मुक्ति और उसके उपाय के विषय में नाना मत उत्थापित होने लगे। स्वामी जी ने सब मतों का विश्लेषण करके आर्ष मत की श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया। उससे मौलवी और चारों पादरी सन्तुष्ट नहीं हुए; परन्तु तो भी कोई आपत्ति नहीं कर सके। फलतः वे लोग उस सभा में और अधिक नहीं ठहरे। विशेषतः मौलवियों के पक्ष में वह सर्वतोभावेन ही अशान्तिकर हो गया। मौलवीगण सभास्थल से चले गये, और यह कह कर गये कि वे शाहजहांपुर जाकर स्वामी जी के साथ इन सब विषयों पर विचार करेंगे। शोक है कि स्वामी जी के भविष्यत् में शाहजहांपुर जाने पर भी उन में से कोई उन के पास नहीं आया।

इस प्रकार चांदापुर की मेलाभूमि में वैदिक मत की घोषणा करके स्वामी जी ने पञ्जाब में प्रवेश किया। वह लुधियाना नगर में जाकर थोड़े दिन ठहरे। पूर्वोक्त कन्हैयालाल अलखधारी लुधियाने के एक विशिष्ट

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

निवासी थे। अधिकन्तु वह पञ्जाब के समाज संस्कारक करके प्रसिद्ध थे। साधु-संन्यासियों के प्रति कन्हैयालाल बहुत आस्थावान् नहीं थे, परन्तु ऐसा न होने पर भी दयानन्द से वह बहुत अनुरक्त हो गये; और इसी कारण से जब स्वामी जी लुधियाना गये, तो उन्हें आग्रह के साथ अपने घर लिवा ले गये। कन्हैयालाल के उद्योग से लुधियाने में एक सभा बुलाई गई उस सभा में अप्रैल मास की पहली तारीख को स्वामी जी ने एक वक्तृता दी। उनकी वक्तृता से लुधियाना नगर में वैदिकधर्म्म का आन्दोलन होने लगा। किम्बहुना, वहां के निवासी और अधिक ठहरने के लिये स्वामी जी से अनुरोध करने लगे। परन्तु वह उन के अनुरोध पालन में समर्थ नहीं हुए। क्योंकि उन्हें लुधियाने से लाहौर को जाना था।

———

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दसवां अध्याय

लाहौर में आना, वहां व्याख्यान और स्थानीय ब्राह्मणों की विरोधिता, स्थानीय ब्राह्मसमाज़ में वक्तृता, वेदावलम्बन विषय में ब्राह्मणों के साथ विचार, वेद-भाष्य के सम्बन्ध में गवर्नमेण्ट से साहाय्य की प्रार्थना, भाष्य सम्बन्ध में गवर्नमेण्ट के मत का संग्रह, पादरी हूपर और कई ब्राह्मणों के साथ शास्त्रार्थ, लाहौर में आर्यसमाज-स्थापन, रावलपिण्डी प्रभृति स्थानों में गमन और आन्दोलन, लाहौर में प्रत्यागमन और मुलतान यात्रा, मुलतान में व्याख्यान और आर्यसमाज स्थापन, अन्यान्य नगरों में गमन और पंजाब की सीमा का उत्तरण :

उन्नीसवीं अप्रैल दयानन्द के लाहौर आने का दिन था। उनसे लाहौर आने के लिये अनुरोध किया गया था। इस से पहले कहा जा चुका है कि लाहौर के कतिपय सम्भ्रान्त व्यक्ति दरबार के उपलक्ष में दिल्ली गये थे। दिल्ली में वे स्वामी जी से परिचित हो गये थे, और परिचय होंने में स्वामीजी के असीम पाण्डित्य, असाधारण प्रतिभा और अकृत्रिम स्वदेश प्रीति को देखकर विमोहित हो गये थे, और वह पञ्जाब के प्रधान नगर में एक बार पदार्पण करने के लिये स्वामी जी से अनुरोध कर आये थे। परन्तु हमारे विचार में दयानन्द केवल अनुरोध विवश होकर ही लाहौर नहीं आये। पञ्जाब से उन्हें बहुत दिनों से गाढ़ प्रीति थी, और स्वामी दयानन्द जैसे संस्कारक के लिये पञ्जाब के साथ गाढ़ प्रीति होना स्वाभाविक ही था। क्योंकि जस स्थान में

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

परम शक्ति का प्रथम ही उद्बोधन हुआ था, जिस स्थल में परा विद्याने जन्म लेकर पृथिवी की यावतीय जातियों को ज्ञान धर्म्म में शिक्षित किया था, और जिस स्थल से सरस्वती की शक्ति ने सौ धाराओं में उत्सारित होकर मनुष्य के सुविस्तृत मनोराज्य को सरस और उर्वर किया था, उस स्थल के साथ स्वामी दयानन्द के अकृत्रिम अनुराग सूत्र में बंधने में क्या विचित्रता है? केवल यही नहीं, सप्तसिन्धु के पुण्यमय प्रवाह से जिस देश की भूमि विशोधित हुई थी, गुरु नानक के शोणित अस्त्राघात से भ्रान्त विश्वास और भ्रान्त संस्कार रूपी कण्टक-जाल जिस प्रदेश से एक प्रकार से अन्तर्हित हो गया है, और गुरु गोविन्दसिंह की गरीयसी साधना में जिस प्रदेश के निवासीगण सरल और सजीविता-सम्पन्न होकर एक श्रेष्ठ-जाति परिगणित होते हैं, उस प्रदेश में अद्वितीय ब्रह्म की उपासना का बीज बोने में यदि दयानन्द स्वभावतः ही उत्साहित हुए, तो इसमें क्या आश्चर्य है? सुतरां लाहौर-आगमन के विषय में स्वामी जी जैसे अनुरुद्ध हुए थे, वैसे ही अनुरागी भी हो गये थे। किन्तु ऐसा होने से भी, अनुराग-भारावनत हृदय से पञ्जाब क्षेत्र से पदार्पण करने से भी, उन लोगों को, जो स्वामी जी को निमन्त्रित कर आये थे, पञ्जाब के हितैषियों में निश्चय ही परिगणित करना होगा। आश्चर्य है कि निमन्त्रण देने वालों में अधिकतर व्यक्ति ब्राह्मसमाज संसृष्ट थे, क्योंकि लाला जीवनदास, पण्डित मनफूल‡ स्वर्गीय नवीनचन्द्रराय और पण्डित अमरनाथ प्रभृति सब ही लाहौर के ब्राह्मसमाज के साथ किसी न किसी सूत्र में सम्बद्ध थे। अतएव प्रतीत होता है कि दयानन्द को लाहौर लाने के लिये स्थानीय ब्राह्मगण ने ही विशेष रूप से चेष्टा की थी।

अस्तु। अप्रैल की पूर्वोल्लिखित तारीख को दयानन्द लुधियाने से लाहौर आ पहुंचे। स्टेशन पर उतरते ही पूर्वोक्त महोदयगण ने उनका स्वागत किया। दयानन्द ने उन्हें देखकर आनन्द प्रकट किया, और वे भी दयानन्द को देखकर नितान्त हृष्टान्तःकरण हुए। उन्हें लिवाने के लिये स्टेशन पर चार गाड़ियां

---

‡ कोई-कोई कहते हैं कि पण्डित मनफूल ने स्वार्थ से परिचालित होकर ही दयानन्द से लाहौर आने के लिये अनुरोध किया था। उनका एक पुत्र ईसाई धर्म्म अवलम्बन करने का उपक्रम कर रहा था; इसलिये स्वामी जी को लाहौर लाकर उनके उपदेश से उस विपथगमनोद्यत् पुत्र को स्वपथस्थ करने की इच्छा करते थे। परन्तु अनुसन्धान करने पर विदित हुआ कि यह बात ठीक नहीं है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गई थीं, किन्तु उन में से एक गाड़ी को तो स्वामी जी के ग्रन्थों का बोझ ही ढोना पड़ा। सुतराँ शेष तीन गाड़ियों में स्वामी जी और अन्यान्य व्यक्तिगण बैठे। कुछ काल पीछे उनकी गाड़ियां दीवान रतनचन्द्र के उद्यान के द्वार पर आ पहुंची। इससे विदित होता है कि रतनचन्द्र का उद्यान ही स्वामी जी के रहने के लिये नियत हुआ था। फलतः वह उद्यान केवल दयानन्द के रहने के ही काम में नहीं आया, वहां प्रतिदिन अपराह्न में स्वामी जी के व्याख्यान भी होने लगे। इसके अतिरिक्त अप्रैल की २५ वीं तारीख को दयानन्द ने एक व्याख्यान 'वेद और वेदोक्त धर्म्म' विषय पर दिया। वह व्याख्यान लाहौर के बावली साहब नामक स्थान में हुआ था। बावलीसाहब सिक्ख सम्प्रदाय के निकट एक पवित्र स्थान परिगणित होता है। उल्लिखित वक्तृता से लाहौर में चारों ओर तुमुल आन्दोलन होने लगा। उससे ब्राह्मणगण बहुत ही विरक्त हो गये। केवल विरक्त ही नहीं हुए, वे अत्यन्त कोपाविष्ट होकर स्वामी जी के विरुद्ध आचरण करने लगे। उन ब्राह्मणों के उद्योग से शीघ्र ही एक पण्डित सभा स्थापित हो गई। वह सभा स्वामी दयानन्द की प्रतिपत्ति नष्ट करने के लिये सहस्रों प्रकार से चेष्टा करने लगी। पण्डित श्रद्धाराम फिल्लौरी नामक एक हिन्दी कवि उस सभा के अग्रणी रूप से खड़े हुए। उन्होंने पूर्वोक्त बावली-साहब नामक स्थान में मूर्तिपूजा के समर्थन में एक वक्तृता दी थी। उस वक्तृता से ब्राह्मणगण तो सन्तुष्ट हो गये, परन्तु लाहौर के शिक्षित जन सन्तुष्ट न हो सके। अन्त में पण्डित सभा की द्वेषाग्नि क्रमशः प्रवल हो उठी। दयानन्द और उनके पक्षावलम्बियों के साथ ब्राह्मणगण विवाद पर उद्यत हो गये। यहां तक कि दोनों पक्ष जिससे शान्तभाव का अवलम्बन करें —इस प्रयोजन से स्थानीय 'कोहेनूर' पत्र में लेखादि भी प्रकाशित होने लगे। परन्तु किसी प्रकार से भी ब्राह्मणों का कोप शान्त नहीं हुआ। उन्होंने रतनचन्द्र के पुत्र दीवान भगवानदास के पास जाकर बहुत अनुयोग के साथ कहा—"आप इस म्लेच्छ को बाग से निकाल दीजिये।" ब्राह्मणों का सम्मिलित अनुरोध भगवान-दास के लिए अनतिक्रम्य हो गया। इसलिये उन्होंने स्वामी जी से दूसरे स्थान में चले जाने के लिए अनुरोध किया। स्वामी जी ने उनके अनुरोध वचन के उत्तर में कहा, "मैं आपको नहीं जानता। जिन लोगों ने इस उद्यान में ठहरने के लिए मुझ से अनुरोध किया है, उनके कहने से मैं यहां से चला जाऊंगा।" भगवानदास ने तब और उपाय न देखकर पूर्वोल्लिखित महोदयों के पास जा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर अपना मनोभाव प्रकट किया । वे भगवानदास का अभिप्राय जानकर व्यस्त हुए, और शीघ्र ही डाक्टर रहीम खां नामक एक सम्भ्रान्त मुसलमान की कोठी में स्वामी जी को लिवा लाये‡। परन्तु लाहौर के ब्राह्मणगण इस पर भी चुप नहीं हुए। वे दुरभिसन्धि से परिचालित होकर इधर-उधर यह बात कहने लगे कि दयानन्द सरस्वती अंग्रेजी राज्य से वेतन ग्रहण करके हिन्दुओं को धर्म्मभ्रष्ट करने का उद्योग करते फिरते हैं।+

उसके पश्चात् स्थानीय ब्राह्म समाज में दयानन्द ने दो वक्तृतायें दीं। एक वक्तृता पुनर्जन्म विषय पर और दूसरी वेदान्त विषय पर थी। परन्तु ब्राह्मण-गण उनकी वक्तृता सुन कर सन्तुष्ट नहीं हुए। यह निश्चय है कि ब्राह्मणगण ने दयानन्द को स्वयं ही बुलाया था, और वक्तृता के लिए अपने मन्दिर का द्वार भी खोल दिया था। तब फिर दयानन्द की वक्तृता प्रतिप्रद क्यों नहीं

---

‡ उस समय पूर्वोल्लिखित पण्डित मनफूल ने लाला जीवनदास प्रभृति के निकट आकर कहा कि आप स्वामी जी से कुछ चुप होने के लिए कहें जिससे वह मूर्ति पूजा का खण्डन न करें। ऐसा होने से जम्मू के महाराजा तक प्रसन्न होकर उनकी बहुत प्रकार से सहायता करेंगे। जब यह कथा स्वामी जी के कानों तक पहुंची, तो उन्होंने कहा कि—"मैं वेद प्रतिपादित ब्रह्म को प्रसन्न न करके जम्मू के महाराजा को कैसे प्रसन्न कर सकता हूँ।"

+ ऐसे अमूलक जनरव दयानन्द के नाम पर नाना स्थानों में समय-समय पर प्रचारित होते थे। जब वह कलकत्ता आये थे, तब भी कई दुष्ट बुद्धि लोगों ने उनके सम्बन्ध में इसी प्रकार का एक अपवाद उठाया था—हम यह कथा पहले ही कह आये हैं। एक बार बुलन्दशहर में एक व्यक्ति ने दुरभिसन्धि से परिचालित होकर इसी प्रकार का अपवाद प्रचारित किया था और अपराधी रूप से अभियुक्त हुआ था, और उसे छः मास के कारागार का भी दण्ड हुआ था। स्वामी जी यह जान कर बहुत दुःखित हुए और गवर्नमेण्ट से अनेक अनुरोध करके उसे कारागार से छुड़ा दिया।

The Regenerator of Aryavarta. 1882 Nov, 10.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हुई ? प्रीतिप्रद होना तो दूर रहा, उनमें से कई ब्राह्म लोग तो उनकी वक्तृता सुनकर विरक्त हो गये, और स्वामी जी की वक्तृता पर लाहौर के ब्राह्मों में एक आन्दोलन चलने लगा। परन्तु ऐसा होने का क्या कारण था ? कारण यही था कि स्वामी जी ने ब्राह्मों से वेद के ग्रहण करने के लिए अनुरोध किया था। उन्होंने मुक्त कण्ठ से कहा था कि ब्रह्म ही आर्यों का चिरन्तन आराध्य है और वही ब्रह्म सब वेदों का प्रतिपाद्य है। इसलिये ब्रह्म के उपासकों को वेदच्युत होकर रहना किसी प्रकार से विधेय नहीं है। दयानन्द की ये सब बातें निश्चय ही ब्राह्म लोगों के विरोधी थीं, क्योंकि इदानीन्तन ब्राह्मगणों का * वेदों को आप्त वा अपौरुषेय शास्त्र मान कर ग्रहण करना तो दूर रहा, वे यह बात स्वीकार करने पर भी प्रस्तुत नहीं हुए कि ब्रह्म ही यावतीय वेदों का वन्दनीय है। इसलिए यह सहज में ही समझ में आ जाता है कि पूर्वोल्लिखित वेद विषयक अनुरोध ब्राह्मसमाज के सदस्यों के लिये आपत्तिकर क्यों हुआ। अस्तु लाहौर के ब्राह्मों के भीतर ऐसी वेद वितृष्णा देख कर दयानन्द उन्हें बारम्बार समझाने लगे। वेदों के समान और कोई ग्रन्थ पृथ्वी में नहीं है, वेदावलम्बन के बिना भारत में एकता स्थापन का दूसरा उपाय नहीं है—इत्यादि बातों के समझाने के लिए वह सर्वदा ही सचेष्ट रहे। किन्तु दुःख है कि उनकी चेष्टा अधिक फलदायिनी नहीं हुई। ब्राह्मसमाज के केवल थोड़े से सदस्य ही इस विषय में उनके पक्षपाती हुए, और अधिकांश ब्राह्म उनसे विरक्ति प्रकट करने लगे। वे केवल विरक्ति प्रकट करने से ही निश्चिन्त नहीं रहे, किन्तु द्वेषविवश होकर वह स्वामी जी की निन्दा के प्रचार में भी प्रवृत्त हो गये। अधिक क्या, उन द्वेष बुद्धि परायण ब्राह्मों ने दयानन्द के सम्बन्ध में शिष्टाचार की सीमा को भी उल्लङ्घन कर डाला। क्योंकि उपस्थित विषय में उस समय के एक सामयिक पत्र में जो कुछ प्रकाशित हुआ था वह वास्तव में अशिष्टता का परिचायक है। यथा:—

"The expenses of the Swami for the first two weeks were paid by the Brahmo Samaj. They amounted to nearly Rs. 25. But when the Brahmos saw that Swami Dayananda would not

---

‡ आधुनिक ब्राह्मगण स्वीकार नहीं करते हैं, पर ब्राह्मसमाज के संस्थापक राजा राममोहनराय वेदों को आप्त और अपौरुषेय स्वीकार करते थे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

join their Brahmo Samaj, and that it was impossible for them to convert him to Brahmoism, they not only withheld the payment of the Swamiji's expenses, but also realized the amount they had paid before, out of the subscription collected for his future expenses for one month."*

इस अंग्रेजी वाक्य का तात्पर्य यह है कि स्वामी दयानन्द के पहले दो सप्ताह का व्यय २५) ब्राह्म समाज ने दिया था; परन्तु उनके साथ जब ब्राह्मों का मत-भेद हो गया, तब ब्राह्मों ने उनका साहाय्य एक दम बन्द कर दिया। यहाँ तक कि सहाय्य रूप से दिये हुए पहले २५) रुपयों के भी लौटा लेने में वे तनिक भी कुण्ठित नहीं हुए। हम नहीं कह सकते कि यह घटना कहां तक सत्य है। यदि सत्य हो, तो इसकी अपेक्षा अनुदारता का परिचय ब्राह्मचरित्र में और क्या हो सकता है? फलतः इन सब कारणों से लाहौर के ब्राह्मों में विच्छेद होने की सूचना हुई। ऐसी दशा में विच्छेद का होना स्वाभाविक ही था। जिन लोगों ने वेदावलम्बन विषय में स्वामी जी की बात को सङ्गत और शुभदायक कहकर ग्रहण कर लिया उन पर अन्यान्य ब्राह्मणगण द्वेष-विष की वर्षा करने लगे। यहाँ तक कि यह बात लाहौर में सब जगह फैल गई कि वे लोग वेदों का सर्वोपरि प्रधान्य स्वीकार करने से ब्राह्म-धर्म्म से च्युत हो गये हैं। क्रमशः द्वेष का भाव और गहरा हो गया। वेद विरोधी ब्राह्मगण उन लोगों को अब्राह्म कह कर घृणा करने लगे। इसलिए वेदवादी ब्राह्मगण ने भी उन लोगों से सम्बन्ध तोड़ने का उद्योग किया। इस सब व्यापार का आनुपूर्विक वृत्तान्त दयानन्द के कर्णगोचर होने लगा। वह क्या करते:—अन्य उपाय न देख कर आर्यसमाज का स्थापन करना ही श्रेय समझने लगे। सत्य के अपरिहार्य अनुरोध से यहां यह लिखना नितान्त ही आवश्यक है कि आदि में स्वामी जी का सङ्कल्प स्वतन्त्र भाव से किसी सभा वा समाज के स्थापित करने का नहीं था। यदि ब्राह्मण वेद का अवलम्बन करते, यदि ब्राह्मसमाज के सदस्यगण वेद को सर्वश्रेष्ठ शास्त्र कह कर अन्ततः मान लेते, तो दयानन्द पृथक् भाव से कुछ करने का कभी प्रयास न करते। परन्तु लाहौरस्थ ब्राह्मगण जब उनसे किसी प्रकार भी सम्मत नहीं हुए, तो स्वामी जी अगत्या आर्य्य-

* The Regenerator of Aryavarta 1883 January P 3.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समाज के स्थापन में सङ्कल्पारूढ़ हुए। विशेषतः पूर्वोक्त कतिपय वेदनिष्ठ ब्राह्मलोग ही उपस्थित विषय में उनसे अनुरोध करने लगे। अस्तु, इस विषय पर लाहौर में एक आन्दोलन मच गया।

इस ओर वेद भाष्य का कार्य भी शीघ्रता से हो रहा था। स्वामी जी ने भाष्य के प्रकाश में बहुत शीघ्रता का अवलम्बन किया था। वाराणसी के पूर्वोल्लिखित यन्त्रालय में भाष्य मुद्रित होकर अंकों में प्रकाशित होता था। परन्तु उसकी ग्राहक संख्या आशा के अनुरूप नहीं हुई। इसके न होने की कथा ही क्या है। इसके भिन्न इसका तो कहना ही क्या है कि यह कार्य विलुप्त व्यय-साक्षेप था। इस कारण वेदभाष्य के व्यय के विषय में स्वामी जी चिन्तित हो रहे थे। उस समय धन एकत्रित करने के उपाय के सम्बन्ध में स्वामी जी के बान्धववर्ग परामर्श करने लगे। अन्त में उन्होंने एक उपाय भी सोचा। वह राजकीय साहाय्य के लिए गवर्नमेण्ट से प्रार्थना करने पर उद्यत हुए। यह उपाय असंगत वा अयुक्त नहीं था, क्योंकि यह स्पष्ट ही है कि अंग्रेजों के समान विद्योत्साही जाति पृथ्वी में और नहीं है। क्या विद्या प्रचार में, क्या ज्ञानालोक के विस्तार में, अंग्रेजों के समान मुक्तहस्त राजा बहुत न्यून देखने में आते हैं। यह कौन कह सकता है कि भारतवर्ष के लुप्तप्राय शास्त्रों के उद्धार में और भारतीय प्राचीन तत्व के प्रचार में अंग्रेजी सरकार ने कितनी बार मुक्तहस्तता का परिचय दिया है? तब इसमें सन्देह ही क्या हो सकता था कि उपस्थित कार्य में भी सरकार अकुण्ठित होकर साहाय्य करेगी? यह सोच कर वे लोग प्रार्थना पत्र की रचना में प्रवृत्त हुए, और उसके रचित और प्रस्तुत हो जाने पर उसे पञ्जाब गवर्नमेण्ट के पास भेज दिया। प्रार्थना-पत्र के साथ स्वामी जी के वेदभाष्य के दो अङ्क भी भेजे गये। उस प्रार्थना-पत्र और वेदभाष्य के प्राप्त होने पर गवर्नमेण्ट ने उसके सम्बन्ध में पण्डितों की सम्मति का जानना आवश्यक समझा। तदनुसार सेक्रेटरी सर लिपिल ग्रिफन ने वेदभाष्य के वह दो अङ्क पञ्जाब-यूनिवर्सिटी के रजिस्ट्रार के पास भेज दिये। उस समय लैटनर साहब रजिष्ट्रार थे। लैटनर महोदय ने उस वेद भाष्य के विषय में पण्डितों का अभिप्राय जानने के निमित्त से एक अनुरोध पत्र भी प्रकाशित किया। उस अनुरोधपत्र के साथ स्वामी जी का भाष्य भी पण्डितों के पास भेजा गया। पण्डितगण उस विषय में अपना-अपना अभिप्राय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

join their Brahmo Samaj, and that it was impossible for them to convert him to Brahmoism, they not only withheld the payment of the Swamiji's expenses, but also realized the amount they had paid before, out of the subscription collected for his future expenses for one month."*

इस अंग्रेजी वाक्य का तात्पर्य यह है कि स्वामी दयानन्द के पहले दो सप्ताह का व्यय २५) ब्राह्म समाज ने दिया था; परन्तु उनके साथ जब ब्राह्मों का मत-भेद हो गया, तब ब्राह्मों ने उनका साहाय्य एक दम बन्द कर दिया। यहाँ तक कि सहाय्य रूप से दिये हुए पहले २५) रुपयों के भी लौटा लेने में वे तनिक भी कुण्ठित नहीं हुए। हम नहीं कह सकते कि यह घटना कहां तक सत्य है। यदि सत्य हो, तो इसकी अपेक्षा अनुदारता का परिचय ब्राह्मचरित्र में और क्या हो सकता है ? फलतः इन सब कारणों से लाहौर के ब्राह्मों में विच्छेद होने की सूचना हुई। ऐसी दशा में विच्छेद का होना स्वाभाविक ही था। जिन लोगों ने वेदावलम्बन विषय में स्वामी जी की बात को सङ्गत और शुभदायक कहकर ग्रहण कर लिया उन पर अन्यान्य ब्राह्मणगण द्वेष-विष की वर्षा करने लगे। यहाँ तक कि यह बात लाहौर में सब जगह फैल गई कि वे लोग वेदों का सर्वोपरि प्रधान्य स्वीकार करने से ब्राह्म-धर्म्म से च्युत हो गये हैं। क्रमशः द्वेष का भाव और गहरा हो गया। वेद विरोधी ब्राह्मगण उन लोगों को अब्राह्म कह कर घृणा करने लगे। इसलिए वेदवादी ब्राह्मगण ने भी उन लोगों से सम्बन्ध तोड़ने का उद्योग किया। इस सब व्यापार का आनुपूर्विक वृत्तान्त दयानन्द के कर्णगोचर होने लगा। वह क्या करते;—अन्य उपाय न देख कर आर्यसमाज का स्थापन करना ही श्रेय समझने लगे। सत्य के अपरिहार्य अनुरोध से यहां यह लिखना नितान्त ही आवश्यक है कि आदि में स्वामी जी का सङ्कल्प स्वतन्त्र भाव से किसी सभा वा समाज के स्थापित करने का नहीं था। यदि ब्राह्मण वेद का अवलम्बन करते, यदि ब्राह्मसमाज के सदस्यगण वेद को सर्वश्रेष्ठ शास्त्र कह कर अन्ततः मान लेते, तो दयानन्द पृथक् भाव से कुछ करने का कभी प्रयास न करते। परन्तु लाहौरस्थ ब्राह्मगण जब उनसे किसी प्रकार भी सम्मत नहीं हुए, तो स्वामी जी अगत्या आर्य्य-

* The Regenerator of Aryavarta 1883 January P 3.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समाज के स्थापन में सङ्कल्पारूढ़ हुए। विशेषतः पूर्वोक्त कतिपय वेदनिष्ठ ब्राह्मलोग ही उपस्थित विषय में उनसे अनुरोध करने लगे। अस्तु, इस विषय पर लाहौर में एक आन्दोलन मच गया।

इस ओर वेद भाष्य का कार्य भी शीघ्रता से हो रहा था। स्वामी जी ने भाष्य के प्रकाश में बहुत शीघ्रता का अवलम्बन किया था। वाराणसी के पूर्वोल्लिखित यन्त्रालय में भाष्य मुद्रित होकर अंकों में प्रकाशित होता था। परन्तु उसकी ग्राहक संख्या आशा के अनुरूप नहीं हुई। इसके न होने की कथा ही क्या है। इसके भिन्न इसका तो कहना ही क्या है कि यह कार्य विलुप्त व्ययसाक्षेप था। इस कारण वेदभाष्य के व्यय के विषय में स्वामी जी चिन्तित हो रहे थे। उस समय धन एकत्रित करने के उपाय के सम्बन्ध में स्वामी जी के बान्धववर्ग परामर्श करने लगे। अन्त में उन्होंने एक उपाय भी सोचा। वह राजकीय साहाय्य के लिए गवर्नमेण्ट से प्रार्थना करने पर उद्यत हुए। यह उपाय असंगत वा अयुक्त नहीं था, क्योंकि यह स्पष्ट ही है कि अंग्रेजों के समान विद्योत्साही जाति पृथ्वी में और नहीं है। क्या विद्या प्रचार में, क्या ज्ञानालोक के विस्तार में, अंग्रेजों के समान मुक्तहस्त राजा बहुत न्यून देखने में आते हैं। यह कौन कह सकता है कि भारतवर्ष के लुप्तप्राय शास्त्रों के उद्धार में और भारतीय प्राचीन तत्व के प्रचार में अंग्रेजी सरकार ने कितनी बार मुक्तहस्तता का परिचय दिया है? तब इसमें सन्देह ही क्या हो सकता था कि उपस्थित कार्य में भी सरकार अकुण्ठित होकर साहाय्य करेगी? यह सोच कर वे लोग प्रार्थना पत्र की रचना में प्रवृत्त हुए, और उसके रचित और प्रस्तुत हो जाने पर उसे पञ्जाब गवर्नमेण्ट के पास भेज दिया। प्रार्थना-पत्र के साथ स्वामी जी के वेदभाष्य के दो अङ्क भी भेजे गये। उस प्रार्थना-पत्र और वेदभाष्य के प्राप्त होने पर गवर्नमेण्ट ने उसके सम्बन्ध में पण्डितों की सम्मति का जानना आवश्यक समझा। तदनुसार सेक्रेटरी सर लिपिल ग्रिफन ने वेदभाष्य के वह दो अङ्क पञ्जाब-यूनिवर्सिटी के रजिस्ट्रार के पास भेज दिये। उस समय लैटनर साहब रजिष्ट्रार थे। लैटनर महोदय ने उस वेद भाष्य के विषय में पण्डितों का अभिप्राय जानने के निमित्त से एक अनुरोध पत्र भी प्रकाशित किया। उस अनुरोधपत्र के साथ स्वामी जी का भाष्य भी पण्डितों के पास भेजा गया। पण्डितगण उस विषय में अपना-अपना अभिप्राय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लिख कर भेजने लगे। उनका अभिप्रायसमूह गवर्नमेण्ट ने मुद्रित कराकर शीघ्र ही वितरित कर दिया। आश्चर्य है कि उन सब संगृहीत और मुद्रित सम्मितियों में कोई भी स्वामी जी के अनुकूल न थी। अधिकन्तु सब ही पण्डितों ने किसी न किसी प्रकार से यही सम्मति प्रकट की कि दयानन्द सरस्वती वेद-भाष्य रचकर एक स्वकपोलकल्पित विकृत भाष्य का ही प्रचार करते हैं। अधिकतर आश्चर्य यह है कि जिन लोगों ने स्वामी जी के भाष्य पर प्रतिकूल सम्मति प्रकाशित करने में अपनी तृप्ति की थी उनमें सब ही स्वदेशी और सुपण्डित व्यक्ति नहीं थे, टानी और ग्रिफिथ के समान वेदज्ञ अध्यापक भी भाष्य की समालोचना में संकुचित नहीं हुए, और गवर्नमेण्ट ने भी उनकी सम्मति को आदर के साथ ग्रहण करने में इतस्ततः नहीं किया। अस्तु। स्वामी दयानन्द सत्य के प्रचार में पीछे हटने वाले व्यक्ति नहीं थे। वह जिसे सत्य कह कर धारण करते थे, उसे अकुतोभय होकर प्रचारित करने में ही परितृप्त रहते थे। यहां तक कि वह उसके लिये बारंबार संग्राम करने से भी पराङ्मुख नहीं होते थे। उन्होंने जब देखा कि उनके रचित भाष्य के सम्बन्ध में पण्डितों ने असत्य सम्मति प्रकाशित की है, जब उन्होंने जाना कि वैदिक-साहित्य के सुपण्डित न होकर भी कितने ही व्यक्ति उनके भाष्य की भ्रान्ति-प्रदर्शन में प्रवृत्त हुए हैं, तब वह उसका प्रतिवाद किये बिना न रह सके। वह एक-एक पण्डित की सम्मति को उद्धृत करके उसकी असारता दिखलाने लगे, और इस प्रकार सम्पूर्ण पण्डितों की सम्मतियों का खण्डन करके सर्वतोभावेन स्वकीय भाष्य की विशुद्धता का प्रतिपादन किया। तब उस प्रगाढ पाण्डित्यपूर्ण प्रतिवाद की पुस्तक के साथ पुनर्वार एक प्रार्थनापत्र भेजा गया, परन्तु तो भी उसका कुछ परिणाम न निकला। इसका कारण चाहे पूर्वोक्त पण्डितों की प्रतिकूल सम्मतियां ही हों अथवा और कोई कारण हो, स्वामी जी के भाष्य सम्बन्ध में गवर्नमेण्ट ने यही विचार पुष्ट रक्खा कि उसके सम्बन्ध में वह कोई सहायता करनी उपयुक्त नहीं समझती। सुतरां वेदभाष्य के विषय में राजकीय सहायता की आशा का परित्याग करना पड़ा।

फलतः ब्राह्मों के भीतर उल्लिखित आन्दोलन क्रमशः घोरतर हो गया। उसका विरोध उत्तरोत्तर बढ़ने लगा। उस समय वेदवादी ब्राह्मों को ब्राह्म-समाज का अंगीभूत होकर रहना असम्भव हो गया। इसलिये प्रस्ताविक आर्य-समाज के स्थापन करने के विषय में वह शीघ्रता करने लगे, और तदनुसार

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सन् १८७७ ईस्वी में जून की २४ तारीख वृहस्पतिवार को लाहौर नगर में आर्यसमाज को स्थापित कर दिया। स्थानाभाव के कारण डाक्टर रहीम खां की कोठी में आर्यसमाज का प्रथम अधिवेशन हुआ। यही कहना पड़ता है कि यह कितने आश्चर्य की बात है, क्योंकि स्थानीय ब्राह्मसमाज के विस्तृत क्रोड में आर्यसमाज ने स्थान नहीं पाया, लाहौर के किसी स्वधर्म्मनिष्ठ हिन्दू के आंगन में भी आर्यसमाज का बीज अंकुरित नहीं हुआ, प्रत्युत जो व्यक्ति म्लेच्छाचारी मुसलमान कह कर उपेक्षित होते थे, आर्यसमाज ने उन्ही के आश्रय में जन्म ग्रहण किया। यह घटना लाहौर निवासियों के पक्ष में गौरवसाधक थी वा अगौरवसाधक—यह हम नहीं कर सकते; परन्तु इसमें किसी को सन्देह नहीं हो सकता कि रहीम खां के पक्ष में वह विलक्षण उदारता की परिचायक थी। उसके पश्चात् १ जुलाई के दिन आर्यसमाज का दूसरा अधिवेशन हुआ। वह अधिवेशन सतसभा नामक सभाविशेष के मन्दिर में हुआ, और वास्तव में उसी दिन आर्यसमाज का संगठन भी हुआ। लाला मूलराज आर्यसमाज के सभापति हुए, श्रीयुक्त शारदा प्रसाद भट्टाचार्य पर उपसभापति के पद का भार सौंपा गया, और लाला जीवनदास ने उसके मन्त्रित्व का भार ग्रहण किया इस प्रकार पंजाब के पवित्र क्षेत्र में आर्यसमाज अंकुरित हुआ और चारों ओर अपनी शाखापल्लवादि को विस्तृत करने के निमित्त शिरा-शिरा में रस संचारित करने लगा। अस्तु। पूर्वोल्लिखित कई एक व्यक्तियों के अतिरिक्त लाला साईदास, लाला श्रीराम, पण्डित अमरनाथ और लाला कुन्दनलाल प्रभृति भी आर्यसमाज की स्थापना के पक्ष में विलक्षण रूप से उद्योगी हुए—यह कहना बाहुल्यमात्र है। और यह भी स्यात् अनेक लोगों को विदित है कि लाला जीवनदास, लाला साईदास और सहृदय शारदाप्रसाद स्थानीय ब्राह्मसमाज के विशिष्ट सदस्यों में परिगणित होते थे। सुतरां ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे पुराने मन्दिर के उपकरणादि को लेकर नये मन्दिर का निर्माण होता है, वैसे ही स्थानीय ब्राह्मसमाज के उपकरणादि को लेकर ही लाहौर आर्यसमाज का निर्माण हुआ। ‡

---

‡ श्रीयुक्त शारदाप्रसाद भट्टाचार्य्य महाशय से अवगत हुआ कि जिस दिन लाहौर में आर्य्यसमाज स्थापित हुआ, उस दिन ब्राह्मसमाज की निर्दिष्ट

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज की स्थापना के कुछ दिन पीछे दयानन्द अमृतसर को चले गये। उन्होंने अमृतसर में व्याख्यानादि देकर घोर आन्दोलन उपस्थित कर दिया। उनके व्याख्यानों को सुन कर अनेक लोग विस्मित होने लगे, और अनेक लोग उनके विपक्ष में खड़े हो गये। विपक्षी लोग ऐसे उत्तेजित हुए कि स्वामी जी को मार डालने का रौला मचाने लगे। परन्तु स्वामी जी किसी से भी विचलित होने वाले नहीं थे वह एक दिन अदम्य उत्साह के साथ व्याख्यान दे रहे थे कि विपक्षी दल वाले उनकी ओर पत्थर फ़ेंकने लगे। यह संवाद पाकर पुलिस के लोग आ गये और उनकी सहायता से सब गड़बड़ शीघ्र ही शान्त हो गई। इस प्रकार अमृतसर में कई दिन अतिवाहित करके वहां से प्रस्थान किया और रावलपिण्डी वजीराबाद प्रभृति स्थानों में जाकर भाषण करते हुए घूमने लगे। वज़ीराबाद से पंजाब के अन्तर्गत गुजरात पहुँचे और फिर गुजरात से गुजरानवाला आये। वहां ठाकुरदास पुजारी नामक जैन पण्डित के साथ जैनमत की आलोचना में प्रवृत्त हुए ‡। इस प्रकार पंजाब के नाना स्थानों में भ्रमण करके स्वामी जी फिर लाहौर आये। इस समय पंजाब के नाना स्थानों से उनके पास निमन्त्रणपत्र आने लगे; परन्तु कहां का निमन्त्रण स्वीकार करें और कहां का न करें। वह कुछ स्थिर न कर सके। अन्त में मुलतानवासियों का अनुरोध उनके लिये अनतिक्रम्य हो गया। इसलिये वह मुलतान यात्रा के लिये उद्यत हुए और सन् १८७८ ई० के मार्च की ७ वीं तारीख को मुलतान पहुंच गये। उनके स्वागत के लिये मुलतान में पहले से ही आयोजन हो रहा था, क्योंकि सोशलक्लब के उद्योग से वहां के स्कूलगृह में एक सभा

उपासना-पद्धति का अवलम्बन करके ही उसकी उपासना का कार्य्य निर्वाहित हुआ था, क्योंकि उस समय तक आर्य्यसमाज की कोई निर्दिष्ट उपासना प्रणाली नहीं थी। इससे विदित होगा कि ब्राह्मसमाज के साथ स्वामी जी की कितनी अविरोधिता थी।

‡ ठाकुरदास पुजारी के भिन्न पं० आत्माराम नामक प्रसिद्ध जैनमतावलम्वी के साथ दयानन्द का कुछ दिन पीछे घोर विचार हुआ था। दयानन्द ने आत्माराम के निकट यह सिद्ध किया था कि जैन और बौद्धमत अभिन्न और एक ही प्रकार के हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आहूत हुई थी। उस सभा में मुलतान के शिक्षित व्यक्तिगण एकत्रित हुए थे, और सभा के उद्देश्य के साथ सहानुभूति भी प्रगट की थी। सभास्थल में स्वामी जी के ठहरने आदि के विषय में यथोचित व्यवस्था निरधारित हो गई थी और उसके उद्देश्य से व्यय के लिये कुछ चन्दे में भी रुपये एकत्र हो गये थे। अस्तु। स्वामी जी ने मुलतान पहुंचने के दूसरे ही दिन से व्याख्यान आरम्भ कर दिये। नवीं मार्च से दस अप्रैल तक दयानन्द वक्तृता देते रहे। इसके भिन्न किस उद्देश्य से और कितने दिन से इस देश में होली और दिवाली की प्रथा चली थी—इस विषय में दयानन्दन ने वहां के निवासियों को परिचित किया ‡। फलतः एक मास से अधिक कालव्यापिनी व्याख्या और विचार का फल यह हुआ कि मुलतान के बहुत से लोग स्वामी जी के मतावलम्बी हो गये। स्वामी जी के उपदेश से यह उन्हें अच्छे प्रकार निश्चय हो गया कि वैदिक मार्ग के आश्रय के बिना आर्य्यजाति के परित्राण का और कोई उपाय नहीं है। इसलिये और अधिक समय न बिता कर वे लोग आर्यसमाज स्थापित करने का आयोजन करने लगे। उनका आयोजन शीघ्र ही सफल हो गया। मुलतान नगर में वैदिकधर्म्म के विस्तारार्थ आर्यसमाज के मन्दिर की नींव रक्खी गई। आर्यसमाज स्थापन करने के पश्चात् दयानन्द मुलतान से लाहौर आ गये। लाहौर में कुछ दिन ठहर कर जालन्धर चले आये। जालन्धर में सरदार विक्रमसिंह के घर ठहर कर वहां के मौलवियों के साथ मुसलमान मत की आलोचना में नियोजित हुए, और वहां से सहारनपुर आने के अभिप्राय से पंजाब की सीमा का उत्तरण किया।

---

‡ दयानन्द जिस समय मुलतान में ठहरे हुए व्याख्यान आदि के कार्य्य में व्यापृत थे उस समय वहां होली का उत्सव हो रहा था। यहां तक कि जिस उद्यान में वह वास करते थे एकांश में उस उद्यान में भी कई लोग होली से मत्त हो रहे थे। यह देख कर किसी-किसी अनुसंधित्सु व्यक्ति ने दयानन्द से होली के विषय में जिज्ञासा की थी। इसलिये दयानन्द ने होली के विषय में कहते-कहते दिवाली के विषय में भी कहा था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ग्यारहवां अध्याय

द्वितीयवार मेरठ-यात्रा, मेरठ में वक्तृता और नाना प्रश्नों की मीमांसा, लाला रामशरणदास प्रभृतियों का उपनयन-संस्कार, आर्यसमाज-स्थापन, अजमेरगमन और पुष्कर के मेले में व्याख्यान, अजमेर में बारह व्याख्यान, पादरी ग्रे साहब के साथ विचार, हरिद्वार के कुम्भ में व्याख्यान, सहारनपुर में कर्नल अलकाट और मैडेम ब्लेवस्टकी के साथ साक्षात् कर्नल अलकाट प्रभृति के पत्र और थ्यासोफिकल सोसाइटी का जन्म-वृत्तान्त, मेरठ में कर्नल के साथ योगादि विषय पर विचार, स्वामी जी की पीड़ा और नाना स्थानों में भ्रमण, काशी में आगमन और शास्त्रार्थ के लिये विज्ञापन देना, राजा शिवप्रसाद के साथ वादप्रतिवाद, स्वामी जी की वक्तृता को काशी के मजिस्ट्रेट का बन्द करना।

दयानन्द सहारनपुर से रुड़की होते हुए मेरठ आये। सन् १८७८ ईस्वी के अगस्त मास की २६ वीं तारीख को मेरठ पहुंचे। वहां पहुंच कर छावनी के पास दामोदरदास के बंगले में ठहरे। स्वामी जी ने उस बंगले में ३१ अगस्त तक रह कर उसके पश्चात् अन्यत्र रहने की व्यवस्था की। १ सितम्बर को मेरठ नगर में स्वामी जी का घोषणापत्र प्रचारित हुआ। प्रचारित घोषणा के अनुसार राय गणेशीलाल के भवन में प्रतिदिन सन्ध्याकाल में व्याख्यान

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होने लगे। व्याख्यान के पश्चात् प्रश्न करने के लिये आधा घण्टा समय दिया जाता था। पहिली से तीसरी सितम्बर तक तीन दिन तीन विषयों पर वक्तृता हुई। वे तीन विषय 'ईश्वर' 'धर्म्माधर्म्म' और 'स्तुति और प्रार्थना' थे। उसके पश्चात् चौथा दिन केवल प्रश्न-मीमांसा के लिये ही निर्धारित रहा। परन्तु शोक है कि उस दिन प्रश्न करने के लिये सभा में कोई नहीं आया स्वामी जी उसके लिये प्रायः १ घण्टा तक प्रतीक्षा करते रहे, और अन्त में 'सृष्टि' विषय पर वक्तृता देकर श्रोतृवृन्द को विमोहित करने लगे। इस प्रकार चौथी सितम्बर तक अतिवाहित हो गया। उसके पश्चात् नगर में लाला रामशरणदास के मकान पर दयानन्द के व्याख्यान होने लगे। वहाँ ५ से १० सितम्बर तक ६ दिन अविश्रान्त रूप से वक्तृता-स्रोत चलता रहा। स्वामी जी की इस प्रकार की अग्निस्राविनी वक्तृताओं से मेरठ के निवासिवर्ग बहुत कुछ अस्थिर हो गये। वे लोग नाना विषयों में जिज्ञासु हुए, अनेक कथा जानने के निमित्त स्वामी जी के निकट जाकर नितान्त आग्रह प्रकट करने लगे। तदनुसार उन्होंने जिज्ञासुओं के लिखित और कथित प्रश्नों की मीमांसा के लिये तीन दिन निर्धारित किये। इसलिये १० वीं सितम्बर के पश्चात् ३ दिन का समय लोगों का प्रश्न-मीमांसा में ही व्यतीत हो गया। जिज्ञासुओं में मौलवी और पण्डित श्रेणी के लोग भी आते थे, विशेषतः स्थानीय धर्म्म-सभा के लोग प्रायः उपस्थित होकर नाना कथा उत्थापित करते थे। अस्तु ऐसे अक्लान्त परिश्रम का फल यह हुआ कि मेरठ की भूमि मार्जित और कुछ उर्वरा हो गई, यहां तक कि आर्यसमाज का बीज बोने के लिये सर्वतोभावेन ही उपयोगी हो गई। देशकालज्ञ दयानन्द इसको जान गये, और जानते ही सितम्बर की २९ तारीख को मेरठ नगर में आर्यसमाज स्थापित कर दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने एक और क्रिया का अनुष्ठान करके मेरठनिवासियों के निकट अपने को चिरस्मरणीय कर दिया। वह क्रिया कुछ अंश में आश्चर्यसूचक होने पर भी अश्रुतपूर्व नहीं थी, और इदानीन्तन समय में अप्रसिद्ध होने पर भी अपरिचलित कह कर परिगणित होने वाली नहीं थी। फलतः वह लाला रामशरणदास प्रभृति कई एक वेदनिष्ठ वैश्यों का उपनयन कराने के भिन्न और कुछ नहीं थी। लाला रामशरणदास, लाला छेदीलाल और लाला शिवनारायण प्रभृति वैश्यवंशीय कई एक व्यक्ति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वामी जी के उपदेश से वेदादि आर्षग्रन्थों पर बड़े आस्थावान् हो गये थे, और वैदिक आचार के प्रति वे लोग स्वभाव से ही निष्ठावान थे, और यह भी उनकी आन्तरिक इच्छा थी कि नियत समय पर गायत्री और संध्योपासन करके ही वह अपने को आर्य नाम के उपयुक्त कर सकते हैं। दयानन्द ने इन सब कारणों से उनका उपनयन-सस्कार करना आवश्यक समझा और इसीलिये पूर्वोक्त छेदीलाल के गृह में एक यज्ञ का अनुष्ठान करके उनको उपनीत कर दिया। उन थोड़े से वैश्यों को यज्ञोपवीत धारण किये हुए देखकर मेरठ के निवासीगण अवश्य ही आश्चर्यान्वित हुए। अधिकन्तु, इसको एक अविधेय और अदृष्टपूर्व व्यापार विचार कर ‡ तुमुल आन्दोलन उपस्थित करने लगे।

मेरठ में एक मासका समय इस सारे व्यापार में बिता करके दयानन्द दिल्ली गये, और दिल्ली से रिवाड़ी होकर अजमेर नगर में पदार्पण किया। उस समय कार्तिक का अन्त और नवम्बर का आरम्भ था। उस समय पुष्कर-क्षेत्र में मेला लग रहा था। इसी कारण वह अजमेर में अधिक दिन न ठहर कर पुष्कर चले गये। वहां के मेले में उनके व्याख्यान आरम्भ हो गये। व्याख्यान सुनने के लिये सहस्रों लोग आने लगे। वह उस मनुष्यारण्य में खड़े होकर वैदिक-धर्म्म की जयघोषणा करने लगे; और कुछ दिन व्याख्यान-कार्य में नियोजित रह कर फिर अजमेर चले आये। अजमेर में १५ नवम्बर से दयानन्द के व्याख्यान आरम्भ हुए। क्रमशः बारह दिन तक उनके व्याख्यान होते रहे। इन बारह दिनों में उन्होंने बारह ही वक्तृतायें दीं। प्रत्यादेश की आवश्यकता, वेद ही सत्य ज्ञान के आधार हैं, सतीदाह की अशास्त्रीयता और जलयान में हिन्दुओं का नाना देश में यात्रा करना प्रभृति विषयों का अवलम्बन करके ही वह वक्तृता देने लगे। १२ वक्तृताओं

---

‡ वैश्य का उपनयन-संस्कार वास्तव में अविधेय वा अदृष्टपूर्व नहीं है, क्योंकि वैश्य लोग आर्य्यों में ही परिगणित हैं। पूर्वकाल में आर्य्य कहने से ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ही समझे जाते थे, और इसी कारण तीनों जातियों के मध्य में उपनयन यहाँ तक कि ब्रह्मचर्य्य तक की प्रथा थी। तब फिर वैश्यों को सन्ध्या-गायत्री का अधिकार क्यों न हो ? अतएव यह कहना बाहुल्य-मात्र है कि स्वामी जी ने पूर्वोक्त वैश्यों को उपनीत करके और उसके साथ सन्ध्योपासना का अधिकार प्रदान करके विहित कार्य्य ही किया था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में स्वामी जी का समय २७ नवम्बर तक अतिवाहित हो गया। २८वीं नवम्बर पादरी ग्रे साहब के साथ शास्त्रार्थ का दिन था। तदनुसार ग्रे साहब स्वामी जी के सम्मुख आये। दयानन्द ने बाइबिल को भ्रान्तिपूर्ण कहा। ग्रे साहब उनके प्रतिवादी हुए। इसलिये उस समय तर्क होने लगा। दोनों पक्षों का वादप्रतिवाद लिपिबद्ध होने लगा। परन्तु स्वामी जी की बातों के उत्तर में ग्रे साहब क्रमशः विचलित होने लगे। अधिक क्या, अन्त में वह एक प्रकार से निरुत्तर हो गये। ग्रे की पराभूति के समय पादरी हसबैण्ड आकर उपस्थित हुए। किन्तु ग्रे साहब के साथ हसबैण्ड साहब के मिल जाने पर भी स्वामी जी की बात अखण्डित ही रही। ग्रे साहब ने देखा कि वाद-प्रतिवाद को लिपिबद्ध करके शास्त्रार्थ करने में पदे-पदे पराभूति की सम्भावना है। इसलिये तीसरे दिन वह पूर्वोक्त प्रणाली से शास्त्रार्थ करने पर सम्मत नहीं हुए। परन्तु स्वामी जी इस बात को मानने वाले लोग नहीं थे, इसलिए ग्रे साहब के साथ स्वामी जी को शास्त्रार्थ बन्द करना पड़ा। यह कहना अनावश्यक है कि दयानन्द इस यात्रा में अजमेर में आकर सेठ रामप्रसाद के उद्यान में रहे थे, और उनकी इस बार की वक्तृतायें प्रधानतः सरदार अमीचन्द बहादुर के ही उद्योग से हुईं थीं।

इसके पश्चात् स्वामी जी हरिद्वार आये। उस समय हरिद्वार में कुम्भ का महामेला था। उसी महामेले के जनसमूह को व्याख्यान सुनाने के लिये ही वह वहाँ उपस्थित हुए थे। फलतः कुम्भ क्षेत्र में कई एक दिन व्याख्यान और शास्त्रालोचना करके वह अपेक्षाकृत सत्वरता के साथ सहारनपुर चले आये। सहारनपुर में ऐसी शीघ्र आने का क्या कारण था? कारण यह था कि कर्नल अलकाट और मैडम ब्लेवट्स्की अमेरिका से आकर सहारनपुर में उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।* दयानन्द के पास कर्नल और मैडम के अमे-

*कर्नल और मैडम सन् १८७८ ई० की १७ वीं दिसम्बर को अमेरिका के न्यूयार्क नगर से चल कर लण्डन में दो सप्ताह यापन करके सन् १८७९ ई० के फरवरी मास की १६ वीं तारीख को बम्बई में आकर उपस्थित हुए थे। उसके पश्चात् वहाँ कुछ दिन ठहर कर सहारनपुर में जाकर दयानन्द से मिलने के लिए प्रतीक्षा कर रहे थे। The Theosophist Vol 1. P. 1.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रिका से आने का क्या कारण था ? कर्नल अलकाट और मैडम ब्लेवट्स्की तो इस देश में थियासोफिस्ट सम्प्रदाय के संस्थापक प्रसिद्ध हैं। तो क्या स्वामी दयानन्द के साथ थियासोफिस्ट सम्प्रदाय का कुछ संसर्ग था ?

स्यात् बहुतों को यह बात विदित नहीं है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती का ही अवलम्बन करके थियासोफिस्ट सम्प्रदाय के अधिनायक गण इस देश में आये थे; यहाँ तक कि स्वामी दयानन्द के नाम से ही कर्नल अलकाट और मैडम ब्लेवट्स्की की भारतवासियों में प्रतिष्ठा हुई थी। अस्तु। प्रायः बीस वर्ष (इस समय ५५ वर्ष से अधिक—प्रका०) पहले कर्नल और मैडम के विशेष उद्योग से अमेरिका देश में एक सभा स्थापित हुई थी। उस सभा का नाम 'थियासोफिकल सोसाइटी' था। उस सभा के अभिप्राय या उद्देश्य सम्बन्ध में सभासद्गण ऐसा निर्धारित करते थे। यथा—

"The Society teaches and expects its fellows... ...to dissetminate a knowledge of the sublime teachings of that pure esoteric system of the archaic period, which are mirrored in the oldest Vedas and in the philosophy of Gautama Buddha, Zoroaster and Confucius; finally and chiefly to aid in the instltution of a brotherhood of Humanity, wherein all good and pure men, of every race, shall recognize each other as the equal effects (upon this planet) of one Uncreate, Universal, Infinite and Everlasting Cause."*

इस अंग्रेजी उद्धृतांश का स्थूल मर्म यह है कि "वेदादि प्राचीन ग्रन्थों में जो पवित्र पारमार्थिक तत्त्व प्रतिभात हो रहा है थियासोफिकल सोसाइटी विचारपूर्वक उसका प्रचार करेगी और जनसाधारण को भ्रातृत्व के सूत्र में सम्बद्ध करने के लिए सचेष्ट रहेगी।" सुतरां थियासोफिकल सोसाइटी को 'तत्त्वालोचनी' सभा के नाम से अभिहित करना ही युक्तिसङ्गत है। अस्तु यह सभा यद्यपि अमेरिका देश में स्थापित हुई थी, परन्तु स्वामी दयानन्द से उपदेशप्रार्थी हुई थी, यहाँ तक कि उन्हें अपना आचार्य और उपदेष्टा ग्रहण किया था। कर्नल अलकाट ने अमेरिका से इस विषय में स्वामी जी को जितने

*The Arya Magazine vol 1, No 3, Page 54.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पत्र लिखे हमने उनमें से यहाँ एक पत्र का सारांश नीचे उद्धृत किया है। वह यह है :—

"Extract from letters No. 71, Broadway, New York, 18th February 1878.

To the Most Honoroble Pandit Dayananda Sarswati, India.

Venerated Teacher—A number of American and other student who earnestly seek after spiritual knowledge, place themselves at your feet and pray you to enlighten them. The boldness of their conduct naturally drew upon them public attention and reprobation of all influential organs and persons whose worldly interests or private prejudices were linked with the established order

We have been called Atheists, infidels and pagans.

We need the assistance not only of the young and the enthusiastic but also of the wise and the venerated. For this reason we come to your feet as children to a parent and say look at us, our teacher; tell us what we ought to do. Give us your counsel and your aid.

See that we approach you not in pride but humility, that we are prepared to receive your counsel and do our duty as it may be shown to us."*

(Sd) HENRYS. OLCOTT.

President of the Theosophical Society.

दयानन्द सरस्वती थियासोफिकल सोसाइटी के केवल आचार्य वा उपदेष्टा रूप से ही परिगणित नहीं हुए, प्रत्युत निम्नोद्धृत पत्रांश द्वारा यह सिद्ध

* The Arya Magazine vol 1. No 3. Page 54.

इस अंग्रेजी उद्धृतांश का भावानुवाद यह है—

"ब्राडवे, न्यूयार्क, १८ फरवरी १८७८,—पत्र संख्या ७१ का भाग। सेवा में महामान्यवर पण्डित दयानन्द सरस्वती, भारतवर्ष।

पूजनीय गुरो ! अमेरिका तथा अन्य देशों के कतिपय शिक्षार्थी, जो अध्यात्म विद्या के हृदय से जिज्ञासु हैं, अपने आपको आपके चरणों में नत

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होता है कि थियासोफिकल सोसाइटी उनके आर्यसमाज की ही शाखा स्वरूप थी। इसलिये सोसाइटी के मन्त्री महोदय लिखते हैं—

"The Theosophical Society, New York.
May 22nd 1878.

To the Chief of the Arya Samaj.

Honoured Sir :—You are respectfully informed that at a meeting of the Council of the Theosophical Society, held at New York on the 22nd of May 1878, the president in the chair upon motion of Vice-president A. Wilder seconded by the Corresponding Secretary H. P. Blavatsky, it was unanimously resolved that the society accept the proposal of the Arya Samaj, to unite with itself, and that the title of this Society be changed to "The Theosophical Society of the Arya Samaj of India."

Resolved, that the Theosophical Society for itself and branches in America, Europ and elsewhere, hereby recognize

---

करके प्रार्थी हैं कि आप उनके हृदयों को प्रकाशित करें। उनके आचरण की साहसिकता ने सर्वसाधारण के ध्यान को उनकी ओर प्रकृतक्रमानुसार खींचा तथा प्रभावान्वित जन व समाचार-पत्र जिनका सांसारिक लाभ वा स्वकीय परम्परागत मत ईसाई धर्म्म के साथ सम्बद्ध है उनकी निन्दा करने लगे।

हमको नास्तिक, म्लेच्छ और ख्रिष्टीय धर्म्म विरोधी कहा गया है। हमें न केवल नवयुवक और उत्साही पुरुषों की ही सहायता की आवश्यकता है, किन्तु उन लोगों की भी जो सुधी और पूजनीय हैं। इस कारण हम आपके चरणों में उसी भाव से आते हैं जिस भाव से कि पुत्र पिता के चरणों में जाते हैं और कहते हैं कि हे गुरो ! हमारी ओर देखिये और हमको बतलाइये कि हमें क्या करना चाहिये। हमको अपनी शिक्षा और सहायता दीजिये। देखिये, हम आपके समीप गर्व के साथ नहीं, किन्तु नम्रता के साथ आते हैं, और हम आपकी शिक्षा को मानने के लिये और अपना कर्तव्य पूरा करने के लिये जैसा कि हमको बताया जावे हम उद्यत हैं।"

(ह०) हेनरी एस० अलकाट
प्रधान थियासोफिकल सोसाइटी —(अनुवादक)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Swami Dayanand Saraswati, Pandit, Founder of Arya Samaj, as its lawful Director or Chief.

Awaiting the signification of your approval and any instructions that you may be pleased to give.""

I am, honoured Sir, by order of Council.

Respectfully yours
(Sd.)AUGUSTUS GUSTAM,
Recording Secretary.

अब थियासोफिकल सोसाइटी का आदिम वृत्तान्त पाठक वर्ग कुछ समक्ष सकेंगे। स्वामी दयानन्द जब पूर्वोक्त सभा के आचार्य रूप से स्वीकृत हुए, अधिनायकरूप से परिगणित हुए, और जब वह आर्यसमाज की अंगीभूत संस्था होकर परिगृहीत हुई, तब इसको विशेष रूप से करने की आवश्यकता

"थियासोफिकल सोसाइटी, न्यूयार्क मई २२, सन् १८७८ ई०।
सेवा में प्रधान आर्यसमाज—

माननीय महोदय! आपको विनयपूर्वक सूचना दी जाती है कि थियासोफिकल सोसाइटी की कौन्सिल के एक अधिवेशन में, जो न्यूयार्क में २२ मई १८७८ को सामयिक प्रधान के सभापतित्व में संघटित हुआ ए० वाइल्डर साहब उपसभापति के प्रस्ताव और पत्रव्यवहारकर्त्ता मन्त्री एच० पी० ब्लेवट्स्की के अनुमोदन पर सर्वसम्मति से निर्धारित हुआ कि यह सभा आर्यसमाज के इस प्रस्ताव को कि सभा उक्त समाज के साथ मिल जावे और इस सभा का नाम परिवर्तित करके "भारत वर्षीय आर्यसमाज की थियासोफिकल "सोसाइटी" रक्खा जावे स्वीकार करती है।

यह भी निश्चय हुआ कि थियासोफिकल सोसाइटी अपनी और अपनी शाखाओं की ओर से जो अमेरिका, यूरोप और अन्य प्रदेशों में हैं स्वामी दयानन्द सरस्वती पण्डित, संस्थापक आर्यसमाज को अपना नियमानुकूल आचार्य वा अधिनायक मानती है।

आप की स्वीकारी की सूचना और किन्हीं आज्ञाओं की जो आप कृपा पूर्वक देवें प्रतीक्षा करता हुआ।"

मैं हूं, माननीय महोदय, कौंसिल की आज्ञानुसार

आपका
(ह०) आगस्टस गस्टम
रिकार्डिंग सेक्रेटरी—(अनुवादक)

---

‡Ibid. इस अंश का मर्म यह है—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नहीं है कि थियासोफिकल सोसाइटी के साथ स्वामी दयानन्द का कितना घनिष्ठ सम्बन्ध था। फिर इसमें आश्चर्य क्या है कर्नल और मैडल भारत क्षेत्र में स्वामी जी के नाम से ही परिचित हुए, और स्वामी जी के दर्शनाकांक्षी होकर वह सहारनपुर में प्रतीक्षा कर रहे थे। अस्तु। कर्नल और मैडम को संग लेकर स्वामी जी सहारनपुर से मेरठ आये। मेरठ में उनके रहने के लिये स्वतन्त्र प्रबन्ध हो गया। मई मास की पांचवीं तारीख को कर्नल अलकाट ने छेदीलाल की कोठी में एक वक्तृता दी। उसके पश्चात् दो दिन तक कर्नल और मैडम आर्यावर्त्त की धर्मोन्नति के सम्बन्ध में दयानन्द के साथ बात-चीत करते रहे। आर्यों की योग विद्या विषय में वे दोनों ही नितान्त कौतूहलाक्रान्त थे। इस कारण उन्होंने योग और योगैश्वर्य्य सम्बन्ध में स्वामी जी से बहुत से प्रश्न किये। इस प्रकार कई एक दिन स्वामी जी के सान्निध्य-सुख का सम्भोग करके और किसी-किसी विषय में विगतसंशय होकर कर्नल और मैडम मेरठ से चले गये। उनके चले जाने पर दयानन्द मेरठ में थोड़े दिन तक रहे, परन्तु उन दिनों में उन्होंने कोई व्याख्यान या वक्तृता नहीं दी। फलतः अलकाट और ब्लेवट्स्की के साथ वार्त्तालाप और विचार के भिन्न इस यात्रा का मेरठ में और कोई विशेष फल नहीं हुआ।

इसके पश्चात् दयानन्द मेरठ से मुरादाबाद होते हुए कानपुर चले गये। कानपुर में राजा जयकृष्णदास के गृह पर ठहर कर एक व्याख्यान दिया। इसके पश्चात् इलाहाबाद, मिरजापुर और दानापुर प्रभृति स्थानों में भ्रमण करके काशी जा पहुंचे। दयानन्द इससे पहले काशी में छः वार आये थे। इसलिये इस वार उनका काशी में सातवीं वार आगमन था। उन्होंने इस वार आकर भी वहां के पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ करने का विज्ञापन दिया। इससे पहले काशी में जितनी वार आये थे उतनी ही वार उन्होंने पूर्वोक्त अभिप्राय का विज्ञापन दिया था, क्योंकि काशी के पण्डितों के साथ, विशेषकर पण्डित पुङ्गव नाम से प्रसिद्ध बालशास्त्री और विशुद्धानन्द स्वामी के साथ, एक बार शास्त्रीय संग्राम करने की स्वामी जी की बड़ी अभिलाषा थी। यद्यपि पहिले शास्त्रार्थ के समय बालशास्त्री और विशुद्धानन्द दयानन्द के सामने आये थे, यद्यपि उन्होंने दयानन्द के सामने कोई-कोई शास्त्रीय कथा भी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उत्थापित की थी, तथापि उस वार के शास्त्रार्थ को किसी अर्थ में भी शास्त्रार्थ का नाम नहीं दे सकते हैं। पक्षान्तर में वह "काशी का कोलाहल" इन शब्दों से ही अभिहित होने के योग्य है। इसलिये इस यात्रा में भी आकर शास्त्रार्थ का विज्ञापन देना स्वामी जी के लिये अत्यन्त आवश्यक था। किन्तु आश्चर्य है कि इस बार भी काशी का कोई पण्डित दयानन्द के सामने नहीं आया यहां तक कि जिन लोगों को उस विज्ञापन में विशिष्ट भाव से आहूत किया था, उनमें से क्या विशुद्धानन्द क्या बालशास्त्री कोई भी नहीं आये। तब राजा शिवप्रसाद नामक एक वैश्य सन्तान वाराणसी के गौरव की रक्षा करने के लिये खड़े हुए। उन्होंने स्वामी जी के मन्तव्यामन्तव्य को शास्त्र विरुद्ध सिद्ध करने के उद्देश्य से 'प्रथम निवेदन' नामक एक पुस्तिका प्रकाशित की। इस जगह यह कहना अत्यन्त ही आवश्यक है कि राजा शिवप्रसाद ने स्वामी विशुद्धानन्द और 'पण्डित बालशास्त्री की उकसाहट और प्रेरणा से ही इस काम में हाथ डाला था। केवल यही नहीं अनेक लोगों का यह विश्वास है कि पूर्वोक्त पुस्तिका भी या तो शास्त्री जी ने या स्वामी जी ने ही लिख कर दी थी। क्योंकि आर्य्य-शास्त्र में जिस प्रकार की भूयोदर्शिता रहने से किंवा वेदादि ग्रन्थों में जिस प्रकार व्युत्पन्न होने से दयानन्द सरस्वती सरीखे दिग्विजयी पण्डित के साथ मनुष्य विचारक्षम हो सकता था उनमें से राजा शिवप्रसाद में कुछ भी नहीं था। अस्तु। दयानन्द 'प्रथम निवेदन' के खण्डन के लिये शीघ्र ही उद्यत हो गये और उनके प्रतिवाद में 'भ्रमोच्छेदन' नाम की पुस्तक प्रकाशित की।

जिस समय स्वामी जी राजा शिवप्रसाद के भ्रमोच्छेदनादि कार्य में इस प्रकार लगे हुए थे, उसी समय में काशी के बंगाली टोला के स्कूल में एक वक्तृता देने के लिये विज्ञापन दिया गया। उस वक्तृता का दिन २० दिसम्बर नियत किया गया था। स्वामी जी नियत समय पर वक्तृता के स्थान में उपस्थित हुए; परन्तु उपस्थित होते ही मजिस्ट्रेट का हस्ताक्षरयुक्त एक आज्ञा-पत्र उन्हें मिला। उस आज्ञापत्र में लिखा हुआ था कि काशी में स्वामी दयानन्द की वक्तृता एकदम बन्द की जाती है। उस आज्ञापत्र को पढ़ कर स्वामी जी वहुत कुछ विस्मयान्वित हुए, परन्तु निरुद्यम नहीं हो गये। उन्होंने उस अयथा और अप्रत्याशित आदेश के प्रतिकार के लिये पश्चिमोत्तर प्रदेश (वर्तमान संयुक्त प्रान्त) के छोटे लाट के पास निवेदन करने का उद्योग करना

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आरम्भ किया। फलतः मजिस्ट्रेट वाल साहब के इस व्यापार से काशी के सुशिक्षित व्यक्तिमात्र ने विरक्ति प्रकाश की; यहां तक कि उपस्थित घटना के सम्बन्ध में पायोनियर पत्र में भी कुछ समय तक लिखापढ़ी होने लगी। एक सुलेखक व्यक्ति ने इस विषय पर "गवर्नमेण्ट का मूर्त्तिपूजा का समर्थन" शीर्षक देकर पायोनियर पत्र में एक लेख लिखा था। हम यहां उस लेख का कुछ अंश उद्धृत करते हैं :—

"With irresistible logic and fiery eloquence he preached, like a second Luther, against the abuses which in the course of time had loaded down and corrupted a once grand faith. He touched the heart of young India by painting the faded glories of the ancient Aryavart, and biding them be worthy of their ancestors. He was not a political agitator stirring up edition. Quite the contrary; for he told his audiences that the paramount power was, despite all that could justly be brought against it, the friend of India, as it guaranteed the free discussion of religious questions, and made it possible for him and his followers to worship the one God of Veda. In a word, the tendency of the great man's work was all in the right direction, and likely to prove a blessing for his countary and countarymen. This man was Pundit Dayanand Syraswati Swamy, founder of the Arya Samaj.........

"At last he came to Benares to attack orthodoxy in its stronghold. He issued a handbill announcing his arrival, and challenged the best Pundits of the place to publicity discuss the questions above enumerated. The two greatest of them, whose rank as Vedic expositors was universally acknowledged, he specially asked to meet him, well knowing that if he vanquished them, idol-worship would have a short lease of life. But they made no response. If he was wrong, here was their chance to confute him; a defeat of so audacious an assailant would shake this growing reform movement into bits, and fasten tighter the slipping hold of the Brahmins upon the native public. It would be doubly dramatic if effected at holy Benares, within whose sacred precints this iconoclast had

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

dared to set up his altar to the one God. But they made no sign, and so the Swamy, no more patient a man than our Luther, gave notice that, on the evening of Saturday, December 20th, he would address the public at the Bengali School House. Colonel Olcott, the American Theosophist, an ally of the Swamy's within certain stated limits, was announced to speak on behalf of his own Society at the same time and place. These two attraction naturally drew a crowd, of whom at best, as many came to hear the Swamy as the other lecturer. On reaching the School House the Swamy was served with a written notice that Mr. Wall, the magistrate forbade his engaging in any religious discussions in Benares. The pretext taken was that when Swamy spoke here some ten or a dozen years ago, there had been a disturbance by the orthodox party, and his re-appearance at this time might again cause a breach of the peace. I have been told that Mr. Wall, in this instance, suffered himself to be influenced by the orthodox Pundits, in other words, to be made their cat's paw."*

इस उद्धृत अंग्रेजी अंश का मर्म यह है :—"वह अकाट्य तर्क और अग्निस्राविणी वाग्मिता के साथ, द्वितीय लूथर के समान, उन दूषणों के विरुद्ध प्रचार करता था जिन्होंने कालान्तर में पूर्व काल में उच्चपदस्थ धर्म्म को भारावनत और दूषित कर दिया है। वह, प्राचीन आर्यावर्त्त की क्षीण महिमा का चित्र खींच-खींच कर नवयुवक भारतवासियों के हृदयों को आकर्षित करके, उनको अपने पूर्व पुरुषाओं के योग्य बनने की प्रेरणा करता था। वह कोई विद्रोह फैलाने वाला राजनैतिक आन्दोलनकारी नहीं था। प्रत्युत वह इसके विरुद्ध था; वह अपने श्रोतृवृन्द को कहा करता था कि गवर्नमेण्ट, उन सब बातों के वर्तमान होते हुए भी जो कि न्यायपूर्वक उसके विरुद्ध कहीं जा सकती हैं, भारतवर्ष की हिताकांक्षी है, क्योंकि उसने धार्मिक प्रश्नों के वाद-विवाद की स्वतन्त्रता दे रक्खी है और इस प्रकार मेरे तथा मेरे अनुयायियों के लिये वेदवर्णित एक परमात्मा की उपासना करनी सम्भावित कर दी है संक्षेपतः इस महापुरुष के कार्य का झुकाव उचित ओर ही था और अधिकांश में वह

*The Pioneer 30th December 1879.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उसके देश और देशवासियों के लिये मङ्गलकारी प्रमाणित होने की सम्भावना रखता था। यह व्यक्ति आर्यसमाज का संस्थापक पण्डित दयानन्द-सरस्वती स्वामी था। ... ...

"अन्त में वह मूर्तिपूजा पर उसके ही गढ़ में आक्रमण करने के उद्देश्य से बनारस में आया। अपने आगमन की सूचना देने के लिये उसने विज्ञापन प्रकाशित किये और स्थानिक सर्वश्रेष्ठ पण्डितों को आहूत किया कि वे ऊपर गिनाये हुए प्रश्नों पर सर्वसाधारण के सामने शास्त्रार्थ करें। उनमें से दो सबसे बड़े पण्डितों को, जिनको वेद विख्याता की पदवी सबने प्रदान कर रक्खी थी, उसने विशेषतः विचारार्थ आहूत किया; क्योंकि वह (दयानन्द) भले प्रकार जानता था कि यदि मैं उनको पराजित कर दूंगा तो मूर्तिपूजा का जीवन शीघ्र ही समाप्त हो जायगा। परन्तु उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। यदि उसका मत मिथ्या था तो उसके खण्डन करने का अवसर उसके हस्तगत था। ऐसे साहसिक आक्रमणकारी का पराजय इस बढ़ते हुए सुधार-आन्दोलन के टुकड़े टुकड़े कर देता और देशीय जन—साधारण पर ब्राह्मणों के शिथिल होते हुए बन्धनों को और भी दृढ़ कर देता। इसका प्रभाव द्विगुण होता यदि वह बनारस में ही पराजित किया जाता, जिसकी पवित्र सीमाओं के भीतर मूर्तिपूजा के इस कट्टर विरोधि ने एक परमात्मा की उपासना वेदि स्थापित करने का साहस किया था। किन्तु उन्होंने कुछ भी न किया और इस लिये स्वामी ने, जो हमारे लूथर से अधिक सहिष्णु नहीं था, एक विज्ञापन प्रचारित किया कि शनिवार की सायंकाल को, २० दिसम्बर के दिन, बङ्गाली स्कूल गृह में मेरी वक्तृता होगी। अमेरिकावासी थियासोफिस्ट कर्नल अलकाट के सम्बन्ध में, जो कि परिमित अंश में स्वामी जी के साथी थे, यह विज्ञापित किया गया कि वह उसी स्थान में और उसी समय पर अपनी सोसाइटी के विषय में कथन करेंगे। इन दो कारणों से बहुत से लोग एकत्रित हो गये, जिन में स्वामी जी की वक्तृता सुनने के अभिप्राय से भी उतने ही आये थे जितने दूसरे वक्ता महाशय का कथन सुनने को। स्कूलगृह में पहुंचने पर स्वामी जी को एक लिखी हुई विज्ञप्ति दी गई कि मजिस्ट्रेट वाल साहब बनारस में उन्हें धार्मिक विषय पर विचार करने से रोकते हैं। बहाना यह बतलाया गया था कि लग-भग १०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

या १२ वर्ष पूर्व जब स्वामी जी की यहां वक्तृता हुई थी तो कट्टर-दल ने दङ्गा किया था और उनके यहां पुनः आगमन से इस समय शान्ति भङ्ग का फिर डर है। कि इस घटना में मिस्टरवाल ने अपने ऊपर कट्टर पण्डितों का प्रभाव परतन्त्र हो जाने दिया अर्थात् वह उनके हाथ में हानि पहुंचाने के यन्त्र बन गये।" (अनुवादक)

वस्तुतः दयानन्द राजविद्रोही नहीं थे। वह किसी प्रकार राजनैतिक आन्दोलन करके प्रजावर्ग को उत्तेजित नहीं करते थे, प्रत्युत अंग्रेजों के अधीन रहकर भारतीय प्रजागण धर्म्मसम्बन्ध में स्वतन्त्र रह कर अपने-अपने मन्तव्यों को प्रकट कर सकते हैं—यह कथा समय-समय पर कह कर वह गवर्नमेण्ट की बहुत प्रशंसा करते थे। इसलिये स्वामी जी के सम्बन्ध में वालसाहब के उपर्युक्त व्यवहार को अत्यन्त अदूरदर्शिता का परिचायक कहना पड़ेगा। अस्तु। परन्तु वालसाहब को थोड़े ही समय पीछे अपनी अदूरदर्शिता विदित हो गई थी और उन्होंने स्वामी जी को वक्तृता देने की आज्ञा देकर पहले अपराध का प्रायश्चित कर दिया था। इस विषय में पाठकों का संशय निवारण करने के लिये हम एक और पत्र पायोनियर से उद्धृत करते हैं। पत्र लेखक पायोनियर के सम्पादक को सम्बोधन करके कहते हैं :—

"Your strictures on the proceedings of Mr. Wall, the collector of Benares, relating to Pandit Dayanand Saraswati, the well-known vedic scholar, do you infinite credit as an impartial journalist; but permit me to bring to your notice the extenuating circumstances which underlie the matter. Mr. Wall was at Chakia (the shooting-box of the Maharaja of Benares) when the proposed lecture was to be delivered by the Pandit. Some influential native gentlemen, I have reason to believe, misrepresented to him the nature of the Pundit's preachings, and got an order issued, calling upon Dayanand "to desist from giving public lectures at present." Be it spoken, in justice to the collecter, that no sooner was he aware of the injustice he did to the Pandit, than he immediately sent a counter order, giving him full liberty to preach his sermons. Mr. Wall may have been guilty of a little indiscretion; but his action, as far as I know, was not a deliberate one."*

*The Pioneer 6th January 1880.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इसका अर्थ यही है कि पूर्वोक्त नियम विरुद्ध आज्ञा देते समय वालसाहब काशी में नहीं थे। वह उस समय चकिया नामक स्थान में थे। चकिया काशी के समीप और काशी के महाराज का प्यारा और प्रसिद्ध मृगयास्थल है। चकिया में रहने के समय काशी में सम्भ्रान्त व्यक्तियों ने‡ वाल साहब के पास जाकर स्वामी जी के व्याख्यानों के विषय में कहा था, और उनको यह समझा दिया था कि स्वामी जी के व्याख्यानों से प्रथमवार के समान इस वार भी काशी में घोर अशान्ति उपस्थित होगी। यह कहना बाहुल्यमात्र है कि वाल साहब ने ऐसा समझ कर ही पूर्वोक्त आज्ञा दी थी।

———

‡ जो लोग वाल साहब के पास स्वामी जी के विरुद्ध कहने गये थे राजा शिवप्रसाद उनके अग्रणी थे। और यह भी सुना जाता है कि शिवप्रसाद के इस कार्य्य के पीछे पण्डित बालशास्त्री और विशुद्धानन्द की भी उत्तेजना और उपदेश था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बारहवां अध्याय

आगरा नगर में व्याख्यान, आर्कविशप के साथ बात चीत, प्रश्नमीमांसा के लिये आह्वान पत्र, नारायण-दास सेठ की विपक्षता, आगरा मे आर्यसमाज स्थापन, गोरक्षणी सभा का स्थापन, कलकत्ते के सिनेटहाल में महासभा, तृतीय वार अजमेर की यात्रा, बम्वई की यात्रा और पादरी कुकको शास्त्रार्थ के लिये आह्वान, थियासोफिस्टों के मन्तव्यामन्तव्य का प्रतिवाद, मोनियर विलियम्स के साथ साक्षात्, महाराणा के साथ धर्म्मा-लोचना, जोधपुर की यात्रा, जोधपुराधीश का सौजन्य स्वामी जी की पीड़ा, अजमेर में आना और देहान्त ॥

इस बार वाराणसी में स्वामी जी प्रायः छः मास अतिवाहित करके आगरा आये। २५ नवम्बर को आगरा पहुंच कर २८ से व्याख्यान आरम्भ किये। आगरा के मुफीदआम स्कूल में उनकी वक्तृतायें होने लगीं। उनकी वक्तृता २२ दिसम्बर तक अव्याहत रूप से चलती रहीं। इसके बीच में एक दिन अर्थात् १२ दिसम्बर को स्थानीय रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के अधिनायक आर्कविशप से निमन्त्रित होकर वह उनके भजनालय में गये। वेदों की निभ्रान्तता के विषय में स्वामी जी के साथ बिशप साहब की अनेक बातें हुई। विशप साहब के साथ बातचीत समाप्त होने पर दयानन्द ने उनसे पूछा—"अच्छा क्या आप बता सकते हैं कि आप तो सब के पाप क्षमा करते हैं, किन्तु आप के पाप कौन क्षमा करेगा ?" इसके उत्तर में बिशप साहब ने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जो कुछ कहा उससे स्वामी जी का सन्तोष नहीं हुआ। उसके पश्चात् स्वामी दयानन्द विशप साहब के साथ उनके भजनालय प्रभृति का दर्शन करके चले आये।

यद्यपि दयानन्द प्रत्येक वक्तृता के अन्त में प्रश्न पूछने के लिये आध घण्टे का समय रखते थे, परन्तु उससे सब को सब बातों की जिज्ञासा करने में सुभीता होता न देख कर उन्होंने एक आह्वान पत्र प्रकाशित किया। उस आह्वान पत्र का मर्म यही था कि २२ दिसम्बर के पश्चात् निर्दिष्ट दश दिनों के भीतर हरेक व्यक्ति स्वामी जी के पास आकर चाहे जो प्रश्न पूछ सकता है। तदनुसार आगरे के पण्डितगण परामर्श करने के लिए एक दो वार एकत्रित तो हुए, परन्तु उन में से किसी ने दयानन्द के पास आकर कोई बात नहीं पूछी। तब मथुरा के पूर्वोल्लिखित सेठ वंशोत्पन्न नारायणदास ने आकर स्वामी जी के पास एक प्रस्ताव किया। नारायणदास का अभिप्राय यह था कि उसके वृन्दावनस्थ मन्दिर के एक संन्यासी के साथ स्वामी जी को शास्त्रार्थ करना होगा। वह संन्यासी आचारी सम्प्रदाय के थे, परन्तु उनका पाण्डित्य जैसा प्रगाढ वा प्रसिद्ध नहीं था। यहां तक शास्त्रज्ञता के सम्बन्ध में वह अपने पूर्ववर्त्ती रङ्गाचारी के समान भी नहीं थे। इसलिये नारायणदास के प्रस्ताव को स्वीकार करना स्वामी जी को युक्तिसङ्गत प्रतीत नहीं हुआ; प्रत्युत नारायणदास से यही अनुरोध किया कि वह संन्यासी ही आगरे में आकर शास्त्रार्थ कर सकते हैं। परन्तु नारायणदास इससे सहमत नहीं हुए। तब किसी-किसी ने आगरा और मथुरा के मध्यवर्ती फारा नामक स्थान का निर्देश किया। परन्तु वहां जाकर शास्त्रार्थ करना स्वामी जी के लिये आपत्ति का कारण न होने पर भी उनके साथियों को अत्यन्त आपत्तिकर हुआ। उन के आपत्ति करने का विशेष कारण भी था; क्योंकि कई वर्ष पहले पूर्वोल्लिखित रङ्गाचारी के साथ स्वामी के शास्त्रार्थ की बात उठने पर ही मथुरा के चौबों ने जिस प्रकार के उपद्रव करने का उद्योग किया था; उससे उपस्थित स्थान में मथुरा का सामीप्य भी उनके विचार में निरापद् नहीं था। इसलिये फारा में जाकर शास्त्रार्थ करने में भी दयानन्द सहमत नहीं हुए।

इस घटना से नारायणदास क्रुद्ध हो गये। वह विद्वेषपरवश होकर स्वामी जी की प्रतिपत्ति के नाश का उद्योग करने लगे। अन्त में नारायण-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रामसुवा शास्त्री नामक एक पण्डित के साथ कलकत्ता आये, और महामहोपाध्याय पण्डित महेशचन्द्र न्यायरत्न प्रभृति के साथ परामर्श करके यहाँ के सिनेट हाल में एक महती सभा आहूत की । वह सभा २२ जनवरी सन् १८८१ ईस्वी को आहूत हुई । उस सभा में नवद्वीप, भाटहाड़ा और विक्रमपुर प्रभृति स्थानों के प्रायः तीन सौ पण्डित आये । कलकत्ते के बहुत से सम्भ्रान्त व्यक्ति और कई एक राजा महाराजा भी सभाक्षेत्र में उपस्थित हुए । अन्त में सभा में आये हुए पण्डितवर्ग के परामर्श के अनुसार स्थिर हुआ कि स्वामी दयानन्द के समस्त सिद्धान्त हिन्दू शास्त्र के विरुद्ध हैं । उस समय रामसुवा शास्त्री ने स्वप्रणीत 'दयानन्दकण्टोद्धारक' नामक पुस्तक का सभास्थल में पाठ किया। उसे सुनकर सभा में बैठे हुए सब लोग शास्त्री महाशय की प्रशंसा करने लगे और 'दयानन्दकण्टकोद्धारक' वास्तव में दयानन्द कण्टकोद्धारक हुई है, पण्डितगण ने यह कर अपने-अपने हस्ताक्षर कर दिये ।

इस ओर आगरा नगर में भी दयानन्द के विरुद्ध आन्दोलन होने लगा । चतुर्भुज शास्त्री नामक एक व्यक्ति ने दयानन्द की निन्दापरक वक्तृता आरम्भ की । यह कहना बाहुल्य है कि स्वामीजी का निन्दा-प्रचार चतुर्भुज की उदर-पूर्ति के पक्ष में उपायस्वरूप हो गया था । इस कारण चतुर्भुज प्रायः सब ही स्थानों में स्वामी जी के पीछे-पीछे जाता था । किसी-किसी स्थान में अग्रवर्त्ती होकर भी वहां के लोगों को स्वामी जी के प्रतिकूल उत्तेजित करता था । अस्तु । दयानन्द आगरे में केवल शास्त्र-व्याख्या में ही प्रवृत्ति नहीं रहे । उन्होंने वहां एक अति शुभदायक कार्य की सूचना करके अपने को आर्यावर्त्त का सच्चा हितैषी सिद्ध किया । स्वामी जी ने सन् १८८१ के जनवरी मास की १२ वीं तारीख को गोरक्षिणी सभा स्थापित करके इस देश में गोरक्षा के पथ को प्रशस्ततर कर दिया* । उसके पश्चात् दयानन्द के व्याख्यान पुनर्वार आरम्भ

---

* इस देश में स्वामी दयानन्द ही गोरक्षा विषयक आन्दोलन के प्रवर्त्तक हुए । कई वर्ष पहले भारत के पश्चिमोत्तर में गोरक्षा पर जो घोर आन्दोलन उपस्थित हुआ था, उसके सम्बन्ध में कई अंग्रेजों ने भी स्वामी जी को ही गोरक्षासंक्रान्त आन्दोलन का प्रवर्तक स्वीकार किया था ।

(वस्तुतः स्वामी जी का गोरक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव किसी आन्दोलन का उत्पादक वा उत्तेजक नहीं हुआ, क्योंकि संयुक्त प्रान्त के जिस भाग में यह

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हो गये। वह २६ जनवरी से यमुनादास के गृह पर व्याख्यान देने लगे। लोगों की संख्या पहले के ही समान होने लगी। श्रोतृवर्ग का उत्साह और आग्रह पूर्व के समान ही रहा। व्याख्यान सुन कर आगरे के लोग उत्साहित हो गये। वह वैदिक धर्म्म के पवित्र स्रोत को आगरा नगर में अव्याहत रखने के लिये आर्यसमाज के स्थापन पर सङ्कल्पारूढ़ हो गये। तदनुसार उन्होंने शीघ्र ही आगरे में एक आर्यसमाज स्थापित कर दिया। कुछ दिन पीछे स्वामी जी ने आगरा से विदा होने का उद्योग किया, और १० वीं मार्च की रात्रि को दश बजे आगरा परित्याग करके चले गये।

दयानन्द आगरा से भरतपुर होकर सम्भवतः अजमेर गये। उस समय मई मास का आरम्भ था। अजमेर जाकर सेठ फतहमल की कोठरी में रहे। इस यात्रा में दो मास से कुछ अधिक रह कर प्रायः ४३ व्याख्यान दिये। इससे पहले ही अजमेर में आर्यसमाज स्थापित हो गया था। इसलिये स्वामी जी के ये सब व्याख्यान वहां के आर्यसमाज के उद्योग से ही हुए। उसके पश्चात् स्वामी जी ने अजमेर से प्रस्थान करके नाना स्थानों में भ्रमण किया और इन्दौर होते हुए सन् १८८१ में २९ दिसम्बर के दिन बम्बई में जाकर दूसरी बार उपस्थित हुए*। बम्बई में उपस्थित होकर उन्होंने प्रथम वहां

आन्दोलन उठा था, वहां न तो आर्यसमाज का ही विस्तृत प्रचार था और न स्वामी जी की पद्धति के अनुकूल ही गोरक्षिणी सभाओं की स्थापना हुई थी। स्वामी जी ने जो गोरक्षा का प्रस्ताव किया था वह किसी राजनैतिक दृष्टि से वा किसी विधर्म पर आक्रमण करने के अभिप्राय से नहीं किया था। वह केवल गो जैसे हितकारी और उपकारी पशु के वध से जो भारत जैसे कृषि प्रधान देश की हानि हो रही है उसको रोकने के उद्देश से ही किया गया था; जैसा स्वामी जी रचित गोकरुणानिधि पुस्तिका के पाठ करने से स्पष्टतया विदित हो सकता है। स्वामी जी ने गोरक्षिणी सभाओं की निर्माण-विधि में यह नियम भी रक्खा था कि कोई राजद्रोही पुरुष उनका सभासद् नहीं हो सकेगा। इससे स्वामी जी की पारदर्शिता और राजहिताकांक्षा का परिचय मिलता है।" इसलिये यह कहना युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता कि स्वामी जी गोरक्षा-विषयक किसी अनुचित और राजनैतिक आन्दोलन के प्रवर्तक थे। (अनुवादक)

*Our esteemed friend Dayanand Saraswati Swami arrived at Bombay on the 29th Ultimo from Indore and is putting up

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के आर्यसमाज की उन्नति में मनोनिवेश किया। बम्बई के आर्यसमाज के लिये एक मन्दिर बनाने का उद्योग हुआ और उसे स्थायी भित्ति पर स्थापित करने के उद्देश से ट्रस्टी प्रभृति नियत होने लगे। आर्यसमाज के इतिहास की आलोचना करने से बम्बई के समाज को ही शीर्ष-स्थानीय स्वीकार करना होगा, क्योंकि बम्बई का आर्यसमाज ही आदि-समाज+ है। बोध होता है इसीलिये स्वामी दयानन्द उसके स्थायित्व साधन में इतने सचेष्ट हुए थे। अस्तु। इसके पश्चात् स्वामीजी को एक और गुरुतर कार्य में हस्त-क्षेप करना पड़ा। वह कार्य सम्प्रदाय विशेष के पक्ष में बहुत कुछ अप्रीतिकर था, तथापि सत्य के अनुरोध से उसे करने पर वह बाध्य हुए। हमने यह पहले ही कह दिया है कि थियासोफिस्ट सम्प्रदाय के लोगों ने स्वामी दयानन्द को ही अपना आचार्य ग्रहण कर लिया था, और उनके प्रवर्त्तक स्वामी जी की शक्ति और सहायता का नाम लेकर ही भारतभूमि में अपनी भित्ति के स्थापन में समर्थ हुए थे। और हमने पाठकों के सामने यह भी प्रतिपादित कर दिया है कि थियासोफिकल सोसाइटी आर्यसमाज की शाखा के नाम से ही परिचित होती थी, और मतामत के सम्बन्ध में थियासोफिकल सोसाइटी आर्यसमाज के साथ एकीभूत थी। परन्तु पूर्वोक्त सोसाइटी प्रथमतः जिस भाव से प्रबुद्ध हुई थी, जिस भाव से प्रणोदित होकर स्वामी दयानन्द के पैरों में बैठ कर परमार्थ तत्त्व की शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रतिश्रुत हुई थी, और जिस भाव से प्रेरित होकर उसके अधिनायकगण ने जिज्ञासुओं के

---

at Walkeshwer. He is looking in robust health. It is expected that he will remain in town two or three months, to expound his views on the Vedas, and place the Bombay Arya Samaj on a stable footing. The Theosophist 1882 January, P. 105.

इस अंश का अनुवाद यह है—"हमारे माननीय मित्र दयानन्द सरस्वती स्वामी गत मास की २९ वीं तारीख को इन्दौर से बम्बई में पधारे और बालकेश्वर में ठहरे हुए हैं। उनकी शारीरिक दशा उत्तम है। यह आशा की जाती है कि वह नगर में वेदों पर अपना मत प्रकाश करने और बम्बई आर्य-समाज को दृढभित्ति पर स्थापित करने के उद्देश्य से दो या तीन मास ठहरेंगे।" थियासोफिस्ट १८८२ जनवरी पृष्ठ १०५। (अनुवादक)

+पृष्ठ २५१ पर अनुवादक का नोट देखिये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समान नितान्त विनीत चित्त से आकर भारतभूमि में प्रवेश किया था, शोक है कि, समय बीतने पर उनका वह भाव रक्षित नहीं रहा, अर्थात् वे शिक्षार्थी के समान आये हुए शीघ्र ही शिक्षक हो गये, जिज्ञासुओं के भाव से प्रविष्ट हुए-हुए अचिरेण उपदेष्टा के उच्चतर पद पर आरूढ हो गये, और भारत के योग क्षेत्र में थोड़े ही दिन निवास करके अपने को योगी और योगाचार्य नाम से परिचित करने लगे। इन सब कारणों से थियासोफिस्ट सम्प्रदाय के साथ सर्वतोभावेन सम्बन्ध तोड़ना ही स्वामी जी कर्तव्य समझ रहे थे। इसके अनुसार बम्बई नगर में एक विराट् सभा आहूत हुई। दयानन्द ने उस सभा-क्षेत्र में खड़े होकर थियासोफिकल सोसाइटी का क्रमबद्ध इतिहास वर्णन किया और अन्त में यह बात भी स्पष्ट शब्दों में परिघोषित की कि आर्य-समाज संक्रान्त आन्दोलन के साथ पूर्वोक्त सोसाइटी का किसी रूप से भी सम्बन्ध नहीं रह सकता। इस प्रकार थियासोफिकल सोसाइटी के साथ आर्य समाज का सम्पर्क छिन्न-भिन्न हो गया।

अमेरिका के विख्यात प्रचारक जोजफ कुक साहब उस समय बम्बई नगर में ठहरे हुए थे। वह ईसाई धर्म्म की निर्भ्रान्तता प्रतिपादन करने के उद्देश से भारत क्षेत्र में आये थे और नाना स्थानों में व्याख्यान और तर्क वितर्क करते हुए अन्त में बम्बई जाकर समर-घोषणा कर रहे थे। स्वामी जी उनके समरोद्देश्य को जान कर कुछ विस्मित हुए और अपने सामने ईसाई धर्म्म की निर्भ्रान्तता और अपौरुषेयता सिद्ध करने के लिए कुक साहब को बिना विलम्ब ही आहूत किया। परन्तु कुक साहब स्वामी जी के आह्वान पर कर्ण पात न करके ही चले गये, उसके पश्चात् गोरक्षा विषयक आन्दोलन उत्था-पित हुआ। बम्बई आर्यसमाज के उद्योग से एक महासभा का अधिवेशन हुआ। उस महासभा में स्वामी दयानन्द ने गोरक्षा की आवश्यकता पर एक तेजस्विनी वक्तृता दी। उस वक्तृता को सुन कर बम्बई के निवासी स्तम्भित हो गये; यहाँ तक कि उस वक्तृता ने ही उस प्रदेश में गोरक्षा विषयक आन्दो लन का सूत्रपात किया। उस समय इंग्लैण्ड के विख्यात पण्डित मोनियर विलि यम्स् बम्बई में आये हुए थे। वह दयानन्द के साथ बातचीत करने की अभि-लाषा से एक दिन वहाँ के आर्यसमाज में उपस्थित हुए। दयानन्द की अत्यन्त सरल और मधुर संस्कृत व्याख्या को सुनकर मोनियर विलियम्स्

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विमोहित हो गये, और व्याख्या के अन्त में उनके साथ वार्त्तालाप करके सन्तुष्ट होकर चले गये। इस प्रकार बम्बई में जेष्ठ मास पर्यंन्त अतिवाहित करके स्वामी जी ने खण्डवा की ओर यात्रा की।

उसके पश्चात् खण्डवा और मध्य भारत के अन्यान्य स्थानों में भ्रमण करके आषाढ के अन्तिम भाग में महाराणा से निमन्त्रित होकर दयानन्द उदयपुर आये। सम्भ्रम और मर्यादा विषय में उदयपुर राजस्थान में अग्रणी है। इसी कारण राजस्थान के भीतर उदयपुर के महाराणा चिरकाल से सम्मानित हैं। किन्तु महाराणा सज्जनसिंह केवल सम्मानित ही नहीं थे, प्रत्युत सच्चरित्रता और सदाशयता के लिए वह भारतीय राजन्यवर्ग के भीतर एक आदर्श स्थानीय थे। वास्तव में महाराणा सज्जनसिंह सज्जनता की प्रति मूर्ति थे। स्वामी दयानन्द के पदार्पण से उदयपुर के धन्य भाग हैं—यह कह कर वह जैसे अतिशय हृष्ट हुए, वैसे ही उनका यथोचित सत्कार करके उन्होंने अपने को कृतार्थ बोध किया। स्वामी जी के ठहरने के लिए महाराणा ने अपना रमणीक उद्यान दे दिया, सेवा के लिए भृत्यादि नियुक्त कर दिये, और जिस से कि उन्हें किसी प्रकार के असुख वा असुविधा का लेशमात्र भी सहन करना न हो, इसके लिये वह स्वयं सयत्न रहे। महाराणा स्वामी जी के सम्मान के लिये प्रथम दिन प्रासाद से उद्यान-वाटिका तक पैदल गये। उदयपुर के सैंकड़ों लोग महाराणा के पीछे २ गये और सबने ही सातिशय भक्ति के भार से अवनत चित्त होकर स्वामी जी को प्रणाम किया।

स्वामी जी ने उन सबको आशीर्वाद दिया, विशेषतः महाराणा को क्षात्र-धर्म्म विषय की शिक्षा देने लगे। उसके पश्चात् उदयपुर में दयानन्द की वक्तृता आरम्भ हुई। वक्तृतास्थल सहस्त्रों मनुष्यों से परिपूर्ण होने लगा। स्वामी दयानन्द के साथ सज्जनसिंह के आलापने धीरे-धीरे आत्मीयता का आकार धारण कर लिया। महाराणा का शास्त्रानुराग उत्तरोत्तर वर्द्धित होने लगा। उन्होंने स्वामी जी से संस्कृत सीखने की अभिलाषा की। प्रायः छः मास में ही महाराणा ने संस्कृत साहित्य में आशातीत अधिकार प्राप्त कर लिया। स्वामी जी ने महाराणा को स्वयं ही मनुस्मृति पढ़ाई। राजाओं के प्रात्यहिक कर्त्तव्य निर्धारण के निमित दयानन्द ने महाराणा को एक दिनचर्य्या लिख दी। महाराणा का दैनिक कार्य उसके अनुसार ही सम्पादित होने लगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वामी जी की शिक्षा और सत्सङ्ग के प्रभाव से महाराणा के बुरे अभ्यास दूर हो गये। उनके प्रासाद में प्रति अपराह्न को प्रायः पापाचारिणी नृत्यकारिणी स्त्रियों का नृत्यगीत हुआ करता था। महाराणा प्रायः वहां उपस्थित हो कर उनका नृत्य आदि देखा करते थे। परन्तु अब उससे विरत हो गये। इसके अतिरिक्त महाराणा की आज्ञा के अनुसार उदयपुर के राजभवन और राजोद्यान में दो यज्ञवेदि निर्मित हुईं और जिससे कि उन दोनों वेदियों में यज्ञ-कार्य नियमित रूप से निर्वाहित हो—इसके लिए प्रबन्ध होने लगा। इन सब कारणों से स्वामी जी के साथ महाराणा का संसर्ग उत्तरोत्तर प्रीतिदायक होने लगा; यहां तक कि दोनों का संसर्ग दोनों के लिए ही अपरिहार्य्य हो गया। एक दिन महाराणा की अस्वस्थता का संवाद सुनकर स्वामी जी ऐसे चिन्तित हुए कि बिना विलम्ब के ही प्रासाद में जाकर उनको देखकर आये।

इसी समय स्वामी जी की परोपकारिणी सभा‡ स्थापित हुई। जिससे कि वह सभा चिरस्थायिनी होकर भारत का कल्याण साधन कर सके—ऐसा यत्न करने में दयानन्द ने त्रुटि नहीं की। उन्होंने उस सभा के लिए एक स्वीकार पत्र प्रस्तुत किया। महाराणा के दरबार में वह स्वीकार पत्र पढ़ा गया और यथा नियम उस पर हस्ताक्षर हुए। दरबार के प्रधान २ तेरह सरदारों ने साक्षी रूप से उस पत्र पर हस्ताक्षर किये, और उदयपुराधीश स्वयं ही उस सभा के प्रधान पद पर प्रतिष्ठित हुए। इस प्रकार परोपकारिणी सभा को स्थापित और महाराणा सज्जनसिंह को उसके प्रधान पद पर प्रतिष्ठित करके स्वामी जी ने शाहपुर की ओर यात्रा की†।

---

‡ परोपकारिणी सभा का प्रधान उद्देश्य भारतवर्ष में वैदिक धर्म्म का प्रचार करना, और नाना उपायों से परोपकार के साधन उपस्थित करना था इसके अतिरिक्त स्वामी जी रचित और अधिकृत जितने ग्रन्थ और धन और यन्त्रालय आदि थे वह सब ही परोपकारिणी सभा की सम्पत्ति परिगणीत की गई। यह सभा २३ सभ्यों से संगठित हुई थी।

---

† उदयपुर से विदा होने के समय महाराणा ने वेदभाष्य आदि की साहाय्य और पाथेय आदि के लिए १२००) रुपये प्रदान किये थे और उसी के साथ पुनर्वार उदयपुर आने के लिए स्वामी जी से बारम्बार अनुरोध किया था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शाहपुर उदयपुर के अन्तर्गत एक करप्रद राज्य है । शाहपुराधीश एक धर्मानुरागी व्यक्ति हैं। जिससे कि स्वामी दयानन्द शाहपुर आकर धर्मान्दोलन उठावें, उन्होंने इसीलिये चेष्टा की थी। उन्होंने स्वामी जी को विशेष अनुनय के साथ बारम्बार निमन्त्रित किया था। इसीलिये दयानन्द शीघ्र ही उदयपुर छोड़ कर गये थे। मार्ग में ३ दिन चित्तौड़ में रहकर मार्च मास की सातवीं तारीख को शाहपुर पहुँचे। शाहपुराधीश ने यथोचित सम्मान और समारोह के साथ स्वामी जी का स्वागत किया। स्वामी जी का व्याख्यान एक अपूर्व सामग्री थी। जो व्यक्ति उनके व्याख्यान को एक बार सुन लेता था। वह विमोहित हुए बिना नहीं रह सकता था। फलतः शाहपुराधिपति स्वामी जी के व्याख्यान को सुन कर विमोहित और विस्मयान्वित हो गये । अधिकन्तु, यह सोच कर कि स्वामी दयानन्द सच-मुच ही आर्यावर्त्त के उद्धार साधन के लिए मर्त्यलोक में आविर्भूत हुए हैं, वह एक साथ विस्मित और आनन्दित हो गये। शाहपुर रहने के समय स्वामी जी के पास जोधपुर से एक निमन्त्रण पत्र आया। वह पत्र स्वर्गीय महाराज जसवतसिंह का लिखा हुआ था। उन्होंने उस में स्वामी जी को जोधपुर पधारने के लिए अत्यन्त अनुरोध प्रकट किया था। इसलिये दयानन्द ने शाहपुर में और काल विलम्ब न करके जोधपुर की ओर यात्रा की।

जोधपुर के मार्ग में स्वामी जी को विशेष क्लेशभोग करना पड़ा प्रबल वृष्टिपात और वायु के प्रचण्ड आघात से उनकी गाड़ी की छत उड़ गई। विशेषकर मार्ग में आश्रय लेने का कोई स्थल भी उन्हें न दीख पड़ा। सुतरां वृष्टि और वायु का क्लेश शहन करते-करते वह अजमेर आकर पहुंचे। स्वामी जी के मार्ग क्लेश की कथा सुन कर अजमेर के सभासद्गण अतिशय दुखित हुए, और उनमें से कोई-कोई मारवाड़ के स्थान और जनमाहात्म्य के सम्बन्ध में नाना कथायें कहने लगे। दयानन्द अजमेर में केवल एक दिन रह कर दूसरे दिन जोधपुर आ पहुँचे। स्वामी जी जोधपुर फैजुल्ला खां के बंगले में जाकर ठहरे। महाराजा उनके आने का समाचार सुनते ही आत्मीय और सदस्यवर्ग के साथ उपस्थित हुए, और स्वामी जी के सामने पांच स्वर्ण मुद्रा और ६५ रुपये उपस्थित करके आप अत्यन्त सम्भ्रम के साथ भूमि में बैठ गये। तब स्वामी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जी ने प्रीति प्रफुल्ल हृदय के साथ महाराजा का हाथ पकड़ कर अपने पास लाकर बिठाया। उसके पश्चात् महाराज ने दयानन्द के साथ कुछ देर तक वार्त्तालाप करके प्रासाद की ओर प्रत्यावर्तन किया। तदनंतर स्वामी जी के ठहरने के लिए एक स्वतंत्र गृह-निर्दिष्ट हो गया और महाराजा की आज्ञानुसार भारप्राप्त भृत्यवर्ग उनकी सेवा के लिये अहरह नियोजित होते रहे। स्वामी जी आनेवालों के साथ धर्म्मवार्त्ता करने लगे। किसी-किसी दिन व्याख्या कार्य में भी प्रवृत्त होते थे। उनकी निर्भीकता, सत्यनिष्ठा और शास्त्रदर्शिता को देख कर जोधपुर के रहने वाले चकित हो गये। उन्होंने व्याख्या प्रसङ्ग में आर्यजाति की उन्नति और अवनति की कथा वर्णन की; वैदिक धर्म्म की शोचनीय विकृति को वर्णन करके वह क्षुण्ण हुए और ब्राह्मणों की वृत्तिच्युति और विशेषकर क्षत्रियों की वर्त्तमान अधोगति को उद्‌घोषित करके अतिशय खेद प्रकट करने लगे। कुसंग और कापुरुषता के संचार से क्षात्रधर्म्म कलंकित हो गया है, अमिताचार और इन्द्रियासक्ति के प्रभाव से क्षात्रवीर्य्य निर्वापित हो गया है * इत्यादि बातों को भी जसवन्तसिंह प्रभृतियों के सामने तीव्रभाव और तीव्रभाषा में वर्णन करने में दयानन्द कुण्ठित नहीं हुए। स्वामी जी की इन तीव्रोक्तियों से घोरतर आन्दोलन उपस्थित हो गया। इससे जोधपुर के अनेक व्यक्ति विचलित हो गये, और कोई-कोई विरक्ति प्रकट करने लगे। किन्तु महाराज के चित्त में एक-एक दो-दो करके चिन्ता का रेखापात होने लगा। इस प्रकार स्वामी जी का जोधपुर में चतुर्थ मास अतिवाहित हो गया।

पञ्चम मास में दयानन्द के ऊपर विपत्ति के ऊपर विपत्ति आने लगी। प्रथमतः उनके आश्रम में चोरी हो गई, जिससे उन्हें ५००) रुपये की क्षति हुई। रुपये रखने का काम रामानन्द ब्रह्मचारी के अधिकार में था, परन्तु उस रात को रामानन्द के असावधान रहने से यह काम हुआ। सब लोगों को यह

---

* स्वामी जी ने क्षत्रिय पुत्र की सिंह से और वीराङ्गणा की कुक्कुरी से तुलना की थी। इसी कारण क्षत्रिय के लिये वेश्यागमन सिंह के साथ कुक्कुरी के समागम की न्याईं स्वभाव-विरुद्ध कर्म और महापाप है— उन्होंने यह भी स्पष्टतया कहा। ऐसा सुना जाता है कि इसी प्रकार की तीव्र तुलनाने यशवन्तसिंह को बहुत कुछ विचलित कर दिया था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सन्देह हुआ कि स्वामी जी का एक भृत्य इस काम में लिप्त था। दयानन्द स्थानीय चौकीदार और कोतवाल को तिरस्कृत करने लगे। तिरस्कृत होते समय तो कोतवाल स्वामी जी के सामने हाथ जोड़ कर खड़ा होकर अपना अपराध स्वीकार कर लेता, परन्तु स्वामी जी के पीछे उनकी निन्दा किया करता : उसके पश्चात् आश्विन मास में स्वामी जी को एक दिन ठण्ड लग गई। उस दिन बृहस्पतिवार और एकादशी थी। ठण्ड के कारण शरीर के अस्वस्थ होने से चतुर्दशी की रात को दयानन्द केवल दुग्धपान करके सोये। रात्रि में दो तीन वार वमन हुई। परन्तु वह किसी से भी कुछ न कह कर स्वयं ही आचमन करके सोते रहे। प्रातःकाल उठ कर भ्रमण करना दयानन्द का दैनिक अभ्यास था। परन्तु उस दिन अपेक्षाकृत विलम्ब से उठे और उठ कर एक बार वमन हुई। इस प्रकार वमन पर वमन होने से दयानन्द के मन में सन्देह हुआ। उन्होंने इच्छा पूर्वक बहुत सा जलपान करके और एक बार वमन की। परन्तु उससे भी उनकी वमन निवृत्ति नहीं हुई। तब दुर्गन्ध दूर करने के लिये उन्होंने कमरे में अग्नि जलाने के लिये कहा, और उस अग्नि-कुण्ड में धूप आदि सुगन्धित द्रव्य डालने लगे। धूपादि की सुगन्ध से वहां का दुर्गन्ध तो दूर हो गया, परन्तु उनके उदर में शूल को पीड़ा आरम्भ हो गई। इसलिये डाक्टर सूरजमल को बुलाया गया। सूरजमल के पीडा की कथा को सविस्तार पूछने पर स्वामी जी की असह्य वेदना और पिपासा की कथा पुनः-पुनः कहने लगे। तब सूरजमल की समझ में ठीक व्यवस्था आ गई और प्रस्थान करने के समय स्वामी जी पर लक्ष्यपात करके यह कह कर चले गये कि आपके समान कोई महापुरुष मारवाड़ में कभी नहीं आये, इसलिये मारवाड़ के लोग आपके महात्म्य को कैसे समझ सकते हैं। सूरजमल के चले जाने पर उनकी शूलवेदना क्रमशः यहां तक बढ़ी कि निश्वास-प्रश्वास की क्रिया के साथ उनकी वेदना का वेग बढ़ने लगा। सुतरां निश्वास-प्रश्वास करना स्वामी जी के लिये विशेष क्लेशदायक हो गया। आश्चर्य है कि स्वामी जी ने इस असहनीय यन्त्रणा के बीच में ईश्वरचिन्तन और नामोच्चारण के भिन्न और कुछ नहीं किया। ३० वीं सितम्बर को महाराज प्रतापसिंह परिषद् वर्ग के साथ दयानन्द के पास आये। महाराज के साथ अलीमर्दान खां नामक एक डाक्टर भी आये। अलीमर्दान ने स्वामी जी की सारी अवस्था को जान कर उनके उदर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर ब्लिस्टर लगाया। उस दिन सन्ध्याकाल को महाराज तेजसिंह भी स्वामी जी के देखने के लिये आये, ब्लिस्टर के लगाने से दयानन्द को विशेष क्लेश होने लगा। दूसरी अक्तूबर को स्वामी जी ने अलीमर्दान को बुला कर कहा—"हम एक जुल्लाब लेना चाहते हैं, क्योंकि उससे उदर की यावतीय ग्लानि दूर हो जायगी।" अलीमर्दान उसे युक्तिसङ्गत विवेचना कर के घर चले गये, और स्वामी जी के पास एक विरेचक औषध भेजी। तीसरे अक्तूबर के प्रातःकाल डाक्टर के निर्देशानुकूल दयानन्द ने उस विरेचक औषध का सेवन किया। एक प्रहर तक औषधि का फल कुछ नहीं मालूम हुआ, परन्तु दश बजे के पीछे उसका प्रभाव होने लगा। दश बजे से रात्रि तक ३० से न्यून दस्त नहीं आये। दूसरे दिन प्रातःकाल डाक्टर के आने पर स्वामी जी ने धीरे-धीरे कहा—"आपने तो कहा था कि छः या सात से अधिक दस्त नहीं आयेंगे, परन्तु तीस से अधिक दस्त आये।" यह सुन कर डाक्टर चुप हो गये। पहिले दिन के समान उस दिन भी दस्त आने लगे। दो दिन बराबर दस्त आने से स्वामी जी नितान्त निर्बल हो गये; यहाँ तक कि उनकी दोनों आँखें कुछ बाहर को निकल आईं। छठी अक्तूबर को उन्होंने डाक्टर से कहा—"दस्त बन्द न होंगे, तो मैं नहीं बचूंगा।" इसके उत्तर में डाक्टर ने कहा—"दस्तों का अपने आप बन्द होना अच्छा है। चेष्टा करके बन्द करने से रोग वृद्धि की सम्भावना है।" इसके पश्चात् दयानन्द के उदर से कण्ठदेश तक सारे स्थल में, मुखविवर में, हाथ में पैरों के तलुओं में छोटी-छोटी फुंसियां दिखाई पड़ने लगीं। इसलिये वह बहुत क्लेश के साथ बातें करने लगे। इसके भिन्न उन्हें हुचकी आने लगीं। हुचकी निवारण के लिये स्वामी जी प्राणायाम करने लगे। इतने में अजमेर समाज से जेठमल नामक एक सभासद आकर उपस्थित हुए ‡ जेठमल स्वामी जी की

‡ इस स्थल में यह कहना उचित है कि स्वामी जी ने अपनी पीड़ा के सम्वाद से किसी समाज को सूचना नहीं दी। हमारा विश्वास है कि यदि सूचना देते, तो उनकी पीड़ा इतनी न बढ़ने पाती। १२ वीं अक्तूबर को स्थानीय समाज के किसी सभासद् ने अजमेर में स्वामी जी की पीड़ा की कथा पहिले पहल कही थी; परन्तु अजमेर के लोगों ने उस समय उसका विश्वास नहीं किया। परन्तु उसके पीछे उनका सन्देह बढ़ गया, उन्होंने स्वामी जी का सम्वाद लेने के लिये जेठमल को भेज दिया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अवस्था को देखकर आक्षेप प्रकट करके बोले—"महाराज ! यह क्या हुआ ? आपने हम लोगों के पास संवाद क्यों नहीं भेजा ?" इसके उत्तर में स्वामी जी ने कहा—"शरीर का तो यही धर्म्म है। शरीर की दशा लिख कर आप लोगों को वृथा कष्ट क्यों देता ?"

जोधपुर में रोग निवृत्ति की कोई सम्भावना न देखकर दयानन्द आबू जाने पर उद्यत हुए। आबू जाने के दो विशेष कारण थे। जैसा आबू स्वास्थ्य-कारिता के लिये प्रसिद्ध है वैसा ही साधु महात्माओं के निवास स्थल होने से पवित्र था। स्वामी जी ने आबू जाने की इच्छा की, परन्तु महाराज जसवन्त-सिंह ने उससे अनिच्छा प्रकट की। उन्होंने एक दिन अनुनय के साथ कह कर भेजा कि ऐसी अवस्था में स्वामी जी का जोधपुर छोड़ना अच्छा नहीं है, क्योंकि ऐसा होने से उन पर और जोधपुर पर चिरकाल तक कलंक रहेगा। परन्तु जसवन्तसिंह की इस बात से दयानन्द सन्तुष्ट नहीं हो सके, और उन्होंने १६ वीं अक्तूबर का दिन आबू जाने के लिए स्थिर कर दिया। सुतरां १५ वीं अक्तूबर के अपराह्न में महाराज जसवन्तसिंह अनुचर वर्ग के साथ स्वामी जी के पास आये, और जिससे कि वह ऐसी अवस्था में जोधपुर छोड़ कर न जावें, इस प्रयोजन से पुनर्वार अनुरोध करने लगे। परन्तु दयानन्द को इस विषय में कृतप्रतिज्ञ देख कर जसवन्तसिंह को और अनुरोध करने का साहस नहीं हुआ। तब अगत्या आबू जाने के लिये आयोजन होने लगा। महाराज ने २५००) रुपये और उत्तम शाल स्वामी जी को प्रदान किये।‡

इसके भिन्न राजकीय डेरे और शिविका लाई गई†। दयानन्द अपने उस रोगजीर्ण देह को लेकर शिविका में बैठ गये। जसवन्तसिंह स्वयं शिविका का द्वार पकड़ कर स्वामी जी के साथ नगर प्रान्त तक पैदल आये; राजकीय

‡ स्वामी जी ने इन २५००) रुपये और अन्यान्य सामग्री को जोधपुर से चलने से पहले ही परोपकारिणी सभा के कोष में भेज दिया था।

† उस समय कार्तिक मास था, परन्तु तौ भी पीड़ा के कारण स्वामी जी को गर्मी लगती थी। इसलिये महाराज स्वयं ग्रीष्मकाल में जिस तम्बू का व्यवहार करते थे वह खस का तम्बू ही स्वामी जी को आबू जाने के समय प्रदान कर दिया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अनुचर वर्ग और अन्यान्य लोग महाराज का अनुगमन करने लगे। विदा समय महाराज ने विशेष आक्षेप प्रकट करके कहा—"आपने श्रीमान् महाराणा को शिक्षा दी है। मुझे भी महाराणा के समान ही समझें। आबू पर आरोग्य होते ही मुझे सम्वाद दें, जिससे कि मैं स्वयं जाकर आपको पुनर्वार जोधपुर ले आऊँ।"

आबू के मार्ग में दयानन्द को कई बार हुचकी और वमन हुई। इस कारण वह अति कष्ट से आबू पर चढ़े। आबू पर पहुंच कर डाक्टर लक्ष्मणदास की चिकित्सा में रहे। लक्ष्मणदास की चिकित्सा से स्वामी जी के दस्त और हुचकी बन्द हो गई, परन्तु वह वहाँ और अधिक दिन न रह सके, क्योंकि वह एक अंग्रेज डाक्टर के परामर्श के अनुसार अजमेर आने पर बाध्य हो गये। अजमेर पहुँचते ही उनका रोग समाचार चारों दिशाओं की आर्यसमाजों में फैल गया। तब स्वामी जी की चिकित्सा सम्बन्ध में आर्यसमाज के प्रधान प्रधान सदस्य और उनके सुहृदों की सम्मति के अनुसार कार्य होने लगा। परन्तु अजमेर में उनका रोग क्रमशः सांघातिक हो गया। २८ अक्तूबर तक दयानन्द की चिकित्सा डाक्टर लक्ष्मणदास के ही अधीन रही। परन्तु २९ अक्तूबर की रात में उनका रोग अप्रत्याशित रूप से वर्द्धित हो गया, और उसके रोकने के लिए सबने उत्कण्ठित होकर प्रातःकाल स्थानीय सिविलसर्जन को बुलाया। डाक्टर न्यूमैन आये, परन्तु उन्होंने विशेष कुछ नहीं किया। वह १६ रुपये की दर्शनी हुण्डी भुना कर केवल एक व्यवस्था पत्र लिख कर चले गये। सदस्य वर्ग न्यूमैन की चिकित्सा से सन्तुष्ट नहीं हो सके, इसलिए आगरे को तार द्वारा सम्वाद भेजा गया। परन्तु डाक्टर मुकुन्दलाल के पहुंचने से पहले ही स्वामी जी का देहान्त हो गया।‡

देहान्त होने से पहले दयानन्द को वाक्स्फूर्ति हो गई थी। यह कहना बाहुल्य है कि मुखविवर में बहुत सी छोटी छोटी फुंसियों के हो जाने से वह कई दिन से रुद्धवाक् हो गये थे। इसलिए देहान्त होने से कुछ देर पहले

‡ स्वामी जी का देहान्त सन् १८८३ ई० के अक्तूबर मास की ३० वीं तारीख तदनुसार सम्वत् १९४० विक्रमी के कार्तिक मास की अमावस्या को हुआ था—(अनुवादक)।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वाक्स्फूर्ति हो जाने से अनेक लोग स्वामी जी की अवस्था के विषय में आशान्वित हो गये थे, परन्तु अनेक लोग फिर निराशा में मुह्यमान हो गये। अस्तु। स्वामी जी ने आत्मानन्द सरस्वती प्रभृति कतिपय सुहृद्जनों को अपने पास बुलाया। वे शोकार्त्त मूर्ति से उनके समीप गये। समीप जाने पर दयानन्द ने कातर कण्ठ से पूछा—"तुम्हारी क्या अभिलाषा है?" इसे सुनकर आत्मानन्द प्रभृति की आँखों से अश्रुधारा चलने लगी। उन्होंने स्वामी जी की इस कथा के उत्तर में वाष्पावरुद्ध कण्ठ से कहा—"हमारी एकमात्र अभिलाषा यही है कि आप आरोग्य हो जांय।" तब दयानन्द प्रीति के उच्छ्वसित आवेग को न छिपा सके और उनके शिर पर हाथ रखकर रुद्धप्राय स्वर से धीरे से कहा—"इस शरीर का और क्या भला होगा? जो भला है वह चिरकाल ही भला रहेगा। शरीर का यही धर्म्म है; इसलिये तुम इसके निमित्त शोक मत करो।" यह कह कर दयानन्द ने उनसे जाने के लिए और उस कमरे के सारे द्वार और खिड़की खोल देने के लिये कहा। इतने में पण्डित मोहनलाल विष्णुलाल उदयपुर से आकर पहुंचे। वह स्वामी जी की अवस्था जानने के लिये महाराणा की आज्ञा से आये थे। मोहनलाल के आने पर स्वामी जी ने पूछा कि क्या वार और क्या तिथि है। इसके उत्तर में मोहनलाल ने कहा—"दिन मंगलवार और तिथि अमावस्या है।" यह सुनकर स्वामी जी उस कमरे की छत और चारों ओर की भित्तियों को देखने लगे।‡ तदनन्तर वह ध्यानावस्थित हो गये और गायत्री मन्त्र का जप करते-करते मर्त्यलोक से सब सम्बन्ध छोड़कर अमरधाम की ओर यात्रा कर गये।

---

‡ मृत्यु के समय स्वामी जी की और भी दो एक विस्मयकर घटनाओं की कथा सुनी जाती है। जिस दिन देहान्त हुआ, उस दिन मध्याह्न में स्वामी जी ने कहा कि "पण्डित सुन्दरलाल को अभी हमारे पास लाओ।" सुन्दरलाल उस समय अलीगढ़ रहते थे, इसलिये अनुचरों ने कहा कि "सुन्दरलाल को अलीगढ़ से इस समय लाना किस प्रकार सम्भव हो सकता है।" इसके उत्तर में दयानन्द ने कहा—"सुन्दरलाल अजमेर में ही है।" किम्बहुना, देहान्त से कुछ देर पीछे ही सुन्दरलाल आकर उपस्थित हो गये। उनको देखकर सब लोग विस्मित हो गये और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उसके पश्चात् अत्येष्टि क्रिया का उद्योग होने लगा। उनके देह को स्नान कराकर उस पर चन्दन केशर लगाया गया। इसके भिन्न पुष्पमाला पहना कर स्वामी जी के देह को अतिशय शोभायमान किया गया। इस प्रकार सुसज्जित और सुगन्धित कराकर उस देह को श्मशानभूमि में ले जाने के लिये उठाया गया। अजमेर के सैकड़ों लोग उस शव के पीछे चले, और कतिपय महात्मा जन उसके अग्रवर्ती होकर वेदमन्त्रों का उच्चारण करते हुए चलने लगे कुछ देर पीछे ले जाने वालों ने आकर निर्दिष्ट वेदी पर‡ शव को स्थापित कर दिया। यह वेदी नगर के दक्षिण भाग में तारागढ़ के नीचे निर्मित हुई थी। शव के स्थापित होने पर पण्डित भागराम नामक एक

जिज्ञासा करने पर सुन्दरलाल ने कहा—"मैं आज मध्याह्नकाल में ही अजमेर पहुंचा हूँ।" उसके पश्चात् मृत्यु के कुछ घंटे पहले स्वामी जी ने अपने पहरने के वस्त्रादि उतार कर शिष्यों को दिये थे। इससे अनेक लोग अनुमान करते हैं कि वह अपनी मृत्यु के सम्बन्ध में पहले ही निस्सन्देह हो गये थे। और भी एक घटना है कि मृत्यु से कुछ पहले स्वामी जी ने अपना केशमुण्डन कराया था। और केश मुण्डन के लिए नाई को पांच रुपये देने के लिए कहा था। परन्तु जिनके हाथ में रुपये देने का काम था उन्होंने पाँच रुपये न देकर एक ही रुपया दिया। स्वामी जी ने पीछे किसी अज्ञात सूत्र से यह जानकर फिर पाँच रुपये देने का आदेश किया। यह सारी घटनायें साधारण बुद्धि से बहुत परे हैं—इस विषय में सन्देह नहीं है।

---

‡स्वामी जी की आज्ञानुसार वह वेदी वेदविहित प्रणाली के अनुसार निर्मित हुई थी। दयानन्द इतने वेदपरायण थे कि उन्होंने मुमूर्षु शय्या पर लेटे-लेटे भी शिष्य वर्ग से वारंवार अनुरोध किया था कि मृत्यु के पश्चात् उनके देह को समाधिस्थ न करके अग्नि में ही दाह करना; क्योंकि उनका दृढ़ विश्वास था कि जब यजुर्वेद में वायुमनिलमथेदं भस्मान्त शरीरं' इत्यादि वाक्य हैं तब मनुष्य के शरीर का मृत्यु के पश्चात् भस्मीभूत होना ही विधेय है। किम्बहुना, शिष्यों ने उनके विश्वास के अनुकूल ही कार्य्य किया। इसलिये स्वामी जी के शव को समाधिस्थ करने के अभिप्राय से जो संन्यासी आये थे वे सब व्यर्थमनोरथ होकर चले गये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शिक्षित और सहृदय व्यक्ति ने स्वामी जी के सम्पर्क में कुछ कथायें कहीं। उन्हें सुन कर आये हुए व्यक्तिमात्र बिना अश्रुपात किये न रह सके। उसके पश्चात् चार मन घी, ५ सेर कपूर, आध सेर केशर, दो तोला कस्तूरी, दो मन पांच सेर चन्दन, एक मन फलाश और कई एक मन आम की लकड़ी के संयाग से वेदोक्त प्रणाली के अनुसार स्वामी दयानन्द के "भस्मान्त" देह को भस्मस्तूप में परिणत कर दिया। वैदिक धर्म्म का प्रोज्ज्वल दीपक वर्षों तक निरन्तर प्रकाश देकर सन्मार्ग दिखला कर बुझ गया।

सम्पूर्ण

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महात्मा आनन्द स्वामी जी की नई पुस्तक

सुखी गृहस्थ

मूल्य : एक रुपया

पुस्तक के विषय में नवभारत टाइम्स लिखता है:—

"महात्मा आनन्द स्वामी ने सामान्य परिवारों के सम्बन्ध में यह महत्वपूर्ण पुस्तक अपने अनुभव के आधार पर लिखी है। किस तरह से परिवार के व्यक्ति आपस में अपने-अपने कार्य करके परिवार को सुख और शान्ति का केन्द्र बना सकते हैं, विवाह के अधिकारी कौन हैं, गृहस्थ में जो कलह है उसका क्या कारण है ? स्वामी जी का कहना है कि सारे परिवारों में दुःख स्वार्थ उत्पन्न होने पर पैदा होता है। यदि हम स्वार्थ त्याग दें तो जीवन सुखी बना सकते हैं। स्वामी जी ने मितव्ययता पर भी विशेष बल दिया है। उनका विश्वास है कि आर्थिक संकट भी कलह और दुःख का कारण है। पुस्तक जनसाधारण के उपयोग और महत्व की है।"

महात्मा आनन्द स्वामी कृत अन्य पुस्तकें

तत्वज्ञान	३-००	भक्त और भगवान	१-००
प्रभुदर्शन	२-५०	महामन्त्र	१-००
प्रभुभक्ति	१-५०	सुखी गृहस्थ	१-००
घोर घने जङ्गल में	२-००	आनन्द गायत्री कथा	०-७५
उपनिषदों का संदेश	१-२५	एक ही रास्ता	०-८०
मानव जीवन गाथा	१-००		
शङ्कर और दयानन्द	०-५०	सत्यनारायण कथा	०-६२

गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८ नई सड़क, दिल्ली

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आप अपनी औषधियाँ

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी से ही क्यों खरीदें ?

क्योंकि—

● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी विशुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण शास्त्रोक्त ढंग से तथा सर्वश्रेष्ठ उपादानों द्वारा करती है।

●● गुरुकुल काँगड़ी फार्मेसी की आय किसी व्यक्ति की जेब में नहीं जाती, वरन् आपके बच्चे की शिक्षा आदि पर व्यय होती है।

●●● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी द्वारा निर्मित औषधि क्रय करने पर आप जहाँ निश्चय ही श्रेष्ठ औषधि प्राप्त करते हैं। साथ ही आप की जेब से निकला एक-एक पैसा राष्ट्र के निर्माण तथा जनता की सेवा में खर्च होता है।

इस लिए आप अपनी आयुर्वेदिक औषधियां तथा तेल आदि किसी भी खरीद के लिए गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरिद्वार) का नाम अवश्य ही याद रखें।

आपका सन्तोष हमारा उद्देश्य है।

नोट—१. किसी भी रोगी के सम्बन्ध म पत्र द्वारा या मिलकर सम्मति प्राप्त करें।

२. गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की औषधियां बेचने के लिये नियम मुफ्त मंगाएं।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी P. O. गुरुकुल कांगड़ी

(सहारनपुर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देश की सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय औषधि निर्मात्री संस्था

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरिद्वार)

सगर्व प्रस्तुत करती है

बल-शक्ति तथा स्फूर्ति के लिए

अमृत-रसायन

लौह-जीवनीय तत्वों तथा अनेक लाभप्रद
जड़ी-बूटियों से निर्मित उत्तम स्वादिष्ट
अग्निवर्धक तथा रुचिकर पौष्टिक रसायन

समस्त परिवार के लिए—
सब ऋतुओं में समान गुणकारी।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरिद्वार)

शाखाएं :—चावड़ी बाजार देहली-६
गोविन्द मित्रा रोड पटना-४ [बिहार]
नेहरू रोड बेलदारपुरा [भोपाल]

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक विचारधारा प्रसारक

हिन्दी-पुस्तकें

१. सोम सरावर : ३.०० सजिल्द ४.००
स्व० पं० चमूपति एम. ए. की भावना पूर्ण
लेखनी से लिखित, सामवेद के पावमान पर्व की सुललित व्याख्या :

२. दयानन्द चरित : स्व० पं० देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय लिखित १.५०
महर्षि दयानन्द का प्रामाणिक जीवन चरित्र :

३. आर्य समाज का सैद्धान्तिक परिचय : ०.४०
स्व० शान्त स्वामी अनुभवानन्द जी महाराज लिखित :

४. वैदिक सिद्धान्त : लेखक स्व० पं० चमूपति एम. ए. १.००

५. मुक्ति और उसके साधन : प्रसिद्ध आर्य विद्वान् १.००
पं० मदन मोहन विद्यासागर लिखित, आध्यात्मिक ग्रंथ :

६. जीवन ज्योति : प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पं० चमूपति एम. ए. ४.००
का अमर ग्रंथ । पृष्ठ ३०० । सुनहरी जिल्द :

७. वैदिक स्वाध्याय : (सजिल्द) वेद मन्त्रों की व्याख्या : ३.००

८. वैदिक-मत खंडन : ०.७५

९. आर्य समाज की विचारधारा : ०.१०
पं० क्षितीश कुमार वेदालंकार लिखित :

१०. आर्य समाज क्या मानता है ?
डा० कृष्णवल्लभ पालीवाल एम. एस. सी. पी. एच. डी. ०.०५
रीडर राजस्थान विश्व विद्यालय लिखित :

११. विश्व को आर्य समाज का सन्देश : ०.२५
भारतेन्द्रनाथ साहित्यालंकार लिखित,

१२. गो करुणानिधि : ०.१०

१३. महान् दयानन्द : पं० शिवदयालु लिखित : ०.७५

१४. कर्म सिद्धान्त : लेखक स्वामी अखिलानन्द सरस्वती : ०.७५

व्यवस्थापक "आर्योदय" १५९५ हरध्यानसिंह रोड
नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

DELITE

सर्वश्रेष्ठ क्वालिटी का
स्टील फ़र्नीचर

आपके घर व कार्यालय की शोभा बढ़ाता है

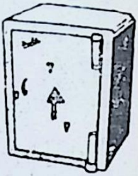

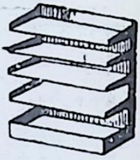

उत्तम क्वालिटी के आयरन सेफ़,
स्टील की हर साइज़ की अलमारियां,
कैश बाक्स, सोफ़ा कम बैड व
बढ़िया सोफ़ा सैट, कुर्सी, मेज़, आदि

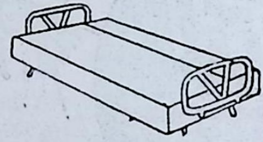

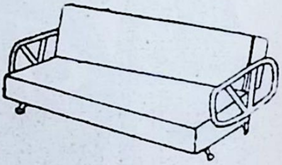

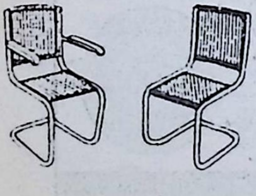

प्रत्येक प्रकार के स्टील व
लकड़ी के फ़र्नीचर के निर्माता

डिलाइट सेफ़ वर्क्स
कुतुब रोड, दिल्ली - ६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपने नगर में गुरुकुल कांगड़ी
फार्मेसी की एजेंसी लें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

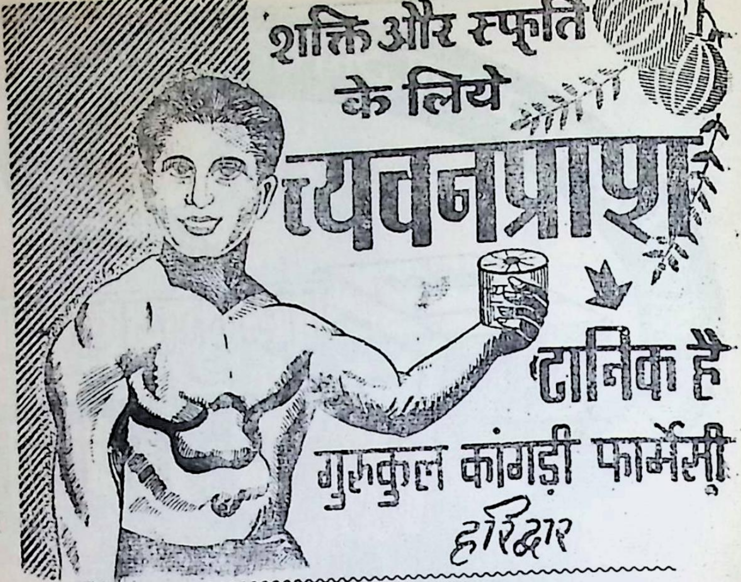

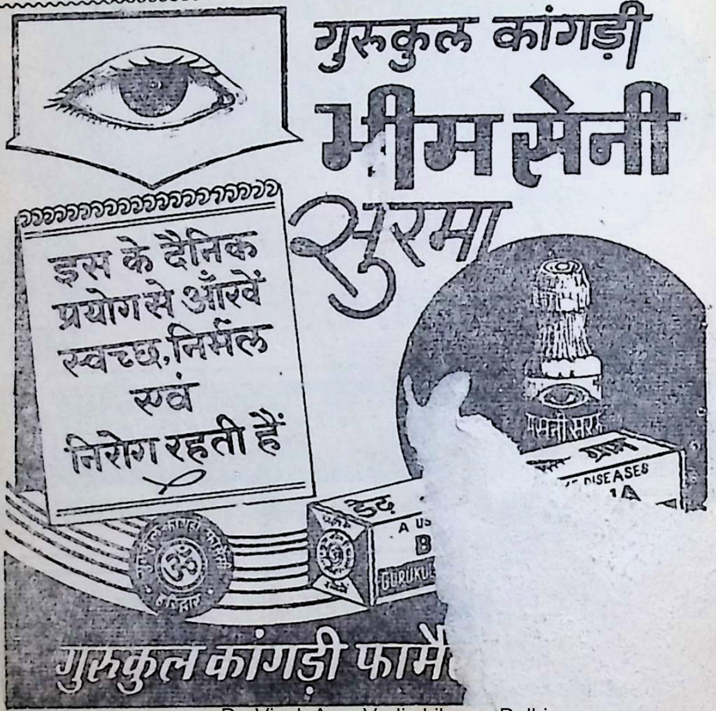

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आयुर्वेदिक औषधियों

के लिए

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी

(पत्रालय-गुरुकुल कांगड़ी सहारनपुर)

का नाम

सदा स्मरण रखें ।

१—अपने [illegible] एजेन्सी लें ।

[illegible] होने पर निःशुल्क सम्मति के लिए [illegible]जें ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Regd. No. D-1:

Licence No. U-125
To post without prepayment
"आर्योदय" हिन्दी साप्ताहिक, १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली

महर्षि दयानन्द सरस्वती की स्मृति में : डाक टिकट

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi